महाराणायशप्रकाश ।

' मलसीसर ' ठाकुर भूरसिंह शेखावत संगृहीत ।

राज्य जयपुर.

इसको

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदासने

अपने " लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापेखानेमें

छापकर प्रसिद्ध किया ।

विक्रम संवत् १९८२, सन् १९२५ ई.

कल्याण-मुंबई.

श्रीमान् यावदार्यकुलकमलदिवाकर महाराणा
श्री १०८ श्री प्रतापसिंहजी।

यह उनही अद्वितीय वीरशिरोमणिका चित्र है जिनको सद्गुणोंके कारण कलियुगके रामचन्द्र कहकर रट सकते हैं।

ओ ३ म्.

भूमिका ।

यह जगद्विख्यात और सुप्रसिद्ध है कि इस आर्यभूमिके निवासियोंका व्यवहार वर्णाश्रमधर्मकी प्रणालीके अनुसार रहाहै । महाराज मनु और भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रने जो वर्णाश्रमधर्मकी आज्ञा की और उसका जबतक पालन होता रहा भारतवासियोंने परम गौरव और उत्कर्ष पाया । परन्तु महाभारतके पश्चात् शृङ्खलाबद्ध ऐतिहासिक ग्रन्थोंके न मिलनेसे यह तो नहीं कहाजासकता कि यहांका राज्यशासन किस क्रमसे रहा, किन्तु जैन और बौद्ध धर्मका प्रचार होनेसे वर्णाश्रमधर्मकी बहुत क्षति हुई जिस पर श्रीशङ्कराचार्य भगवान्ने (जिनके निरुपम विज्ञानका प्रभाव अद्यावधि जागरूक है) उक्त धर्मका जीर्णोद्धार किया । उसके अनन्तर दुर्भाग्यवश शीघ्रही यवनराज्यका प्रादुर्भाव हुआ, जिसके हृदय विदारक अनाचारोंका स्मरण आनेसे सहसा रोमाञ्च होआते हैं। प्रायः इसही कालमें वर्णाश्रमधर्मकी व्यवस्था अत्यन्त शोचनीय दशाको प्राप्त होगई । परन्तु प्रसिद्ध है कि " निर्बीज भूमि कबहू न होय " इसके अनुसार सीसोदवंशोद्भव श्रीमान् महाराणा "स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः" (अपने धर्ममें रहकर प्राण त्यागना भी अच्छा होता है परन्तु अन्य धर्मका स्वीकार करना बडा भयङ्कर है) इस नियमपर कटिबद्ध हुए जिससे आर्यमात्रको और विशेष कर क्षत्रियोंको बडा अभिमान है कि महाराणाओंने आर्योंके वर्णाश्रमधर्मकी रक्षा करके सच्चे क्षात्रधर्मका गौरव रक्खा ।

धन्य है सीसोदियोंके वंशको जिसमें बडे २ धर्माभिमानी वीरपुङ्गवोंका जन्म हुआहै कि, जिनके वीरचरित यावच्चन्द्र दिवाकर संसारमें स्थायी होगये हैं। अत एव मैंने बहुत कालसे महाराणाओंके सम्बन्धमें जो फुटकर चमत्कारी काव्य मिले उनका धीरे २ संग्रह किया और इनकी अधिक प्रतियां होजाय तो बहुत अच्छा हो यह विचारकर "महाराणायशप्रकाश" के नामसे पुस्तकाकार छपवा कर विद्वानोंकी सेवामें उपस्थित कियाहै। यद्यपि मेदपाटेश्वरोंका यश समुद्ररूप है और मेरा उसके संग्रह करनेमें प्रवृत्त होना समुद्रको अञ्जलिद्वारा ग्रहण करनेकी भांति परिहासास्पद साहस है क्योंकि महाराणाओंके यशका भलेप्रकार वर्णन करना तो सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक मान्यवर कर्नेल जेम्स टॉड साहब तथा राजपूतानाके भूषण कविवर मिश्रण ठाकुर सूर्यमल्लजी जैसेही विद्वानोंकी लेखनीका सामर्थ्य है कि जिन्होंने टाडराजस्थान और वंशभास्कर नामके बृहत् इतिहास ग्रन्थ निर्माण कर देशभरका उपकार किया है। परन्तु मेरा अभिप्राय इस संग्रहसे यह है कि जो चमत्कारी काव्य अबतक उपलब्ध हुए हैं उनका किसी बडे ऐतिहासिक ग्रन्थमें संयुक्त न होनेके कारण समयके फेरफारसे लुप्त होनेका संदेह है। आशाहै कि मेरा यह व्यवसाय विद्वानोंको अरुचिकर न होगा तो मैं अपने परिश्रमको सफल समझूंगा।

आगे मैं इस अवसर पर प्रथम ही प्रथम न्यायकारी और दयालु ब्रिटिश गवर्नमेंटका अन्तःकरणसे धन्यवाद करताहूं

कि जिसके शान्तिमय और न्यायपरायण राज्यशासनमें भारतवासियोंको असीम सुख प्राप्त होरहा है जो जगद्विख्यात है। यवनराज्यके पश्चात् जो उपद्रव मरहठों और मीरखां आदि उपद्रवीलोगोंसे भारतवर्ष व राजपूतानेमें हुआ कि जिसके स्मरणमात्रसे भी अत्यन्त संताप होता है। परन्तु हमारे देशके अहोभाग्य थे जो उन देशनाशकोंके अन्यायसे बचानेके निमित्त परमेश्वरने यहां दयालु गवर्नमेंट ब्रिटानियाका राज्य-शासन जमाया जिसका विशेष वृत्तान्त लिखा जाय तो एक पृथक् पुस्तक बन सकती है। राजपूतानेका कौन मनुष्य होगा जो परमदयालु गवर्नमेंट ब्रिटानियाके उपकारोंका स्मरण करता हुआ अपने अंतःकरणसे परमेश्वरसे यह प्रार्थना न करे कि गवर्नमेंट ब्रिटानियाका धर्मराज्य सदैव वृद्धिको प्राप्त हो। गवर्नमेंट ब्रिटानियाने हमारी प्राचीन और पवित्र राज-धानी मेवाडको मरहठोंके उपद्रवसे बचाकर जो अप्रतिम सहानुभूति की उसका वृत्तान्त बहुतही कृतज्ञताके साथ वर्णन करने योग्यहै जैसा कि टाडराजस्थान आदिमें उल्लेख किया गया है। पश्चात् बहुत प्रसन्नता और कृतज्ञताके साथ कर्नल जेम्स टाड साहबका धन्यवाद करताहूं कि जिन्होंने 'टाडरा जस्थान' नामका वृहत् इतिहास लिखकर क्षत्रियमात्रके साथ अनुपम सहानुभूति की जिससे राजपूतानेका परम उपकार हुआहै। यदि उक्त महानुभावका अतुल परिश्रम न होता तो कब सम्भव था कि हम लोग अपने पूर्वजोंके इतिहाससे अ-भिज्ञ होते। यह टाड महोदयके ही प्रशंसनीय उद्योगका फल है कि मेवाडका इतिहास सर्वसाधारणको ज्ञात हुआ और सब लोग हाराणाओंके गौरवसे परिचित हुए। ऐसे सुयोग्य और महान् पुरुषका परिश्रम संसारमें सर्वदा प्रशंसनीय रहेगा।

अब मैं उन महोदयोंका धन्यवाद करताहूँ कि जिनसे मुझे इस महाराणा यशप्रकाशके सम्पादनमें सहायता मिली—

(१) बारहठ रामनाथजी रत्नू मेम्बर कौनसिल रियासत किशनगढ कि जो राजपूतानेके इतिहास रचयिता प्रख्यात हैं। कालान्तरमें इन्हींकी अमृतवाणीसे टाड साहबका बृहत् इतिहास वा अन्य अन्य मेवाडके इतिहासकी कथाएँ कि जो इन्हें उपस्थित हैं सुन २ कर मेरे हृदयमें यह अङ्कुर पैदा हुआ था कि सूर्यवंशकी प्रतिष्ठा रखनेवाले महाराणाओंका काव्यरूप सुयश संग्रह करना चाहिये।

(२) श्रीमान् स्वर्गवासी स्वामी गणेशपुरीजी महाराजकी जो राजपूतानेमें साहित्यशास्त्रके सुप्रसिद्ध विद्वान् थे और राजधानी मेवाडमें बहुत कालतक रहनेका संयोग हुआथा उनके मुखारविन्दसे भी अनेक कथाएँ सुनी और उनके बनाये हुये काव्यभी मिले जो महाराणायशप्रकाशमें यथास्थान लिखे गये हैं।

(३) पंडित गौरीशंकरजी हीराचंद ओझा कि जो इस समय इतिहास वेत्ताओंमें अग्रगण्य हैं। इन्होंने कृपा करके समय समय पर बहुत सहायता दीहै।

(४) कविराजा भैरूंदानजी बीकानेर जिनसे कि महाराज पृथ्वीराजजी (जो बीकानेर महाराज रायसिंहजीके कनिष्ठ भ्राता हुएहैं और बडे विद्वान् व अद्वितीय सहानुभूति करने वाले तथा प्रसिद्ध ईश्वरभक्त थे जिनको सद्गुणोंके कारण क्षत्रियोंके शिरोमणि कहने चाहिये) का रचाहुआ एक गीत और कुछ दोहे मिले कि जो अद्वितीय हैं।

(५) कविराजा मुरारीदानजी आशिया महामहोपाध्याय जोधपुर कि जो इस समय राजपूतानेमें वास्तवमें कविराजा पद- को सार्थक करनेवाले हैं, उनसे भी कुछ काव्य मिले और उनके अल्प कालके उपदेशसे मुझे इस संग्रहके लिये बहुत ज्ञान प्राप्त हुआ ।

(६) बारहठ कृष्णसिंहजी सोदा एक बहुत प्रशंसनीय विद्वान् और मुझपर बडी कृपा रखनेवाले थे । उनसे प्रायः प्राचीन गीत मिले और उन्होंने स्वयं परिश्रम करके इस पुस्त- कके सम्पादनमें सहायता दी जिसका मैं बहुत ही कृतज्ञ हूं दैववश वे इस पुस्तकको मुद्रित नहीं देखसके ।

(७) महियारिया मोडसिंहजी उदयपुर निवासी इन्होंने भी बहुत उत्तम २ काव्य देकर बहुत रुचिसे मुझे कृतार्थ किया ।

(८) उज्वल फतहकरणजी जो चारण सरदारोंमें उत्तम विद्वान् हैं अपनी रची काव्य वा अन्य प्रकारकी कथाओंसे स्नेहपूर्वक सहानुभूति की ।

(९) कवि ऊमरदानजी 'विरुद छिहत्तरी' प्रथम उन्हींके परिश्रमसे प्राप्त हुई कि जिसको सिंधी बच्छराजजी पहले छपवा भी चुके हैं । उस पुस्तकमें भावार्थका उल्लेख नहीं किया गया था इस लिये भावार्थ सहित महाराणायशप्रकाशमें पुनः छपवाना उचित समझा गया ।

(१०) मुक्तीदानजी देथा व हिंगलाजदानजी कवियाने भी स्वयं रचित काव्य देनेसे मेरे अभिप्रायको संतुष्ट किया ।

(११) मुन्शी समर्थदानजी मालिक राजस्थान यन्त्रा- लय अजमेर कि जिनसे इस ग्रन्थके संग्रहमें सहायता मिली ।

मैं उन्हींके इस ग्रन्थके छपानेका अभिलाषी था और वे रुचिपूर्वक इस ग्रन्थकी छपाईके सुधार करनेमें सन्नद्ध थे परन्तु संयोग वश उनके शरीरमें अस्वस्थता होनेपर " श्रीवें-कटेश्वर" प्रेस बम्बईमें इस ग्रन्थके छपानेका प्रयत्न किया कि जहां सेठ खेमराजजीने बहुत प्रीतिपूर्वक पुस्तकको पूर्णताको पहुंचाया ।

(१२) बारहठ बालावक्सजी पालावत दणूत्या ग्राम-निवासीने इस पुस्तकको शुद्ध करने वा काव्योंका भावार्थ लिखानेमें बहुतही दत्तचित्त होकर परिश्रम किया कि जिससे सर्वसाधारणके समझनेमें बडा उपयोग होगा इनके परिश्रमका मैं बहुत आभारी हूं ।

(१३) साहित्यशास्त्री पण्डित माधवप्रसादजी गौड जैपुरनिवासी जिन्होंने बारहठजीकी सम्मतिसे रुचिपूर्वक इस कार्यमें परिश्रम करके इसको सफलता पर पहुंचाया ।

जो जो काव्य रुचिकर हुए मैंने संग्रह किये हैं और जहां तक होसका सर्वसाधारणके समझनेके लिये उनका अर्थ भी लिखा गयाहै परन्तु मेरा यह विचार कदापि नहीं है कि इसमें कोई त्रुटि न हो प्रत्युत मैं सर्व विद्वज्जनोंसे प्रार्थना करताहूं कि जहां कहीं किसी प्रकारकी अशुद्धि वा भूल हो उसे सुधारेंगे तो मैं अत्यन्त कृतज्ञ होऊंगा ।

सब सज्जनोंका कृपाभिलाषी-
भूरसिंह शेखावत,
मलसीसर राज्य-जयपुर.

विशेष द्रष्टव्य।

(१) इस पुस्तकमें. प्रथम महाराणाओंका वंशक्रमानुसार संक्षिप्त वृत्तान्त लिखा गया है और आगे जिन २ महाराणाओंके काव्य मिले उन काव्योंकी स्थिति है। एवं जिन काव्योंके सम्बन्धमें विशेष लिखना आवश्यक समझा गया उनके नीचे आवश्यक विषय नोट किये गये हैं। नोटोंके नीचे सर्वसाधारणके सुबीतेके लिये काव्योंका भावार्थ भी संयुक्त किया है।

(२) 'डिंगल' भाषामें ऋ, ॠ, ऌ, ए, ऐ, औ ये स्वर नहीं होते। और (श) तालव्य तथा (ष) मूर्धन्यके स्थानमें दन्त्य सकार ही लिखा जाता है। इसी प्रकार 'ख' के स्थानमें 'ष' और अनुस्वारका अनुस्वार ही रहता है परसवर्ण वा अनुनासिक (अर्धानुस्वार) नहीं होता।

इस पुस्तकमें प्रायः डिंगल भाषाकी कविता आई है इस लिये डिंगल कविताओंका लेख उक्त नियमानुसार ही किया गया है परन्तु छन्दोभंगके भयसे कहीं २ लघु अक्षरपरके अनुस्वारको ँ अर्धानुस्वार बना दिया है।

यह फेरफार डिंगलके नियमोंके अनुरोधसे करना पडा है तो पाठकगण उन २ स्थलोंपर अशुद्ध न समझें।

अनुक्रमणिका।

इति शम्।

इति

अनुक्रमणिका

समाप्ता।

शुद्धिपत्र ।

पृष्ठसं.	पंक्तिसंख्या.	अशुद्ध.	शुद्ध.
३	१९	प्राप्त है	प्राप्त हुई है ।
४	१७	क्षत्रियां	षत्रियां ।
९	१	गाजें	गांजे
,,	११	भाभी	भामी ।
१२	१२	झूडी	झडी ।
१३	३	कीधों	कीधो
१४	१७	धायन	घायन
१७	७	हमीरसिंहजी	श्रीहमीरसिंहजी ।
२०	११	सुरंपतरी	सुरपतरी ।
२१	१६	याद	यदि ।
२४	२	वयणा	वयणां
,,	१८	खेताजी	श्रीखेताजी ।
२८	९	वोहलों	वोहलों ।
३३	२१	छत्रपत्र	छत्रपत
३९	१३	चुंक	चूक
४०	६	वलवंत	वलवँत ।
,,	१४	वडे गढ २	वडे २ गढ ।
,,	५	हूवे[१०]	व[१०]हूं
४६	६	ढंढ	ढँढ ।
४७	१८	कूभाहैरै	कूंभाहैरै ।
४९	१४	गंह	गह ।

पृष्ठसं	पंक्तिसंख्या.	अशुद्ध.	शुद्ध.
५९	१७	ह्मी	ह्मीर ।
६०	९	कव्या	कव्यां ।
६३	२	नें	न ।
६६	७	मजात	मसीत ।
६८	१	दवा	देवां ।
७४	२१	उदयसिंहजी	श्रीउदयसिंहजी ।
७८	९	उधोर	ऊधोर ।
८२	२०	जाछे	आछे ।
८४	४	पाप	पाय ।
,,	५	सुदतार	अदतार ।
८५	१३	तणों	तणैं ।
९२	१७	बाजंती	बाँजंती ।
१०६	७	दुसरा	दुरसा ।
,,	१२	राणा उत	राणाउत ।
१०८	१९	वाला	वाले ।
१०९	४	वंशवाला	वंशवाले ।
१११	१३	करै	करैं ।
११५	१८	सुःख और दुख	सुख और दुःख ।
,,	२०	जासीं सूरमा	जासी सूरमां ।
११६	१०	पांतरियो	पांतरिय ।
,,	१९	लिये हुए	किये हुए ।
,,	२२	साथें	साथे ।
११८	४	क्रितार	चितार
११९	१	विरुद्ध छित्तहरी	विरुदछिहत्तरी ।

पृष्ठसं	पङ्क्तिसंख्या.	अशुद्ध	शुद्ध.
११९	७	नमो	नमे।
,,	१३	काना	कानां।
,,	१८	सहै	रहे।
१२२	१०	जो वादण	ज्यूं वादल।
१२३	७	मजीत	मसीत।
१२५	६	जो राणा	राणा ! जो आप।
,,	११	निरझियो	निरझियो।
१२७	१८	टोटी	टोपी।
१२८	१४	पेल	पेले।
१३१	२	वरसे	वेरसे।
१३३	१२	मचडलगगनतैं	मण्डलगानतैं
१३४	४	इकल-जिह	इकल-जिहँ।
,,	१५	गढालोंको	गजढालोंक
१३५	१८	ते रे-ब्रह्लण्डको	तेरे-ब्रह्मण्डकों।
१४३	१८	पूजकर	पूजागर।
१४९	५	कूरमा	कूरमां।
१५४	२	रोसिया	रोसिया।
१५७	२	घण	वणा।
,,	४	घणी	धणी।
,,	१४	भाहाडके	आहाडोंके।
१५९	१८	होलोल	हालोंच।
,,	२२	वारुं	वारू।
१६०	२	सारु	सारू।

पृष्ठ.	पङ्क्तिसंख्या.	अशुद्ध.	शुद्ध.
१६३	६	षेगां	षगां।
"	७	वेलै	वैलै।
"	११	राणै पर हस	राणै पर हँस।
१६४	६	वरवरत्ताँहि	वरघरातहि।
१६५	८	आंवणै	आंगणै।
१७२	१६	संहारिया।	सँहारिया।
"	१७	महाराणा राज- सिंह वनाव	महाराणासाहव राजसिंह वनाम।
"	१०	वोद	वाद।
१७३	८	दामा	दाना।
"	१५	वे इत्तफाक	व इत्तफाक।
१७४	८	शुकरिमें	शुकरियेमें
१७६	१३	मतसविर हों	मुतसविर हो।
"	२०	आमादाह	आमादा।
१७७	१९	खैरतलवको फ- रमाया	खैरतलवको फर्माया।

इति महाराणा यशप्रकाश-

शुद्धिपत्र

समाप्त।

॥ श्रीः ॥

महाराणा-यशप्रकाश।

मङ्गलाचरण।

सोरठा।

जिहि सुमिरत सिधि होइ, गणनायक करिवरबदन।
करहु अनुग्रह सोइ, बुद्धिराशि शुभगुन सदन ॥ १ ॥
मूक होइ बाचाल, पंगु चढइ गिरिवर गहन।
जासु कृपासु दयाल, द्रवहु सकल कलिमलदहन ॥ २ ॥

[गोस्वामी तुलसीदासकृत.]

दोहा।

अङ्ग भसम अरधँग उमा, शीश गङ्ग शशिरेश।
रिपु अनङ्ग मङ्गल करन, एकलिङ्ग आदेश ॥ ३ ॥

[बारहठजी बल्लावलशजी.]

यह सूर्यवंश परम धन्य है जिसमें महाराजाधिराज श्रीराम-चन्द्र जैसे मर्यादापुरुषोत्तमका अवतार हुआहै। उन्हीं महाराजा रामचन्द्रके पुत्र कुश और लवकी वंशपरम्परामें राठौड, कछवाहे और सीसोदिये नामके ३ वंश वर्तमानमें सुप्रसिद्ध हैं। (कितनेही विद्वानोंका मतहै कि अयोध्याके अन्तिम राजा सुमित्रसे यह उक्त वंश विभाग हुआहै) जिनमें महाराणा साहबका यह वंश

लवसे प्रचलितहै। जिसकी प्राचीन राजधानी अयोध्यामें रही और अयोध्या छूटने पीछे लवपुर (लाहौर) वा वल्लभी पुरमें रही।

वल्लभीपुरके अन्तिम राजा शिलादित्यपर शत्रुओंने आक्रमण किया जो गूजर कहेजाते हैं, राजा शिलादित्य उस युद्धमें मारे गये और उनकी गर्भवती राणी पुष्पावती आबू पर्वतकी उपत्यका (निकटकी भूमि) में देवी अंबिका(अंबाजी)के दर्शन करनेके लिये आई थी सो उसने भगकर ईडरके पर्वतोंमें प्राण बचाये जहां उसके गुहनामक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसे गुहादित्यभी कहते हैं और उन्हींके नामसे[1] इस वंशको 'गुहिलोत' (गुहिलपुत्र) कहते हैं।

राजा गुहिलसे लगाकर महारावल बापातक सात राजा[2] हुए जिनके नाम ये हैं।

---

(१) प्रायः ऐतिहासिक विद्वान् लोग उक्त वंशको कुशसे भी मानते हैं।

(२) सन् १९०६ से लेकर " खड्गविलास " प्रेस बांकीपुरसे " टाड् राजस्थान " का हिन्दी अनुवाद मासिकपत्रके रूपमें प्रकाशित होता है। उसके प्रथम वर्षकी ९ वीं संख्यामें उक्त अनुवादके सम्पादक प्रसिद्ध ऐतिहासिक विद्वान् पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझाने पृष्ठ ३१७ वें पृष्ठके सिरपर १३ नंबरका टिप्पण लिखा है सो नीचे लिखा जाता है—सन् १९०२ में हमने टाड् साहिबका जीवनचरित लिखा, उस समय तक टाड् साहिबके लेखानुसार हम भी यहही मानते थे कि मेवाडके राजा " वल्लभी " के खानदानसे निकले हैं, परन्तु उसके पीछेके शोधसे कितने एक प्रमाण ऐसे मिले, जिनसे पायाजाता है कि मेवाडके राजाओंका वल्लभीके राजाओंसे कुछभी सम्बन्ध नहीं है मेवाडमें गुहिल वंशका राज्य स्थापन करनेवाला गुहिल वा गुहदत्त गुजरातके आनन्दपुरनामक नगरसे आया था ऐसा लिखा मिलता है।

१ गुहिल वा गुहादित्य

२ भोज

३ महेन्द्र

४ नाग

५ शील

६ अपराजित (ये वि० सं० ७१८ में विद्यमान थे)

७ वापा (१महेन्द्र) ने (वि० सं० ७९१ में चितौड मोरी चहुवानसे विजय किया और वि० सं० ८१० नागदा नगरमें समाधि ली)

[नोट—जिन राजाओंके शक संवत् नहीं मिले न जिनकी कविता उपलब्ध हुई उनके केवल नामही देदिये हैं और जिनके संवत् मिले हैं वे उनके नामके आगे देदिये हैं और जिनकी कविता मिली है उनकी कविता और इतिहास आदि भी लिख दिये हैं यह बात सर्वथा असंभव है कि गुहिल और भोज जैसे वीर और वदान्य राजाओंको कवि भूल गये हों पर अभाग्य वश हमको उनकी कविता प्राप्त नहीं हुई संभव है कि किसी पुस्तक विशेषमें न लिखे जानेके कारणसे लुप्त होगई हो इसी लिये हमने इस पुस्तकका संग्रह कियाहै कि इस समय तक जो कविता प्राप्त है वह तो लुप्त न हो जाय ।]

महारावल श्रीवापा ।

रावल महेन्द्रने ' जिनका उपपद वापा था, क्योंकि संसार इन्हें पिता मानता था, मोरियोंसे विक्रमी संवत् ७९१ में

१ यहां ७ नंवर पर पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझाने अपनी टाड राजस्थानकी टिप्पणीमें पृ० नं. ३२१ में " महेन्द्र " दूसरा लिखकर वापाको ८ नंवर लिखा है ।

चित्तौड विजय किया और संवत् ८१० में नागदा नगरकी सीमामें समाधि ली वह स्थान श्री एकलिङ्गेश्वरकी पुरीके समीप उत्तर दिशामें अब भी बापारावलके नामसे प्रसिद्ध है इनके पिताका नाम अपराजित था भोज इनसे पांच पीढी पहिले हुए थे.

गीत (१) महारावल श्रीबापाजीका ।

पूरवजां तणी मजाद न पलटी,
पहलां लें हिंदू प्रबल ॥
वसू जीत सायरां विचाले,
बापै लीधी आप बल ॥ १ ॥

मोरी मारलिया मेवाडै,
भोमी भोजतणा वलशीस ॥
रामलिहै लोपी नह रावल,
सात समँद बिच कीधी सीम ॥ २ ॥

जिका सल्ल लोपी नह जावै,
क्षत्रियांगुर तां अंडग सधी ॥
बापै लीधी आपतणैं बल,
जोजन कोड पचास जमी ॥ ३ ॥

गढ गढ पत गाजे गहलोतां,

कुल सारांमें येम कह्यो ॥

समँदां परै न गो दसँसहँसो,

राम बाणरै मांह रह्यो ॥ ४ ॥

[नोट–सोदा बारहठ कृष्णसिंहजीका मत है कि यह गीत बापाके समयका बना हुआ नहीं प्रतीत होता किसी कविने पीछेसे बनाया है ।]

टीका–महाराणा बापाने अपने १ पूर्वजोंकी मर्यादा नहीं छोडी । किन्तु प्रबल बापाने २ सागरोंके ३ मध्यकी ४ भूमिको अपने बलसे जीतली ॥ १ ॥ हे अतुल बलशाली मामी अर्थात् ५ न्यौछावर करने योग्य मेवाडपति बापा ! तैंने मोरियोंका नाश करडाला । हे रावल ! तैंने ६ रामचन्द्रकी मर्यादाको नहीं तोडी और सात समुद्रोंके बीचमें अपने राज्यकी सीमा नियत करली ॥ २ ॥ क्षत्रियोंमें गुरु अर्थात् श्रेष्ठ बापाने ७ उस ८ नहीं हटनेवाली मर्यादाको ९ सहन की और अपने बलसे पचास कोटि योजन पृथ्वी लेली ॥ ३ ॥ १० दश हजार गामोंके पति गहलोत वंशी बापाने अनेक गढ और गढपतियोंका गर्व गंजन किया अर्थात् जीतलिये । और समुद्रोंके पार नहीं गया मानों रामबाणकी जो मर्यादा है उसके इस पारही रहा नहीं तो बापा समस्त भूमंडल ले लेता । भाव यह है कि बापाने पचास कोटि योजन भूमिही ले ली ॥ ४ ॥

मनोहरम् (२)

धारि कठिनाई धीर गुरुकी चराई धेनु,
इष्ट वर पाय पुनि पूर निधि पाई तैं ॥
विक्रमाब्द इन्दु नन्द द्वीप मानमोरी मारि,
चित्रकूट राजधानी जबर जमाई तैं ॥
खुरासान आदिक घमंडी दूरदेशी घाय
पाइ प्रभुताई सुख नीति सरसाइ तैं ॥
वीरवर ! वापा ? यों विथारि निज वाहुबल,
आसमुद्र छोणी एक आतपत्र छाई तैं ॥

[नोट—यह कवित्त महाराणा श्रीफतहसिंहजीने वापाराव-लकी तसवीरपर लिखानेके लिये बारहठ कृष्णसिंहजीसे बनवाया]

टीका—धीर,वापा ! तैंने दृढता धारण करके १ गुरु "हारीत", ऋषिकी गाय चराई । और उनसे वरदान २ पाकर तैंने पूर्ण निधि (सम्पत्ति) पाई । ३ विक्रम संवत् ७९१ में मोरियोंको मारकर हे बलवान् ! तैंने ४ चित्तौडकी राजधानी जमाई । खुरासान आदिक घमंडी विदेशियोंको ५ मारकर और प्रभुता-पाकर तैंने सुखनीति सरसाई । हे वीरवर वापा ! इस प्रकार अपने बाहुबलको विथारि अर्थात् विस्तार करके ६ समुद्र पर्यन्तकी ७ पृथ्वीको एक ८ छत्रसे छाई अर्थात् अपने अधिकारमें करली ॥

बापा और गढ लक्ष्मण सिंहके बीचमें ३७ राजा हुये हैं इनके विषयकी भी कोई कविता हमको उपलब्ध नहीं हुई

(१) पं. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा महारावल बापा और गढ-लक्ष्मणसिंहजीके बीचमें होनेवाले राजाओंकी संख्या ३७ से अधिक मानते हैं। वे अपने सम्पादित "टाडराजस्थान" वर्ष १ संख्या २ के ३२१ वें पृष्ठमें लिखते हैं कि——आजतकके शोधके अनुसार शुद्ध कहिई गुहिलसे राणा हमीरसिंह तककी मेवाडके राजाओंकी वंशावली——(बापा तकका वंशावलीमें विशेष भेद नहीं है इसलिये बापाके आगेसेही वंशावली लिखी जाती है। यद्यपि महाराणा गढ-लक्ष्मणसिंह तकही इस वंशावलीका उल्लेख करना आवश्यक है तथापि राणा हमीरसिंह तककी पीढियोंमें विसंवाद (न मिलना) पाया जाता है इसलिये हमीरसिंह पर्यन्तकी पीढियोंका उल्लेख कियाजायगा। इस क्रममें सत्यासत्य निर्णय करना सुयोग्य पाठकोंके विचारपर निर्भर है।)

८–कालभोज (बापा)–मेवाडका प्रसिद्ध राजा बापा या बापारावल यहही होना चाहिये, जिसको डूंगरपुर इलाकेसे मिलेहुए कितने एक शिला लेखोंमें खुम्माणका पिता लिखा है, और ऐसा ही मेवाडकी ख्यातोंमें लिखा मिलता है. राणा रायमल्लके समयके "एकलिंगमाहात्म्य" से पाया जाता है कि उसने विक्रम सं० ८१० (ई० स० ७५३) में राज्य छोडा था।

९–खुम्माण

१०–मत्तट

११–भर्तृभट

१२–सिंह

१३–खुम्माण (दूसरा)

१४–महायक

और न शक संवत् हस्तगत हुए अतः केवल नामही लिख देते हैं ॥

१५-खुम्माण (तीसरा)

१६-भर्तृभट (दूसरा)-इसकी राणी महालक्ष्मी राठोड वंश-की थी जिससे अल्लटका जन्म हुआ था ।

१७-अल्लट-इस राजाके समयका शिलालेख वि० सं० १०१० (ई० सं० ९५३) का मिला है । इसकी राणी हरियादेवी हूण राजाकी पुत्री थी.

१८-नरवाहन-इसके समयका एक शिलालेख वि० सं. १०२८ (ई० सं० ९७१) का मिला है. इसकी रानी चोहान राना जेजयकी पुत्री थी ।

१९-शालिवाहन-

२०-शक्तिकुमार-इसके समयका एक शिलालेख वि० सं० १०३४ (ई० सं० ९७७) का मिला है ।

२१-अंबाप्रसाद.

२२-शुचिवर्मा.

२३-रनवर्मा.

२४-कीर्तिवर्मा.

२५-योगराज.

२६-वैरट.

२७-हंसपाल.

२८-वैरिसिंह.

२९-विजयसिंह-इस राजाका विवाह मालवाके प्रसिद्ध परमार राजा उदयादित्यकी पुत्री श्यामल-देवीसे हुआ था, जिससे आल्हणदेवी नामक कन्या उत्पन्न हुई थी, जिसका विवाह हैहयदेश-

१ कालभोज
२ खुम्माण

के चेदी-(कलचुरी)-वंशी राजा गयकर्ण-देवसे हुआ था. राजा विजयसिंहका एक ताम्र-पत्र विक्रम सं० ११६४ (ई० सं. ११०७) का मिला है।

३०-अरिसिंह
३१-चोंडसिंह
३२-विक्रमसिंह
३३-रणसिंह या करणसिंह-इस राजासे दो शाखा फटीं.

रावल शाखा.	राणा शाखा.
३४-क्षेमसिंह	राहप
३५-सामन्तसिंह	नरपति
३६-कुमारसिंह	दिनकर
३७-मथनसिंह	जशकरण
३८-पद्मसिंह	नागपाल
३९-जैत्रसिंह	पूर्णपाल
४०-तेजसिंह	पृथ्वीपाल
४१-समरसिंह	भुवनसिंह
४२-रत्नसिंह	भीमसिंह
	जयसिंह
	लक्ष्मणसिंह

लक्ष्मणसिंह के पुत्र: अरिसिंह, अजयसिंह

अरिसिंह
४३ हमीरसिंह

३	भर्तृभट
४	सिंह
५	अल्लट (विक्रमी संवत् १०१० में विद्यमान थे)
६	नर वाहन
७	शालि वाहन
८	शक्ति कुमार (वि.सं. १०३४में विद्यमान थे)
९ महारावल	शुचिवमा
१० "	नर वर्म्मा
११ "	कीर्ति वर्म्मा
१२ "	वैरट
१३ "	वैरिसिंह
१४ "	विजयसिंह
१५ "	अरिसिंह
१६ "	चौडसिंह
१७ "	विक्रमसिंह
१८ "	क्षेमसिंह
१९ "	सामन्तसिंह
२० "	कुमारसिंह
२१ "	मथनसिंह
२२ "	पद्मसिंह
२३ "	जैत्रसिंह (वि. सं. १२७० में विद्यमान थे)
२४ "	तेजसिंह (वि. सं. १३२४में विद्यमान थे)
२५ "	समरसिंह (वि.सं. १३३०से१३४४तक थे)
२६ "	रत्नसिंह (वि.सं. १३५९ में विद्यमान थे)

२७ " कर्णसिंह
२८ महाराणा राहप
२९ " नरपति
३० " दिनकरण
३१ " यशकरण
३२ " नागपाल
३३ " पूर्णपाल
३४ " पृथ्वीपाल
३५ " भुवनसिंह
३६ " भीमसिंह
३७ " जयसिंह

---

(१) इनके लिये "वंशभास्कर" की चतुर्थराशिमें निम्नलिखित प्रकारसे उल्लेख किया है–

पादाकुलकम् ।

"पहु इत चित्रकूट गढ भूपति, राना पृथ्वीमल्ल धर्मरति ।
काशी पत्त इश दर्शन कहँ, ततु रन तजिय जानि गोवध तहँ ॥

सचरण गद्यम् ।

पहिलेंहू याके पिता रानो पुण्यपाल १ जाको पूर्णम १ हू कहैं ताने अरु याही पृथ्वीमल्लके पितामह नागपाल २ नेंहू विश्वेश्वरकी यात्रामें ऐसेही गोवधके निमित्त महा अवमर्दमें देह डारे । तैसेही राना पृथ्वीमल्लहू काशीपुरीके परिसरमें महारन राचि ततु तजत सुरभिनके सन्तापक सहस्रन म्लेच्छ मारे ॥ ऐसे म्लेच्छनको मण्डल प्रतिदिन वलिष्ठ बनि आर्यावर्तमें थाना जमावत ठाम २ फोलि अ यं धर्मको ह्रास करत भयो । अरु इनको राना पृथ्वीमल्लको तनूज "भुवनाङ्क" जाकों दूजे नाम करि भीमसिंहहू कहैं सो चित्रकूटको आधिपत्य धरत भयो ॥"

महाराणा श्रीगढलक्ष्मण सिंहजी ।

महाराणा श्रीगढलक्ष्मणसिंहजी कौनसे विक्रमी संवत्में जन्मे और कौनसेमें गद्दी विराजे सो अनिश्चित है, इनका देहांत वि. सं. १३९० के समीप हुवा, दिल्लीके बादशाह मुहम्मद तुगलकके साथ वि. सं. १३९० के समीप इनका युद्ध हुवा जिसमें उक्त महाराणा अपने पुत्रों और भाइयों सहित काम आये.

गीत (३)

तेरासै सँमत वरस इकतीसे,
जवन हींदवाँ हुवो जुद ॥
राणै वात अबीढी राषी,
तेरा पीढी झूडी तद ॥ १ ॥
गढलिषमण तारीसा गुडिया,
अडसी कुल मंडण आरोड ॥
आया काम दिली दल आतां,
चोरासी राजा चीतोड ॥ २ ॥
दीन अलाव फिरे गढ दोला,
हर सिर माल वणाव हुवा ॥
सात लाख झड खत्री सराँरा,
मेछ अठारा लाख मुवा ॥ ३ ॥

रामायण भारथ विच राणां,
सूरां सुमिरण मरण तिसो ॥
साको कीधों गढ लिषमणसी,
अवर न साको हुवो इसो ॥ ४ ॥

[नोट--इस गीतके लिये ऐसाभी सुनाजाता है कि यह महाराणा गढलक्ष्मणसिंहके समयका बनाहुआ नहीं है इसके संवत और इतिहासमें भी मतभेद है, कि अलाउद्दीन और महाराणा गढ लक्ष्मणसिंह समकालीन नहीं थे. संवत१३५९ में अलाउद्दीन

(१) पं. गौरीशंकरजी हीराचन्द ओझाके मतानुसार इस गीतका इतिहास यद्यपि सही है तथापि सम्वत् तो भिन्नही है । पं. जी "टाड राजस्थान" प्रथम वर्ष संख्या ९ पृष्ट ३१९ नोट नम्बर २३ में लिखते हैं कि "राजा विक्रमसिंहके उत्तराधिकारी 'रणसिंह, से जिस को "करणसिंह" भी कहते थे दो शाखा फटी जिनमेंसे बड़ी रावल और छोटी राणा नामसे प्रसिद्ध हुई । रावल शाखामें चित्तोडका अन्तिम राजा 'रत्नसिंह' हुआ जो अलाउद्दीन खिलजीकी लडाईमें विक्रम संवत् १३६० (ई० सन् १३०३) में काम आया और चित्तोडपर मुसलमानोंका अधिकार होगया, जिससे रत्नसिंहके वंशजोंने डूंगरपुरका राज्य स्थापन किया और वे वहीं रहे । राणा नामकी दूसरी शाखाका पहला पुरुष राहप हुआ, जिसका वंशज लक्ष्मणसिंह (गढलक्ष्मण सिंह) अलाउद्दीनके हमलेके समय रावल रत्नसिंहके पक्षमें लडकर अपने सात पुत्रों सहित काम आया । उसके पौत्र हमीरसिंहने चित्तोडका किला लेकर यहांपर फिर अपने वंशका राज्य काइम किया, तबसे राणा शाखावाले मेवाडके स्वामी हुए ॥ ऐसे गम्भीर ऐतिहासिक विषयोंका निर्णय करना अत्यन्त दुःसाध्य है। पाठकगण जैसा योग्य समझें वैसाही स्वीकार करें ॥

और रावल रत्नसिंहजीसे पद्मिनीके कारण युद्ध हुआ था और महाराणा गढलक्ष्मणसिंह मुहम्मद तुगलकके युद्धमें संवत् १३९० के समीप काम आये थ जो ऊपर लिखआये हैं]

टीका-संवत् १३३१ में मुसलमान और हिंदुओंमें युद्ध हुआ उस समय महाराणाओंकी तेरह पीढी काम आगई पर उन्होंनें अपना हठ न छोडा ॥ १ ॥ जिस युद्धमें महाराणा गढलक्ष्मणसिंह और कुलके भूषण कुमार अडसी (अरिसिंह) सरीखे मारे गये और चीतौडके मददगार अन्य चौरासी राजा दिल्लीकी फौजके हाथोंसे काम आये ॥ २ ॥ अलाउद्दीनने गढके गिर्द घेरा दे लिया और महादेवने भी मस्तकोंकी मालाका भूषण बनाया था । जहां सात लाख वीर क्षत्रिय और अठारह लाख म्लेच्छ (मुसलमान) मारे गये ॥३॥ महाभारत और रामायणकी तरह स्मरण रखने योग्य यह वीरोंका संहार हुआ था, गढलक्ष्मणसिंहने जैसा साका किया वैसा पहिले कभी नहीं हुआ था ॥ ४ ॥

मनोहरम् (४)

धायन त्रिहायन लों सन्तत समर मंडि,
राखि रनथंभराज सौंपन सराह्यौ नाँ ॥
साह्यो हठ बप्पवंस बिरुद बढावनकों,
रावनकों रीढा दै सिटावनको साह्यौ नाँ ॥
जात जान्यों जनन पै मन न सुरात जान्यौ,
वृत्तहिं निबाह्यौ अपकीरति बिबाह्यौ नाँ ॥

देखो रान लक्खन अलाउदीन अंतकको,
ऐन दैन चाह्यो पर रैन दैन चाह्यो नाँ ॥

[महाकवि सूर्यमल्लजीकृत

[नोट–इस कवित्तका इतिहास सत्य नहीं प्रतीत होता क्योंकि उस समय रत्नसिंहजीका लक्ष्मणसिंहजीके शरण जाना प्रमाणसिद्ध नहीं है । संभव है कि, वड्वा भाटोंके लिखानेसे ऐसा उल्लेख किया गया हो । इस सम्बन्धमें बारहठ कृष्णसिंहजीने वंश भास्करकी टीकामें बहुत कुछ लिखा है ।]

टीका–जिसने तीन वर्ष तक निरन्तर युद्ध करके घाई (निरंतर प्रहार) बजाई और रणथंभके राजा रत्नसिंहको शरण रखकर पुनः दे देना अंगीकार नहीं किया, जिसने बापाके वंशके विरुदको बढानेकाही हठ बनाया रक्खा और जो हठमें रावण सेभी आगे बढ निकला परंतु लज्जायुक्त कभी नहीं हुआ, जिसने अपने वंशके क्षय निश्चयपूर्वकजानलेनेपर भी मन नहीं मोडा, जिसने (शरणागत वत्सल) व्रतकोंही निवाहा, परन्तु अपकीर्तिके साथ विवाह नहीं किया, उस महाराणा गढ लक्ष्मणसिंहको देखो कि जिसने अलाउद्दीन रूपा कालको अपना घरही दे देना चाहा परन्तु शरणागत रत्नसिंहको देना अंगीकर नहीं किया ॥

मनोहरम (९)

लक्खन वियक्खनके चक्खन निकारिवेकी,
लखो रान लक्खनके चाली चित चालीको ॥

काटे जिन गोधनके कंठ तिन कंठवारे,
कंधनकों काटे काटे कंध घटा वालीको ॥
क्रूर करनाल करवाल खितमाल भमैं,
चिब्बुकलों श्रोनताल कांप्यो जियकालीको ॥
वक्रतुंड तुंड न वितुंडनके तुंडनमें,
मुंडनमें मुंड न लखात मुंडमालिको ॥

[स्वामि गणेशपुरीजीकृत]

टीका-लाखों शत्रुओंकी आंखें निकाललेनेमें महाराणा गढ लक्ष्मणसिंहके मनकी हिम्मत वढी जिसको देखो कि जिसने गौओंके कंधे काटनेवालों (मुसलमानों) के कंठोंको कंधों सहित काट डाले और हाथियोंके कंधे भी काट डाले जिस युद्धमें भयंकर करनालें (वाद्य विशेष) वाजी और तरवारें पृथ्वीपर भ्रमती थीं, जहां ठुड्डी तक लोहूका तालाव भरगया जिसमें हाथियोंके बहुतसे कटेहुए मस्तक देखकर इसमें कहीं गणेशकाभी मस्तक न हो ऐसी शंका करके कालीका-हृदयभी कांप उठा । और जहां रणक्षेत्रमें पडेहुए मस्तकोंमें शिवका मस्तक नहीं दीखता था ॥

महाराणा श्रीअजयसिंहजी ।

महाराणा अजयसिंहजी किस संवत्में गद्दी बैठे सो अनिश्चित है, परन्तु वि. सं. १३९० के समीप महाराणा गढलक्ष्मणसिंहजी काम आये । और उस समय चित्तौडतो इनके अधिकारसे छूटकर मुहम्मद तुगलकके अधिकारमें हो-

गया था और कुछ प्रदेश केलवाडाके समीपका केवल रह गया था सो वहां जाकर उक्त महाराणा गद्दी विराजे इसीलिये इनको ' केलपुरा ' कहते हैं, इनने चित्तौड लेनेकी बहुत कोशिश की परन्तु हाथ नहीं लगा, इनका देहांत समयभी अनिश्चित है। इनका विशेष वृत्तान्त " वंश भास्कर " में लिखा है॥

महाराणा हम्मीरसिंहजी।

महाराणा हम्मीर सिंहजीका जन्म कौन विक्रमी संवत्में हुआ था सो अनिश्चित है, मुहम्मद तुगलकके उपरोक्त युद्धमें महाराणा गढलक्ष्मणसिंहजी सकुटुंब काम आये। और इनके छोटे पुत्र अजयसिंहजी घायल होकर बचगये जो केलवाडा नगरमें जाकर मेवाडके सिंहासन पर बैठे। इनका देहांत हुए पीछे अजयसिंहजीके भतीजे और अरिसिंहजीके पुत्र महाराणा प्रथम हम्मीरसिंहजी गद्दी बैठे और अनेक युद्ध करके थक गये परन्तु चित्तौड पर पुनः अधिकार नहीं करसके। तब आत्मघात करनेको द्वारका जाने लगे उस मार्गमें गुजरातमें खोडनामक ग्राम मिला, जहां मोदा बारहठ शाखाके चारण बारूजीकी माता बरवडीजी रहते थे, जो शक्तिके अवतार थे। उनके पास जाकर महाराणाने अपना दुःख निवेदन किया तब माता बरवडीजीने महाराणाको द्वारका जानेसे रोककर चित्तौड विजय करनेका वर दिया। तब महाराणा हम्मीरसिंहजी पीछे केलवाडे आगये। उस समय महाराणाके पास

कुछ सामग्री नहीं रही थी इसलिये देवी बरवडीजीने अपने पुत्र बारूजीको ५०० घोडे लेकर महाराणाके पास भेजा जिस सहायतासे महाराणा हम्मीरसिंहजीने संवत् १४०० के प्रारंभमें चित्तौड पर अपना अधिकार करलिया। और इन बरवडी माताका जिनका दूसरा नाम अन्नपूर्णा था चित्तौडके किलेमें मन्दिर बनवाया जो अबतक वहां विद्यमान है। और महाराणा प्रतापसिंहजीने एक चबूतरा उदयपुरमें ब्रह्मपुरीकी तरफ बनवाया जहां अब भी नवरात्रिके दिनोंमें श्रीबरवडीजीके दर्शनार्थ महाराणा जाया करते हैं। इन सोदा बारहठ बारूजीको महाराणा हम्मीर सिंहजीने बहुत धन ग्राम और इज्जत देकर अपना पोलपात बनाया जिस विषयका यह निम्नलिखित गीत है। इन महाराणाका देहांत वि० सं० १४२१ में हुआ।

गीत (६)

बैठक ताजीम गाम गज बगसे,
किवरो मोटो तोल कियो ॥
बड दातार हमे बारूनें,
दे इतरो बारठो दियो ॥ १ ॥
पोळ भवांह करे पगपूजन,
वडा अबोस छोले द्रव बेग ॥

सिंधुर सात दोय दस सांसण,
नागद्रहे दीधा इम नेग ॥ २ ॥
सहँस दोय महिंषी अन सुरभी,
कंचन करहां भरी कतार ॥
रीझे दिया पांचसे रे'वँत ,
दस सँहसा झोका दातार ॥ ३ ॥
कोड पसाव पेप जग कहियो,
अधपत यों दाखे इण ओड़ ॥
श्रीमुख सपथ करे अडसीसुत,
सोदां नह बिरचै सीसोद ॥ ४ ॥

[सोदा वाहरठ वारूजी कृत]

टीका–बैठक, ताजीम, ग्राम और हाथी वगैरह देकर कविका बहुत बडा १ सन्मान किया। और इतना देकर उस बडे दातार २ हम्मीरसिंहने कवि वारूको अपना ३ पोलपात बनाया ॥ १ ॥ द्वारपर ४ चरण धोकर पैर पूजे और बडे बडे ५ मकानोंका भी रहनेके लिये ६ दान किया सात ७ हाथी और बारह ग्रामों सहित (पचीस हजार रुपये सालियाना आमदनीका आंतरीका) पटा, इस तरह ८ नागद्राके पति (महाराणा) ने नेग बखशे ॥ २ ॥ दो हजार गाएं और ९ भैंसे और स्वर्णकी भरी हुई १० ऊंटाकी कतार और फिर खुश होकर उस दश हजार ग्रामोंके पति (महाराणा)

बडे दातारने पांचसौ ११ घोडे भी दिये ॥ ३ ॥ इस प्रकार क्रोड पसाव देकर महाराणाने अपने मुखसे यह १२ आज्ञादी कि मैं शपथ पूर्वक कहता हूं कि इस वंशमें कोई शीसोदिया सोदा बारहठोंसे नहीं १३ बदलेगा ॥ ४ ॥

गीत (७)

ऐलो चीतौड सहै घर आसी,
हूं थारा दोषियां हरूं ॥
जणणी इसो कहूँ नह जायो,
कहवै देवी धीज करूं ॥ १ ॥
रावल बापा जसो रायगुर,
रीझ खीज सुरपतरी रूंसँ ॥
दससहँसा जेहो नह दूजो,
सकती करै गलारा सूंसँ ॥ २ ॥
मन साचै भाषै महँमाया,
रसणा सहती वात रसाल ॥
सरज्यो है अडसीसुत सरखो,
पकडे लाऊं नाग पयाल ॥ ३ ॥
आलमकलमें नवैषंड एला,
कैलपुरारी मींढ किसो ॥

देवी कहै सुण्यो नह दूजो,

अवर ठिकाणै भूप इसो ॥ ४ ॥

[सोदा बारहठ बारूजीकृत]

[नोट—यह गीत बरवडीजीके वरदान और आज्ञाके अनुसार उनके पुत्र बारूजीने बनाया है इस विषयमें " वंशभास्कर " का लेख दुसरे प्रकारसेभी मिलता है जिसका निर्णय पाठक जनोंकेही विचारपर निर्भरहै]

चीतोडकी सब १ भूमि तुम्हारे घर आवेगी और मैं तेरे २ शत्रुओंका नाश करडालूंगी । देवी कहती है कि मैं शपथ करतीहूं कि, किसी ३ माताने महाराणा हम्मीरसिंह सरीखा नहीं जना ॥ १ ॥ जो बापा रावलके समान ४ राजाओंका राजा है और जिसकी रीझ और कोप ५ इंद्रके समान है, शक्ति अपने कंठकी ६ शपथ करके कहती है कि ७ दश सहस्र ग्रामोंके पति (महाराणा) के समान अन्य नहीं है ॥ २ ॥ जिह्वाको शोभा देती हुई ८ सत्य वार्ता महामाया सच्चे मनसे कहतीही है कि यदि अडसी (आरीसिंह) के पुत्र (हम्मीरसिंह) के समान परमेश्वरने किसीको बनाया होतो मैं उसे पातालसे पकड लाऊं ॥ ३ ॥ ९ कलमा पढनेवालों (मुसलमानों) की दुनियामें वा १० पृथ्वीके औरभी नवही खंडोंमें महाराणाकी बराबरी करनेवाला कौन है, देवी कहती है कि, मैंने तो अन्य ठिकानोंमें ऐसा राजा नहीं सुना ॥ ४ ॥

गीत (८)

हर हर तणा हमीर नरेसुर,
 लाग थका मूका रह लोयं ॥
एकण आस तुहाली ऊपर,
 सीसोदा आवै सह कोय ॥ १ ॥
जट धारी धारी जानोंइ,
 कविताधारी कंथाधार ॥
मारग दस मेवाड नरेसुर,
 वहै तुहालै वड दातार ॥ २ ॥
हर पँथ अवहर पंथ अहे हुय,
 प्रभा हुवंती समोप्रवाह ॥
एक हमीर वहै कांकणिये,
 आज तुहालै उतलै तियाह ॥ ३ ॥
उहँव थयां नां कोई वह आवै,
 सुरियणं मारग अन्य सह ॥
मेकं वहै अरसीह समोभ्रम,
 प्रथी चिलग्गी तूझ पहँ ॥ ४ ॥

टीका–शिवके अंशवाले महाराणा हम्मीर सिंह ! तेरी आशा करके सब लोग आते हैं और हे शिसोदिया ! जो अपने

लाभके लिये आते हैं वे १ लोग गूंगे रहते हैं अर्थात् उनको विना मांगे ही मिलता है ॥ १ ॥ हे वडे दातार मेवाडके पति महाराणा! तेरे यहां दशों दिशाओंके मार्गोंसे जटाधारी(साधु), जनेऊधारी (ब्राह्मण,) कविताधारी (कवि) और कंथाधारी (संन्यासी आदि) सब आते हैं ॥ २ ॥ हे महाराणा! तेरा यह दानका मार्ग शिवके मार्गके समान पाप हरनेवाला होगया है, और तेरे दानके प्रवाहके साथ तेरी क्रान्ति भी बढगई है, हे २ अतुल त्यागी हमीरसिंह! आज यह उदारताका ३ मार्ग तेरेही यहां बहता है (यहां अतुल त्यागीके संबन्धसे उदारताका अध्याहार होता है) ॥ ३ ॥ तुम्हारे इस दानसे ४ त्याज्य हुये वे और सब (कृपण राजा) इस ५ देवमार्गमें नहीं आसकते. हे आरि सिंहकी समानता करनेवाले हम्मीरसिंह! ६ एक तुम ही इस मार्गमें वहतेहो सो हे ७ प्रभो (हम्मीरसिंह) यह पृथ्वी तेरेही साथ लगी हुई है ॥ ४ ॥

गीत (९)

कुल करसंण करे वरांसण कोडी,
  ढीक कनक मझ ढालडिया ॥
अडसी सभ्रम ठोड सिंचे इम,
  हम्म महादत हालडिया ॥ १ ॥

परठी आस गयण लग पूंहतै,
  कीरत वाडी मोर कली ॥

सुतियाणी आरत कर सींची,
फल किव वयणा सुफल फली ॥ २ ॥
त्रिमल प्रवाह गंग गोम वासहे,
घणी कियारी करत घणा ।
संभारिया पात सोव्रनमें,
त्रहुं अण हात हमीर तणा ॥ ३ ॥
वाड लियाडे उचत पांच विध,
न्याय कनक कर मिर्सर नखे ॥
रोर वराह समँद पैली रुख,
राम रवाँ कर राम रखै ॥ ४ ॥

टीका—राणा हमीरसिंहने १ कुरु खेती की. २ ढींकली, चांच (जल निकालनेका यंत्र) से सोनारूपी पानी सींचा. ३ प्रतिष्ठित पाई, ४ पहुंचकर. ५ आकाशमें वास करनेवाली गंगा (आकाशगंगा) के प्रवाहसे. ६ याद किये. उस खेतीकी रक्षाके लिये पांच प्रकारकी ७ वाड बनाई. स्वर्णरूपी ८ खात डाला. इस खेतीको नष्ट करनेवाला ९ पापका मार्ग है सो समुद्रके परलीपार रहै. परमेश्वर इसे १० जारी रखकर इसकी रक्षा करै ॥

महाराणा खेताजी ।

महाराणा श्रीखेताजी विक्रमी संवत् १४२१ में पाट बैठे और १४३९ में बारूजी बारहठका वैर लेनेके कारण

हाडा लालसिंहजीसे लडकर बुंदीमें काम आये थे । मेवाडके इतिहासमें महाराणा खेताजीका गयामें यवनोंसे युद्ध करना नहीं पाया जाता पर यह गीत उसी समयका वनाहुआ सुना जाता है इसलिये ऐसा खयाल होता है कि इनके राज्यसमयके इन्हीं अठाहर वर्षोंमें यह युद्ध हुआ होगा ॥

गीत (३०)

ओडणपुड येक येक पुड असमंर,
हाते मुंठज हात ालया ॥
कोप पुधारं थके तल कांठां,
दांणव गांत नेंनी दालिया ॥ १ ॥
थर भुजवी धरापुड धुवंते,
घरट घाय धण घेरविया ॥
रांतमुखा गोहूं अर राणै,
आवध धारे ओरविया ॥ २ ॥
अणियां धार अनेक आवंरत,
पाडे मुंठज पाण गया ॥
खडग पषाण खेडते खेता,
थाट रेंवद रण लोट थया ॥ ३ ॥

पड पकवान प्रवाडा प्रमरथं[11],
साहां सेन करे बोह संग ॥
मैदा कटक महारंस[12] मसले,
जीम्हण राण कियो रणजंग ॥ ४ ॥

टीका—यह जीमन याने खानेका रूपक है आटा घूंदनेके लिये पात्र चाहिये सो एक पुड तो १ ढालका और दूसरा पुड २ तलवारका है, तलवारकी मूंठमें हाथ है वही ३ मसलनाहै उसमें जिस तरह देवताओंने दैत्योंको पीस डाले थे (यह अध्याहार है,) उसी प्रकार ४ क्षुधारूपी कोपमें ५ मुसल· मानरूपी दानवोंको ६ काठे गेहुओंकी तरह तैंने पीसकर तल डाले ॥१॥ इस महाराणाने आयुध धारण करके अथवा आयु· धोंकी धारसे ७ लाल मुखवालों (यवनों) को " दूसरे पक्षमें काठे गेहुओंको " ८ जलतेहुए पृथ्वीके पुटपर घरटमें गेहूंकी तरह ऊरे उस समय पृथ्वीभी धूजने लगगई ॥ २॥ उस युद्धमें यवनोंकी कई ९ सेनाओंको महाराणा खेताने अपनी मूठके परा· क्रमसे गयामें मारडाली और १० मुसलमानोंके कई झुंडोंको युद्धक्षेत्रमें अपनी तलवारके वलसे सुला दिया ॥३॥ उस महा· राणाने केवल ११ परमार्थके लिये युद्ध करके बादशाही सेना· रूपी मैदाको १२ रुधिरमें मसलकर उस युद्धमें पकान्नोंका वडा जीमन किया ॥ ४ ॥

महाराणा श्रीलाखाजी ।

महाराणा लाखा विक्रमी संवत् १४३९ में मेवाडके राज्य सिंहासन पर बैठे और संवत १४५४ में इनका देहांत हुआ ॥

गीत (११)

पयदल नह पार सँख्या नह साहणं,
कटक पयाणां रंग किये ॥
भान कसी दूजा मंडलीकां,
लाखो लियतो लंक लिये ॥ १ ॥
सोहणं कटक मिले खत्रावत,
साकुरं सुभट इसे समदावं ॥
लागण हार होयतो लेन,
राकस रधं मेवाडो राव ॥ २ ॥
हेदल कटल पायदल तूंकल,
सीसोदें खटतें सँनदें ॥
गेहके हो बीजांगढ पतियां,
गंजे अगंजी त्रिकुट गढ ॥ ३ ॥

टीका-पैदलोंका पार ही नहीं है और १ घोडोंकी संख्या नहीं है इस तरहकी बडी सेना सहित जितने २ प्रयाण किया है सो अन्य ३ राजाओंकी तो बातही क्या यदि महाराणा लाखा चाहे तो लंका भी ले सकता है ॥ १ ॥ जिसके ऐसी ४ समृद्धिवाले ५ घोडे और सुभट हैं और जो एक ६ अक्षौहिणी सेना रखनवाला है वह राणाखेताका पुत्र यदि लेना चाहे तो राक्षस (रावण) की ७ समृद्धि भी ले सकता है ॥ २ ॥

घोडे और पैदलोंके रौरव शब्दके साथ मेदपाटेश्वर सीसोदिया ८ सज्जित होकर चलता है उस समय दूसरे कौनसे राजा इस बातका ९ गर्व करसकते हैं कि जो विजय नहीं किये जाने योग्य १० चीतोड गढको जीतैं ॥ ३ ॥

[नोट—यह गीत पंखाला जातिका है जो तीन दोहोंका ही होता है ।]

गीत (१२)

प्रथीपुड सांकडों मेरहै कापडो,
वोहलों जास सुवास वहै ॥
मोटापणां तणों मेवाडा,
लाखा कवण प्रमाण लहै ॥ १ ॥
आयत इला अनलपुड आयत,
समँद आयतां वलेज सात॥
लाखां तेथ वँहाचिँया लाखै,
वडा वडा जुग रहसै वात ॥ २ ॥
यल न अनड ऊवहै आन का,
नेणां दीसै सहै नवाय ॥
यो करतार आवियो करतां,
मोटेरो मेवाडो राय ॥ ३ ॥

लाख बरीस महत तूं लाखा,
तायक समवड कीजै ताय ॥
इल अणवूठै कसो अंबहर,
अनड अढठै उहवै आय ॥ ४ ॥

टीका-पृथ्वीका पुड छोटा है और सुमेरु पर्वत भी पृथ्वी का एक १ टुकडा है और महाराणाका २ यश बहुत दूर तक चला गयाहै इसलिये हे लाखा! तुम्हारे बडप्पनका प्रमाण कौन लेसकताहै ॥ १ ॥ पृथ्वी छोटी है और ३ पर्वतोंका पुट भी छोटाहै और समुद्र छोटे होने पर भी केवल सातही हैं परंतु महाराणा लाखाने तो लक्षावधि द्रव्य ४ बांट दिया है सो यह वार्ता अनंत युग तक रहेगी ॥ २ ॥ पृथ्वी और पर्वत सब नमें (झुके) हुए और छोटे दीखतेहैं परंतु परमेश्वरकी सृष्टिमें एक मेवाडका राजाही बडा होकर आया हुआ दीखता है ॥ ३ ॥ हे लाखों रुपये देनेंवाले लाखा! तू बडाहै तेरी बराबरी कौन करै, जो पृथ्वीपर नहीं बरसता वह मेघ किस कामका।

महाराणा लाखाजीके ज्येष्ठ पुत्र राव चूंडाजी।

राव चूंडाजी लाखाजीके ज्येष्ठ पुत्र होनेके कारण यद्यपि गद्दीके हकदार थे परन्तु केवल इसी कारणसे इन्होंने जानबूझ कर गद्दीका हक छोड दिया था कि एक दिन दर्बारमें माहाराणा लाखा अपने राजकुमार चूंडा सहित बैठे थे तो मारवाडके राजा रिडमलजीने चूंडाजीके साथ अपनी पुत्रीका संबन्ध करनेके

लिये टीका भेजा इसपर लाखाजीने कहा कि हम भी जवान थे तब हमारे लिये भी योंही टीके आया करते थे इसपर चूंडाजीने यह समझकर कि यह शादी करनेकी मेरे पिताकी इच्छा है शादी करनेसे इनकार करदिया और बोले कि मेरे पिताकी जिस राजकुमारीसे शादी करनेकी इच्छा है वह तो मेरी माता है इसपर लाखाजीने इन्हें बहुत समझाया कि मैंने इस इच्छासे नहीं कहा केवल प्रस्ताव आनेसे कहदिया था पर उन्होंने एक न मानी लाचार टीका वापस भेजनेमें रिडमलजीका अपमान होता देख महाराणा लाखाने विवाह करना स्वीकार किया इसपर रिडमलजीके भेजेहुए आदमियोंने उज्र किया कि हम माहाराणा साहबको व्याहदें तो हमारा भानजा गद्दी का हक़दार नहीं होसकता अतः यदि चूंडाजी यह लिख देवें कि गद्दीका मालिक हमारा भानजा होगा तब हम महा-राणा साहबको व्याहसकते हैं इसपर चूंडाजीने खुशीसे यह अंगीकार किया जब महाराणाजीका विवाह होचुका तो कुछ अरसे पीछे उनके मोकलनामक पुत्र उत्पन्न हुआ, अंतमें महा-राणाके देहांतके समय उनकी स्त्री सती होने लगी तब उन्होंने चूंडाजीको कहलाया कि मैं तो सती होती हूं तुमने अपने भाई-को कौनसा परगना देना तजवीज किया है इसपर चूंडाजीने जवाब दिया कि मेरा भाई चित्तौडका राजा है यह कहकर उसे राज्यसिंहासनपर बिठलाया और अपनी विमाताको निवेदन किया कि आप भी सती न होकर भाईकी बालक अवस्थामें राज्यकार्य देखते रहें। इस पीछे चूंडाजी मेवाड छोडकर मांडू चले गये जो राठोड रिडमलजीका उपद्रव होनेपर महाराणा मोकलजीकी

माताके बुलानेसे पीछे चित्तौडमें आकर रिडमलजीको मारा था धन्य है राव चूंडाको जिसने राज्यका हकदार होकर भी अपनेको व अपनी संतानको सदाके लिये राज्यसे वंचित रख अपने वैमात्रेय छोटे भाईको राजा बनाया और स्वयं उनके सामने प्रजा होकर रहने लगे वे नर पिशाच जो राज्यके लोभसे पिताकोभी मारनेमें संकोच नहीं करते उनको इस इतिहाससे शिक्षा लेनी चाहिये । राव चूंडाका यह इतिहास स्वर्णाक्षरोंमें लिखने योग्य है ॥

गीत (१३)

चालंतो कोट पयंपे चूंडो,
ऐ पुरसादन तणा अपर ॥
रण मुडिये नांहीं जो आरण,
आगैं पाछैं मुडे अर ॥ १ ॥
तोने रंग जसो चीतोडा,
वांचै वेदतणों वयण ॥
रहजो आप जूझ पग रोपे,
पडे क पग छाडै भसण ॥ २ ॥
लोह पगार कहै लाखावत,
गैमर हैमर जेथ गुडै ॥
मुंह रावत जो आप न मुडिये,
मुडआवै कै भसण मुडै ॥ ३ ॥

[नोट–मंडोवरके रिडमलजीने जो चित्तौडपर कब्जाकर लिया था और चौंडेजीने मांडूसे अचानक आकर रिडमलजीको मार कर चित्तोडपर अधिकार किया. उस लडाईके विषयका यह काव्य है ॥

टीका–किल्लेपर चढाई करता हुआ चूंडा कहता है कि पराक्रमका यही अपार चिह्न है कि युद्धसे आप पीछा नहीं फिरे, शीघ्र अथवा विलंबसे शत्रुही मुडेगा ॥ १ ॥ हे चित्तौड पति ! तू धन्य है जो वेदका यह वचन पढता है कि युद्धमें अपनेको पैर रोपकर रहना चाहिये जिससे शत्रु यातो माराजावेगा या भगजावेगा ॥ २ ॥ लाखाका पुत्र उस युद्धमें जहां घोडे और हाथी मारे जाते हैं वहां यौंही कहताहै कि बहादुरको चाहिये कि पहिले खुद न भगे तो शत्रु यातो मुड जावेंगे या भग जावेंगे ॥

छप्पय ।

पत्र मंडि प्रच्छन्न दूत मंडू पठवायो । सुनि "चौंडा" सजि सेन, अद्ध रजनी गढ आयो ॥ करि हल्ला चढि कोट धस्यो, वीराधिवीर बल कुँवर जोध भजि कढिग, मारि लीन्हो नृप रनमल सुकलहिं पट्ट गद्दी अरपि, रहि तटस्थ जग जस लियउ । हिंदवान ! वत्त धारहु हृदय, करहु जेम चौंडा कियउ ॥

[महाकवि सूर्यमल्लजी "वंशभास्कर" ।]

टीका—चौंडाजीकी विमाता राठौडने पत्र लिखकर गुप्त रूपसे उनके पास मांडूमें भेजा कि जहां वे निवास करते थे। पत्र बांचतेही चौंडाजी कुछ सेना लेकर चित्तौड आये और अर्द्ध रात्रिके समय बडी वीरताके साथ दुर्गमें प्रवेश किया। और राठौड महाराज रनमलजीको वहांही परलोकवासी किये उस समय कुंवर जोधाजी भागकर निकल गये। पश्चात् चौंडाजीने अपने विमातृज (सौतेला) छोटे भाई मोकलजीको राजगद्दी पर बैठाये और स्वयं तटस्थ रहकर निरुपम यशके भागी हुए। हे आर्य जनों! इस पवित्र चरित्रपर ध्यान लाओ और चौंडाजीके सदृश सत्कार्योंमें प्रवृत्ति करो।

महाराणा श्रीमोकलजी।

महाराणा मोकलजी विक्रमी संवत् १४५४ में गद्दी विराजे, जहाजपुरके मुकाम पर फीरोजशाहके साथ इनका युद्ध हुआ जिसमें उसको पराजित होकर भागना पडा, यह फीरोजशाह नागोरवाला फीरोजखां मालूम होताहै, ये महाराणा विक्रमी संवत् १४९० महाराणा लाखाके पासवानिये पुत्र चाचा और मेराके हाथसे दगासे मारे गये॥

गीत (१४)

रणजीत कटक कै ऊपर राणा,
वाजंतै कै ऊपर वल्या॥
धर धरपती छत्र पत्र धजपत,
मोकल पावा आय मल्या॥ १॥

लेवाके थानक लाषावत,
घण समदाये सेन घणा ॥
चलणै तलक तुहालै चोहट,
मोकल सह मंडलीक तणा ॥ २ ॥
अन अन खंड तणां सह अधपत,
खलजे खपिया तूझ खग ॥
माथो जिये नमायो मोकल,
पाट वैसतै समो पग ॥ ३ ॥

टीका-हे महाराणा! यह विजय करनेवाली सेना किसके ऊपर चढती है और ये नगारे आज किसपर बजते हैं इस पृथ्वीपर तो जितने छोटे और वडे राजाहै वे सवतो तेरी शरणमेंही आगये हैं ॥ १ ॥ हे लाखाके पुत्र महाराणा! राजा तो सव तेरेही तिलक करनेसे चलतेहैं (राजा होतेहैं) फिर यह इतना वडा सेना समुदाय कौनसा राज्य विजय करनेके लिये तैयार किया जाताहै ॥ २ ॥ हे मोकल! आर्यावर्तके सिवाय अन्य खंडोंके राजा तो तेरी तलवारसे नष्ट होगये केवल वेही वचेहैं जिन्होंने गद्दी वैठते समय तेरे पैरोंमें शिर झुकालिया ॥ ३ ॥

गीत (१९)

ईपे देलंडी नासपुर नासै,
भटनेरो भडवायो॥

कलमां कालव ग्रहणे कोटां,
इंपे मोकल आयो ॥ १ ॥
मेवट कोटे राय मेलणो,
साहंण सेन सवायो ॥
लोदां तारं कहे लापावत,
ऊगे दीहत आयो ॥ २ ॥
संभर ससत डंडे डिडवाणो,
भट नर पडे भगाणा ॥
राणां तूझ भये रैयांणां,
थर हरिया सह थाणा ॥ ३ ॥

टीका-१ दिल्ली. आगे नगरोंके नाम हैं. २ मुसलमान. ३ घोडोंकी । ४ लोदी जातिके यवनोंका । ५ वंश । ६ मुसलमानोंके ॥

महाराणा श्रीकुंभा।

महाराणा कुंभा विक्रमी संवत् १४९० में गद्दी बैठे और संवत् १५२५ में अपने कुलकलंकी ज्येष्ठ पुत्र ऊदाके हाथसे मारेगये जो राज्यके लोभसे पिताको मारकर गद्दीपर बैठ गया। ये महाराणा वडे यशस्वी वीर विद्वान् और प्रतापी हुए जिन्होंने कुंभलगढ और आवूपर अचल गढ आदि स्थान वनवाये और मालवाके वादशाह मुहम्मद तुगलकको युद्धमें परा-

(१) यह गीत सरल है सो कठिन शब्दोंका अर्थ दे दिया है।

जित करके पकड लाये और छः महीनेतक कैद रखकर उससे कुछ दंड लेकर छोडा और इसका स्मारक चिह्न चित्तौडके किलेमें एक वडा कीर्तिस्तंभ वनवाया जो अवतक विद्यमान है, इसीतरह गुजरातके वादशाह कुतुबुद्दीनको भी इन महाराणाने युद्धमें पराजित किया, इत्यादिक अनेक वीरताके कार्य इन्होंने किये । सुना जाता है कि ये महाराणा संस्कृतके वडे विद्वान् थे ।

गीत (१६)

रण साले रूक केवियां राणा,
साझग लडत न सुणिया ॥
जइयो राम रुद्रायण जीहा,
भण तण पागल भणिया ॥ १ ॥
आनन रामराम सुण आणे,
अंतर आणै राम उर ॥
भोयँग मंडल लोह भणावण,
गोरिवै कुंभा भाणखुर ॥ २ ॥
गढ लियंत गहलोत भाणखुर,
सांइये सोगत पख सह ॥
बायां वलण अवलणा बाया,
गोविंद गोविंद साड गह ॥ ३ ॥

साधा विरो मयँक पह सुभ्रम,
मन अणवंछत तूझ मण ॥
कलम कुराण पाण तज कुंभा,
वांचण लागा हर बयण ॥ ६ ॥

चटँडा हाट हाट चुग लालां,
साट खड़ग ताय सोचरिया ॥
वहियो नहीं वे न तत वहिया,
अनत कह्यो ते ऊगरिया ॥ ७ ॥

टीका—हे राणा ! तुम्हारी तलवार युद्धमें १ शत्रुओंके सालती है इसलिये तुमसे लडता किसीको नहीं सुना । तुम्हारे विजयने शत्रुओंको अपनी जीभसे रामराम और २ शिव शिव रटाते रटाते पागल बनालिया ॥ १ ॥ उनके मुखसेभी राम रामही सुननेमें आता है और हृदयमें भी रामही रहता है नागलोकमें भी शस्त्र शिक्षा देनेमें हे ३ गौरीपति (शिव) रूप कुंभा ! तू बडा है ॥ २ ॥ ४ ईश्वरकी गति देखकर तेरा वचनोंका ५ बोलना पीछा नहीं फिरता ऐसा है इसलिये घमंडी और बलवान् भी गोविंद गोविंद करने लागये ॥३॥ हे कुलके धन्य ६ चन्द्रमा महाराणा कुंभा तेरे वडप्पनको अन्य राजा नहीं चाहते तथापि तेरा वडप्पन सबपर है जिस तेरे वडप्पनसे यवनलोग कुरानको छोडकर वेद पढने लागये ॥ ४ ॥ वे ७ जिह्वाके लोभी अर्थात् हिंसक यवन हाट हाटमें रत्न चुगते थे उनको

महाराणा कुंभाने तलवारके बदलेमें लेकर खालिये और वेद धर्म नहीं रहा वहांपर वे (यवन) भी शेष नहीं रहे केवल वेही बचे हैं जिन्होंने अनन्त (परमेश्वर) के नामका उच्चारण किया ॥

गीत (१७)

केकाण अरथ ऊतम कूंभकरन,
वसुधा ले अंता वह न ॥
कलह म मांग पयंपै केवी,
मांग अवर वित जिका मन ॥ १ ॥
अथ लै राण अभालै अधकी,
भोग वियाप तणा मन भाव ॥
भूपत येता भलपण भणतां,
भारत हूंकारा न भराव ॥ २ ॥
संपत लै मोकलसी संभ्रम,
धर संग्रह कर रीस धरो ॥
विण हँकणै संग्राम वैरहर,
कहै जिका बीजोस करो ॥ ३ ॥
साहण समँद सेन सीसोदा,
राणां तोसूं राय रिम ॥
अरथ वरीस करै सिर ऊपर,
कलह वरीस न करै किम ॥ ४ ॥

टीका-शत्रु कहते हैं कि हे कुंभकर्ण ! घोडा, धन, भूमि जो चाहे सो ले परंतु अंतको मत वह अर्थात् मारे मत और युद्ध करना मत मांग ॥ १ ॥ हे महाराणा ! विना भाला हाथमें लियेही बहुत धन लेले, और मन चाहीहुई भोगकी सामग्री भी लेलै, परन्तु हे पृथ्वीपति ! इतनीसी भलपन दिखा कि युद्धके लिये हँकारा मत भरा ॥ २ ॥ बहुतसा धन लेलै और भूमिभी लेकर संग्रह करले परन्तु कोप न कर, हे मोकलके पुत्र ! युद्धकी चढाई न कर जो तू कहेगा सोही करेंगे ॥ ३ ॥ हे घोडोंकी सेनाके समुद्र शीसोदिया कुंभा ! तुझको शत्रु राजा कहते हैं कि, मरतक पर धनका दान करताहै तो युद्धका दान क्यों नहीं करता ॥ ४ ॥

गीत (१८)

कळ हेवा पंक कूंभक्रन राणा,
जगत तणां गुर दुरंग जुळ
काढ्यां अचरज किसो कटारी;
काढ्या जिण पैंतीस कुळ ॥ १ ॥
सिवने विसम लगै सरताणा,
राव मेवाडो चढै रण ॥
वांक पडै क मंत्रै वाढाली,
जग त्रय पधारिया जण ॥ २ ॥

सुजेंडी मो कलसीहा सणोभ्रम,
ग्रहै वडा गढ डुरंग गंह ॥
जण वीनांडिया सु कम विसारै,
प्रथमी नवषंड तणां पह ॥ ३ ॥

करत नहीं राणा कुंभकन,
जो तूं वलवंत वाथ जम ॥
मानव देव दई मन मानत,
कलह कटारी तणों क्रम ॥ ४ ॥

आणी असह जडली आहव,
फूटती धोहमें फेर ॥
हुय तो कलह कुंभकन होये,
नतो असुर सुर नर अवर ॥ ५ ॥

टीका-हे राणा कुंभकर्ण ! १ युद्धमें ऐसेभी चूक होतेहैं कि जिनसे संसारके बडे गढ २ जुदे होजाया करतेहैं तो जिसने पैंतीस कुलोंको काढे (भगाये) उसके कटारीको काढने (निकालने) में क्या अचरजहै ॥ १ ॥ जिस समय मेवाडका राजा युद्धके लिये चढता है तो बादशाहोंको भी विषम लगने लगताहै, और वहांपर अपनी सेनापर झुकाव पडतेंही तीनों लोकोंके मनुष्योंको ३ सीधा बनादेनेवाली ४ कटारीमंत्रता है ॥ २ ॥ हे मोकलके पुत्र ! तुम्हारी ५ कटारीने बडे बडे वारोंके और गढोंके ६ घमंड हर लियेहैं । और तुम्हारी इस

कटारीने नवही खंडके राजाओंको ७ विनयी (नमस्कार करने-वाले) बना दियेहैं, सो वे तुम्हें क्योंकर भूल सकते हैं ॥ ३ ॥ हे यमराजकी भुजाओंके समान भुजावाले राणा कुंभकर्ण ! यदि तेरी सृष्टि नहीं होती तो मनुष्य और देवता आदि युद्धमें कटारीका क्रम क्योंकर जानते ॥ ४ ॥ तू युद्धमें किसीसे सहन नहीं हो सकनेवाली ८ कटारी लाया, सो भरे हुए पेटसे ९ ढाल फोडकर पार निकल गई, अतः युद्धमें ऐसा (बहादुर) कुंभा राणाही है और राक्षस देवता या मनुष्य आदि दूसरा ऐसा नहीं प्रतीत होता ॥ ५ ॥

सुना गया है कि नागोरमें यवनोंका बहुत बडा थाना था । वहांके यवन गौओंको मारते थे । इस कारण महाराणा कुंभाने चढाई करके उस थानेको काट डाला । उस पीछे एक दिन एकलिंगेश्वर महादेवके दर्शनार्थ गये । वहां एक गायने बैलके समान गर्जना की सो सुनकर महाराणा " कुंभलगढ " चले गये, और एक छप्पय छंदका चरण (कामधेनु तंडव करिय) कहा, और वारवार इसीको कहते रहे । इस तरह कई दिन निकल गये, पर कोई जवाब न दे सका, जिससे सब लोग घबरा गये, परन्तु उस समय वहां कोई चारण नहीं था जो इस भावको समझता क्योंकि ज्योतिषियोंने महाराणासे कह दिया था कि आपकी मृत्यु चारणके हाथसे होवेगी, इस कारण महाराणा कुंभाने सब चारणोंको मेवाडसे बाहर निकाल दिये

थे, परन्तु मेवाडके उमराओंमेंसे एक सरदारके यह नियम था कि, वे चारणका मुख देखे विना भोजन नहीं करते थे । इस कारण छिपे वेशमें उन्होंने एक चारणको अपने पास रख छोडा था । उसने उस सरदारसे कहा कि यदि मुझे ले चलो तो मैं महाराणा साहबका यह कहना छुडादूं । इसपर उस चारणको वे महाराणाके सन्मुख ले गये और उसने निम्न-लिखित छप्पय छंद बनाकर सुनाया । इसपर महाराणाने कहा कि, तू राजपूत नहीं है, कोई चारण प्रतीत होताहै परन्तु जो चाहै सो मांग मैं प्रसन्न हूं । इसपर उस असाधारण जाति-हितैषीने निवेदन किया कि आपने विना अपराध चारणोंको मेवाडके बाहर निकाल दिये हैं, उन सबको पीछे बुलाकर उनकी जीविका उन्हें देवें । तब उक्त महाराणाने उन सब चारणोंको पीछे बुलाकर उनकी जीविकाएं उन्हें प्रदान करदी । वह छप्पय यह है–

छप्पय (१९)

जद धर पर जोवती,
देख मन मांह डरंती ॥
गायेत्री संग्रहेण,
दस्ट नागोर धरंती ॥
सुर तेतीसूं कोट,
आण नीरंता चारो ॥

नह खावत नह चरत,
मने करती हहकारो ॥
कुंभेण राणा हणिया कलमं,
आजसं उर डर उत्तरिय ॥
तिण दीह द्वार संकर तणैं,
कामधेनु तंडवं कीरय ॥

टीका—जब पृथ्वीकी तरफ देखती तो मनमें डरती, १ गौओंका २ नाश होनेके कारण नागोरकी तरफ देखा करती, तेंतीस करोड देवता आकर घास डालते, पर न तो खाती और न चरती और मनमें ३ हाहाकार शब्द करती रहती परन्तु जब राणा कुंभाने ४ मुसलमानोंको मारडाला तब ५ आजसे उसका डर मिटगया, इस लिये उसदिन शंकरके द्वारपर आकर कामधेनुने ६ गर्जना की थी ॥

महाराणा उदय करणजी ।

उक्त महाराणा वि. सं. १५२५ में गद्दी बैठे, जिसके थोडे ही समय पीछे महाराणा कुंभाजीके कृपापात्र सरदार इनसे अप्रसन्न होगये जिनको दबानेके लिये उक्त महाराणाने सीरोहीके राजाको जो उस समय बहुत प्रबल होनेपर भी मेवाडके अधीन था, सहायता मिलनेकी आशासे स्वतंत्र कर दिया यह सब देख कर सरदारोंने इनके छोटे भाई रायमल जीको ईडरसे बुलालिया और उदय करणजीको शिकारके मिस

बाहर निकालकर किलेमें सं. १५३० में रायमलजीका कब्जा करा दिया। तब उदय करणजी ' मांडू ' चले गये और वहां उनपर बिजुली गिरी जिससे उनकी मृत्यु हुई लोग कहते हैं कि, यह उनको बापको मारनेका उचित दंड मिला था, सुना जाता है कि मेवाडकी पीढियोंमें पितृघातीका नाम नहीं लिखा जाता अतः संभव है कि इनका नाम भी मेवाडकी पीढियोंमें दर्ज न हो।

महाराणा श्रीरायमलजी।

ये महाराणा उदयकरणजीको भगाकर आप विक्रमी संवत् १५३० में गद्दी पर बैठे और बडे दानी और वीर हुए, इनका देहांत सं० १५६५ में हुआ।

गीत (२०)

चढे पूर पावस वंपै रायमल रण चढे,
नवो भाराथमें दीठ नमणा ॥
वहै बंनास तूं कायं रातै वरण,
जल अधक पूछियो गंग जमणा ॥ १ ॥
कोड भड कचारिया रायमल कोपिये,
जुडंण मोटा करै कुंभ जायो ॥
रलैतले रुधर रणभोम रहियो नहीं,
ऊपटे नदी जल मांह आयो ॥ २ ॥

त्रंजड मेवाड रायजीप मालवतणा,
तुरक दल रहचियाँ रायमलतीर ॥
असंर घडतोड ओहांल मुंह ऊतरे,
नदी नादियां मिले रातडो नीर ॥ ४ ॥

हुवे हींदू घडासेन हूंवे हुवे,
मूझ उपकंठ सगराम मातो ॥
घणो सीसोदिये वहे आई घडा,
रुधर घण मिले तण नीर रातो ॥ ४ ॥

टीका—इधरसे वर्षा ऋतु चडी और इधरसे मांडूके बाद॰ शाहसे युद्ध करनेके लिये महाराणा रायमलने १ वर्षा ऋतुमें चढाई की जिससे बनासका पानी लाल होगया इस कारण गंगा यमुना बनासको पूछती है कि तेरा रंग लाल क्यों होगया इस॰ का उत्तर बनास देती है २ नम्रहुई॰ ३ क्यों ॥१॥ महाराणा कुंभाके पुत्र रायमलने कोप करके बडे बडे ४ युद्ध करके करोडों बहादुरोंको काटडाला, वह लोहू ५ बहकर रणभूमिमें नहीं रहा और बढकर नदीके जलमें चला आया ॥ २ ॥ मेवाडके राजा रायमलने अपनी ६ तरवारसे मालवाके मुसलमानोंको मेरी तीरपर ७ काटा वह ८ रुधिर ९ छोटे नालोंमें उतर कर मुझमें आया इस कारण पानी लाल होगया है ॥ ३ ॥ १० दोनों सेना लडी और वह युद्ध मेरेही किनारेके ११ पास हुआ था, जिसमें सीसोदिया महाराणाने बहुत १२ रुधिर बहाया, सो वह रुधिर मुझमें मिलकर मेरा पानी लाल होगया ॥

गीत (२१)

कर वाते मूंछ कहौ की ऊपर,
ठाकर वोरां वाद ठहै ॥
राजकुलां पैंतीस रायमल,
करवा ओलग मेल कहै ॥ १ ॥

कनक तुरी डंड लै कुंभावत,
रायां माल मकेर मन रीस ॥
मंडलवै मेवाड नरेसुर,
पाय विलगा कुल पैंतीस ॥ २ ॥

वल परहरै वना वध वोले,
सनंस असा राखै धरसूत ॥
राण तुहाली पोल रायमल,
राजधणी सेवै रजपूत ॥ ३ ॥

टीका—जो १ अप्रगल्भ (चतुर नहीं) राजा हैं वे ही रायमलसे हठ करते हैं शेष क्षत्रियोंके पैंतीस ही कुल रायमलके साथ संधि करना स्मरण किया करते हैं ॥ १ ॥ हे कुंभाके पुत्र रायमल ! सोना घोडे आदि जो चाहै सो ले, परन्तु मनमें क्रोध २ मत कर. हे मंडलेश्वर मेवाडके राजा ! शेष पैंतीस ही क्षत्रियोंके कुल तेरे पैरों लग गयेहैं ॥ २ ॥ वे राजा लोग वलका दर्प छोड बैठे जो कि वढकर वचन बोलने वालेहैं । हे

राणा रायमाल ! राज्योंके अधिपति राजपूत आपका द्वार सेवन करते हैं। और २ लज्जा रेखते हैं (लज्जित होते हैं)॥४॥

महाराणा श्रीरायमल्लजीके ज्येष्ठ पुत्र उडणा प्रथीराजजी।

ये वहुत वार यशस्वी और प्रतापी हुए हैं। लल्ला नामक पठानने सालंखियोंसे 'टोडा' छीन लिया था, तब सोलंखी चित्तौड जाकर अरजाऊ हुए इसपर कुंवर प्रथीराजजी अकस्मात् टोडे जा पहुंचे और टोडा विजय करके सोलंखियोंको दे दिया। इस अचानक पहुंचजानेसे लोगोंको यह मालूम न होसका कि ये इतने शीघ्र क्योंकर पहुंच गये अतः उसी दिनसे यह उडणा प्रथीराजजी कहलाने लगे। इनका वृत्तान्त "वंशभास्कर" में भी लिखा है।

गीत (२२)

टूंड चढे प्रथीमल भांजे टोडो,
लला तणैं सर धारे लोह॥
वाये वाय नली जिम वाजै,
अ्रध मणधर जण आवे मोह॥ १॥
कूंभाहरै लडे खल कीधा,
मेतलवे नह तास सुणै॥

पवन झणंके सब रस परसै,
सत्रां सगहस नाम सुणै ॥ २ ॥
माल संभ्रम रहचे मीरवचा,
कर पै जूयल खंड किया ॥
अनल भरेण वाजती आठी,
हरण भुयंगम दिये हिया ॥ ३ ॥
कलमां चरण सार का चारिया,
सीसोदै नर भर समर ॥
कुरँग उरँग राता किण कारण,
हाड बाजतै नाद हर ॥ ४ ॥

टीका— लल्ला पठाण पर शस्त्र धारण करके कुंवर पृथ्वी-राजने सेनाके मुखपर चढकर टोडाको भाजा (तोडा) उस युद्धमें यवनोंकी नलियों (पैरोंकी हड्डियों) में पवन भर कर वे पूंगीके समान बजने लगीं जिससे मणिधारी सर्पोंको मोह होगया ॥ १ ॥ कुंभा राणाके पौत्रने लडकर उन दुष्ट यवनों-को भून डाले सो वे बोल नहीं सकते ॥ २ ॥ उस दूसरे राय-मलने यवनोंको काटकर हाथ पैर जुदे जुदे करदिये, जिनमें पवन भरकर आठ छिद्रोंवाली (पुंगी) की तरँहँ बजने लगी जिसपर हरिण और सर्पोंका चित्त जाने लगा ॥ ३ ॥ उस युद्धमें शीसोदिया कुँवर पृथ्वीराजने तरवारसे यवनोंके चरण काट डाले, जिनकी हड्डियोंके बजनेसे हरिण और सर्प प्रीति युक्त होगये ॥ ४ ॥

गीत (२३)

पारसमें भीत वडे पाहूणै,
मद विपरीत महा रिण माह ॥
पडियालग नामियो पीथल,
पीथो सेन तणै पतसाह ॥ १ ॥

भालां तणौ पाणंगो भारी,
कुंभ कलोधर जतैं कियो ॥
तण अं्हार वेवेलां तोडे,
गोरी सेन अचेत गियो ॥ २ ॥

पीथा जतैं तोड पवराचे,
आंणे मुंह धकतो ऐराकं ॥
असपत सेन न सकियो ऊठे,
छावा सींघ तुहालीछाक ॥ ३ ॥

प्रथीराज अर गंह पतसाही,
भुजलग धार अणी भाराथं ॥
साथ न हूंतो जिके सिकंदार,
सूरह जापियो लहा साथ ॥ ४ ॥

टीका-कुमार पृथ्वीराजने पारसमें प्रीति करनेवाले बडे पाहुने (लल्ला पठान) को उस बडे युद्धमें तलवारसे नमाकर विपरीत मद्य पिलाया और बादशाह (लल्ला) की सेनाने पीया ॥ १ ॥ महाराणा कुंभाकी कलाको धारण करनेवाले कुमार पृथ्वीराजने उस युद्धमें भालोंकी १ पानगोष्ठी (मतवाल) की जिसे अपने २ दुहरे ३ बंधन तोडकर (असावधानीसे) गोरीकी सेना अचेत होकर भगगई (यहां गोर नगरका रहनेवाला होनेके कारण लल्लाको गोरि कहाहै) ॥ २ ॥ कुमार पृथ्वीराजने जलता हुआ (बहुततेज) ४ मद्य बादशाहकी सेनाके मुहके लगाकर पिलाया सो हे सिंहके बच्चे ! (पृथ्वीराज) तेरी उस छाकसे बादशाही सेना उठ न सकी ॥ ३ ॥ कुमार पृथ्वीराजने उस ५ युद्धमें तलवार धारण करके उसकी नोकसे बादशाह शत्रुका ६ गर्व मिटा दिया. इस युद्धमें सिकंदर लल्लाके साथ नहीं था इसीलिये वीर माना गया । यदि वहभी विद्यमान होता और पृथ्वीराजसे युद्ध करता तो उसकाभी यह ही हाल होता जो लल्लाका हुआ ॥ ४ ॥

इसी युद्धके विषयमें ये नीचे लिखीहुई दो प्राचीन तुकें भी कहावतके तौर पर प्रसिद्ध हैं ।

भाग लल्ला ! पृथ्वीराज आयो ।
सिंहकै साँथरै स्याल व्यायो ॥

अर्थ-हे लल्ला ! पृथ्वीराज आया, भग, सिंहकी गुफामें गीदडने बच्चा दिया है सो कैसे रहेगा, भगजा ॥

महाराणा श्रीसंग्रामसिंहजी बडे (सांगाजी)

ये महाराणा विक्रमी संवत् १५६५ में गद्दी विराजे और बडे वीर और यशस्वी हुए। इनके समयमें मालवा और गुजरातके बादशाह बहुत बलवान् थे, जिन्होंने कई बार सांगाजीसे युद्ध किया पर हर लडाईमें उन्हें हारकर भागनाही पडा निदान एक बार दोनोंने शामिल होकर महाराणा पर चढाई की परन्तु उसमेंभी दोनों बादशाहोंको ही भागना पडा।

संवत् १५७४ में इन महाराणाने मांडूके बादशाह महमूदको कैद करके उसका जडाऊ ताज और कमर पटा लेकर उसको कैदसे छोड दिया, और कृपा करके उसको मांडूका राज्य पीछा देदिया, तथा इसी विजयकी खुशीमें केसरिया शाखाके चारण हरिदासको संपूर्ण चित्तौडका राज्य देदिया। परन्तु हरिदासजीने राज्य प्रबन्धमें कठिनता विचार कर पुनः राज्य शासन अपने स्वामीकेही अधीन कर दिया।

संवत् १५८४ में महाराणा सांगाजीका बादशाह बाबरके साथ युद्ध हुआ जिसमें बादशाहको जब यह निश्चय होगया कि महाराणाका बल अधिकहै तो उसने बयाने तकका देश उन्हें देकर संधि करलेनी चाही, और कुछ कर देनाभी स्वीकार करलिया और इस संधिकी शर्तें सलहदी तंवरकी मारफत महाराणाके सामने पेश की परन्तु महाराणाको तो यवनोंको

भारतवर्षसे निकाल देनाही मंजूर था इस कारण संधि करनेसे उन्होंने इनकार किया। तब सलहदी तंवर अपनी मारफत की हुई बातचीतको महाराणाके नामंजूर करनेसे अप्रसन्न होकर ठीक युद्धके समय पैंतसि हजार सवारोंसहित बादशाहकी फौजमें जा मिला। इससे तो महाराणाको कोई हानि नहीं हुई, परन्तु इस युद्धमें महाराणाके ललाटमें एक बडे वेगका तीर लगा जिससे महाराणा मूर्छित हो गये। तब कई राजा उनको शिविकारूढ कराके (पालखीमें डालकर) युद्धसे ले भागे। और पीछेसे सादडीका राजा अज्जा झाला छत्र चंवर लगाकर महाराणाके हाथीपर सवार होकर युद्ध करके वीरतासे काम आया। (उसही दिनसे सादडीवालेपर छत्र चमर होते हैं) इधर बसवानामक ग्राममें आनेपर कि, जो वर्तमान समयमें जयपुरके राज्यमें है महाराणाकी मूर्छा खुली, तब उन्होंने पूछा कि विजय किसकी हुई इसपर साथवालोंने सब हाल निवेदन किया। सो सुनकर महाराणा सांगाजीको अत्यन्त खेद हुआ, और आज्ञा की कि, मुझे युद्ध क्षेत्रसे क्यों उठालाये इससे तो मुझपर भगनेका कलंक लगगया। इस कारण मैं यहीं रहकर सेना एकत्र करके बाबरको पराजित कर चित्तौड जाऊंगा। इस बात पर सोदा बारहठ जमणाजीने एक गीत सुनाया. जो इनके काव्योंके अन्तमें लिखा है। फिर महाराणाके अधर्मी सेवकोंने उनको विष देकर मारडाला ऐसी प्रसिद्धि है सुना जाता है कि इन महाराणाके देहान्तके विषयमें बाबर अपनी तुजक बाबरीमें यों लिखता है कि मैंने चंदेरी फतहकी तब महाराणा सांगा बहुत बडी फौज लेकर दुबारा मेरे पर आता था सो रास्तेमें दफैतन मरगया।

इन महाराणाका देहान्त विक्रमी संवत् १५८४ में हुआ, इनके समयमें राजपूतानेके कितने हीभागमें मेवाडका अधिकार विशेष होगया था और गवालियर, चंदेरी, काल्पी आदिके राजाओंने भी मेवाडकी अधीनता स्वीकार करली थी॥ अमरकाव्यमें इनका देहान्त काल्पीमें होना लिखा है, सो भी बाबरके लेखसे मिलता है।

गीत (२४)

मलो राण सगराम इम अधडंची मुख भणे,
दुजडेहत दससहँस बोल दीधो ॥
पदमहत मयँकचो ग्रहण है अबपहर,
कलमचो ग्रहण दिन तीस कीधो ॥ १ ॥
हठी रणखेत सगराम कुंभाहरे,
घडां दाणव तणी सझे रण घाय ॥
त्रणो तो सूर ससि ग्रहणहै दुयघडी,
पष उभै सरब गल कीध पतसाय ॥ २ ॥
पलँचिया धरा पागां ग्रहे पैंगरै,
असुरची अरथकै वर अथांणो ॥
मेल्हतो छांडतो वडा पोह मालवी,
रूक साराहियो राव राणो ॥ ३ ॥

मिले संगराम संगराम जुध मसलियो,
त्रजड बल पान पंधार तूटो ॥
ग्रास भंडार सपतंग लै सरबगल,
छोडियां साह महमंद छूटो ॥ ४ ॥

टीका–१ शत्रु अपने मुखसे यह प्रशंसा करते हैं कि २ वीर महाराणा संग्रामसिंहका खड्ग अच्छा डोव दिया हुआ है। सूर्य और चंद्रमाका ग्रहण तो आधे प्रहर तक होता है परन्तु महाराणाने यवनोंका ग्रहण तीस दिन तक किया ॥ १ ॥ कुंभाके पोते हठी संग्रामसिंहने दानवरूपी यवनोंकी ३ सेनासे युद्ध किया जिसमें सूर्य चंद्रका ग्रहण तो दोही घडी होता है पर महाराणाने बादशाहका एक महीने तक पूरा ग्रहण कर लिया ॥ २ ॥ ९ घोडोंके मुंह आगे असुररूपी यवनोंके ४ टुकडे टुकडे करके पृथ्वीके लिये उनका अचार करडाला और मालवाके बादशाहको पकडकर छोड दिया, जिससे उस महाराणाकी तरवारकी संबने प्रशंसा की ॥ ३ ॥ संग्रामसिंहने युद्धमें मिलकर बादशाहका मर्दन किया, और तरवारके बलसे खंधारके खानको तोडकर भंडारके सहित राज्यके सात अंग लिये पीछे उस पूर्ण ग्रास कियेहुए मुहम्मदशाहको कैदसे छोडा ॥ ४ ॥

गीत (२९)

साहां राव ग्रह मेल्हियो सांगे,
नियम न जोवै नहीं नियाव ॥

अमर उकेकेल करो एकरां,
बोहो नामी जंपै वलराय ॥ १ ॥
वल पायाले चलवियो बोलै,
जुग वोलियो घणा दिन जाय ॥
मांडव राव मुक्यो मेवाडै,
केसव मूझ न मुकहो काय ॥ २ ॥
सेनापती मोहियो साहे,
थाये साझे मेछ घणा ॥
मोटाईह करै मेवाडो,
निसहर जंपै नारयणा ॥ ३ ॥
महदातार पयंपै माहव,
बोल किसो ऊचरां वियो ॥
ग्रहियां पछैं उग्रहणो गोविंद,
कीजो जिम सगराम कियो ॥ ४ ॥

टीका-भगवान् वामनजीके बन्धनमें पाताल वास करनेवाला राजा २ वलि बहुत नम्र होकर 'जंपै' अर्थात् कहता है कि हे अमर ! (भगवन्) महाराणा सांगाने बादशाहको कैद करके छोड दिया, और अपनी जगहपर बैठा दिया । किसी नियम और न्यायका विचार नहीं किया ॥ सो आपभी मुझे १ मुक्त करो ॥ १ ॥ २ पातालमें चलाहुआ अर्थात् रहने-

बाला बलि कहताहै कि हे केशव ! मैंने बहुत दिनोंसे आपके बन्धनमें रहकर युग पूरा करदिया । मेवाडके राजा सांगाने मांडूके पातसाहको कैद करके पीछा ४ छोड दिया, अब आपभी मुझेभी क्यों नहीं छोडोगे ॥ २ ॥ बलि नारायणसे कहताहै कि सहस्रों शस्त्रधारी म्लेच्छोंको मारडाले और सेनाका दर्प रखणेवाले पातसाहको पकड लिया । तथा पीछे भी उसके साथ मोटाई अर्थात् बडापन कर उसको छोड दिया ॥ ३ ॥ मही (पृथ्वीका) दातार राजा बलि माधव (भगवान्) से प्रार्थना करताहै कि हे गोविन्द ! दूसरा वचन क्या बोलूं मेरी तो यह ही विनती है कि जैसे महाराणा संग्रामसिंहने ग्रहण करके पातसाहको मुक्त करादिया वैसेही आप मेराभी बन्धनसे उग्रहण (छोडना) करो अर्थात् मुझेभी मोक्ष देवो ॥ ४ ॥

गीत (२६)

पंडां लप मेर पैवे घूमांणो,
  रोसारुण रीसाणो राण ॥
सांगो बंध त्रिया नह साहे,
  सांगो बँध साहै सुरताण ॥ १ ॥

रोहणियाल सझे रायांगुर,
  घाये असुर उतारै घाण ॥
अबला बाल न धारै आडी,
  घूदालम घातै घूंमाण ॥ २ ॥

साझे मेछ सुजंड जस धारिये,
कलकल कोप किये कमलँ ॥
गालाचंध महर्ल नह घातै,
गुणं घातै पतसाह गल ॥ ३ ॥
असंधर गहे कलँम किय आवट,
बढतै घडा कँवारी वंद ॥
मेछांतणों प्रवाडो मोटो,
नवषंड हुवो राण नरियंद ॥ ४ ॥

टीका—नवों खंडोंमें महाराणाका यश १ चमकता है अर्थात् प्रकाशमान हो रहाहै कि २ खुमानसिंहके वंशवाला महाराणा सांगा रोषारुण हो स्त्रियों (कायरों) को बांधकर नहीं पकडता वह बादशाहोंको बांधकर पकडनेवाला है ॥ १ ॥ ३ शत्रुकी प्रबल सेनाओंको रोकनेवाला ४ राजाओंका राजा (वीर) खूमाण स्त्रियोंको और बालकोंको नहीं पकडता किन्तु ५ राजाओंपर घात करता है ॥ २ ॥ यशस्वी राणाने कोपकर ६ माला सजा जिससे म्लेच्छोंके ७ मस्तक कलकल करादिये अर्थात् छिन्न भिन्न करडाले। यह राणा ८ महिलाओंका (स्त्रियोंका) बन्धन नहीं करता है किन्तु बादशाहके गलेमें ९ धनुषकी प्रत्यञ्चा अर्थात् रस्सीको डालता है ॥ ३ ॥ कंवारी सेनाके सामने १० खड्ग लेकर महाराणा बढा और ११ यवनोंका नाश करडाला। हे राणा ! यह म्लेच्छोंका युद्ध नवों खण्डोंमें बडा नामी हुआ ॥ ४ ॥

गीत (२७)

मोज समँद मालवत महावल,
अचड वियां न हुवै ए आज ॥
मांडव गढ गुज्जर ग्रह मूके,
रेणवां दीध चत्रगढ राज ॥ १ ॥
मोकलहरा अथाप मामलां,
पोरस थिनो षत्रीवट पाण ॥
षितपुर तषत साहरा पोसे,
दीधा तैं पातां दीवाण ॥ २ ॥
सांगा ग्रह मोषण सुरताणां,
कूंभाहरा जोड करतार ॥
किय हरिदास राण केहरियो,
अवियां छत्र चमर बडवार ॥ ३ ॥
तूं हंमीर सारीसो त्यागी,
बर उमिया दीधो सु बर ॥
जुग चहुंवै वातां जग जोडो,
आहाडा रहसी अमर ॥ ४ ॥

['केसरिया' चारण हरिदासजी कृत]

[नोट—महाराणा सांगा जैसे वीर थे, वैसेही वदान्य (दानी) भी थे । इन्होंने केसरिया शाखाके चारण हरिदासजीको चित्तौडका राज्य दान करदिया था । जिस पर हरिदासजीने एक तो यह, और दूसरा ' धन सांगा हात ' इत्यादि गीत (जो कि इस गीतके आगेही लिखा गयाहै,) बनाकर महाराणाके यशको चिरस्थायी करदिया ।]

टीका—हे रीझके समुद्र ! रायमलके पुत्र ! महाबल ! आज ऐसी वातें दूसरोंसे नहीं हो सकती तैंने मांडूगढ और गुजरातके बादशाहोंको पकडकर छोड दिये और चित्तोड जैसा राज्य चारणोंको देदिया ॥ १ ॥ हे झगडोंसे नहीं तृप्त होनेवाले मोकलके पौत्र ! तेरे पौरुष और क्षत्रियत्वके अभिमानको धन्यहै, हे दीवान ! तैंने बादशाहोंकी भूमि, नगर और सिंहासन खोसकर चारणोंको देदिये ॥ २ ॥ हे महाराणा कुंभाके पोते ! बादशाहोंको पकडकर छोडनेवाले महाराणा संग्रामसिंह! तैंने मुझ हरिदास नामक केसरिया चारणको छत्र चमर देकर राणा बनादिया जिससे तू कर्ता (परमेश्वर) के समानहै ॥३॥ हे महाराणा ! तू हमी सरीखा दातार है और पार्वतीके पति (शिव) ने तुझे वर दियाहै इसलिये हे अहाडा ! चारोंही युगोंमें तेरी दोनों वातें जगतमें अमर रहेंगी ॥ ४ ॥

गीत (२८)

धन सांगा हात हमीर कलोधर,
गौरीवे मोषण ग्रहण ॥

गढ आपिया नको गढ पतियां,
तो ज्यूंही रायमाल तण ॥ १ ॥
दे गज गाम कोड हैंवर द्रव,
अधपत दत चतचै उनमान ॥
सिंहासण छत्र चमर सहेतो,
दूजे किणी न दीधो दान ॥ २ ॥
रजवट रीझ षीज धन राणा,
लड ग्रह सुर सुरताण लिया ॥
षित चित्रकोट कव्या षूमाणा
दिग विजई तैं रींझ दिया ॥ ३ ॥
सवलां सांड निवल साधारण,
अवजै तू सांगा वर वीर ॥
किवराणा कीधा कैलपुरा,
हिंदवाणा रिव विया हमीर ॥ ४ ॥

[केसरिया शाखाके चारण हरिदासजी कृत)

टीका—हे हम्मीरकी कलाको धारण करनेवाले गोर-वंशके पतिको पकड कर छोडनेवाले महाराणा सांगा ! तेरे हाथोंको धन्य है, हे रायमल्लके पुत्र ! तेरे समान अन्य किसी राजाने गढ नहीं दिये ॥ १ ॥ हे राजा ! अपने चित्तके

अनुमान पूर्वक हाथी गाम और करोडों घोडे देकर सिंहासन, छत्र तथा चमर सहित जो दान आपने दिया है, वैसा अन्य किसीने नहीं दिया ॥ २ ॥ हे राणा ! आपका रजोगुण युक्त दान और क्रोध धन्य है, कि आपने बादशाहसे युद्धकरके उसको १ तीनवार पकड लिया, और हे खुम्माणवंशी दिग्विजयी आपने चित्तौडका राज्य कवियोंको प्रदान कर दिया ॥ ३ ॥ हे वीरवर महाराणा सांगा! आप बलवानोंके लिये बलवान् और निर्बलोंके लिये साधारण (बल नहीं करनेवाले) कहलाते हैं, हे कैलपुरा? हिन्दुओंके सूर्य दूसरे हम्मीरसिंह ! आपने चित्तौडका राज्य देकर कवियोंको राणा बना दिये ॥ ४ ॥

गीत (२९)

अवसाण नमो सांगा अटपायत,
माण पाण धन पंचसुंप ॥
जडै जितूं सुरताण जँजीरां,
राण तमासा तणी रुप ॥ १ ॥
सूरांगुर रायमाल समोभ्रम,
वर सिव सगत तणैं वीराण ॥
सांकल वेल जडै सुरताणां,
पेल ज्युंही डारणें घूमाण ॥ २ ॥

सूरत झोक त्रलोक सराहै,
बीजल झोक दियंतां वाह ॥
अटकै लड लंगर असपतियां,
रामतियां ज्यूंही रिमराँह ॥ ३ ॥
सझबो सेल वाहिबो असमर,
धूशटबो अर नयंर धरा ॥
साहां पकड छोडवो सांगा,
हांसा पेल्ह हमीर हरा ॥ ४ ॥

टीका-हे १ शिवके समान २ वीर सांगा ! तेरे बडप्पन वीरता और ऐश्वर्यको नमस्कार है तू ३ बादशाहको जो जंजीरोंसे जकडताहै सो मानो तेरे लिये एक खेलहै ॥ १ ॥ हे रायमलजीके ४ समान, वीर पुमाणसिंहके वंशवाले सांगा राणा ! भगवान् शिव और शक्ति अर्थात् भगवती दुर्गाकी कृपासे तैंने सुलतानको जो पकडकर कैदकर रक्खा है सो तेरे लिये सचमुच यह खेलही है ॥ २ ॥ तेरी सूरतके झोकेकी तीनों लोक प्रशंसा करतेहैं, और तेरी ६ तलवारके झोकेपर वाह वाह देते हैं, तैंने बादशाहको पकडकर उसके बेडी डाल रक्खी है, सो ७ शत्रुओंको पकडकर कैद करना तो तेरे लिये खिलवाड है ॥३॥ हे महाराणा सांगा भाला (बरछा) संभालना, ८ तलवार चलाना और शत्रुओंके ९ नगरोंको १० जलाना और बादशाहोंको पकड पकड कर छोड देना तो तेरे लिये हंसी खेलही है ॥४॥

गीत (३०)

महँमंद नें सांगण वावां मिलया,
दीपंग कौतक दीठा ॥
माडव मदन रुदन ज्यों मसवण,
मणधर हुवा मर्जीठा ॥ १ ॥
सांगण सूर तणें सुर सापी,
तूठो वाथां सुजेंड तण ॥
कांला गोप वीत्रियां काजल,
गह्या रतंवर नाग रण ॥ २ ॥
चीवडियां रसग्रामँ विहंडे,
दलिया काजल रेण दवी ॥
जाझंण कोणं धरत मझ झूलै,
नवकुल कीधी गांत नवी ॥ ३ ॥
पेरहँडरूप पदमहन पेपे,
कुंभकलोधर जुद्ध किया ॥
धवलागिर आंसुये धूंधला,
तुरकां रुधर भुयंग तिया ॥ ४ ॥
रोद रहेंचिया सांगण राणें,
कलमां रोजा थया क्रिम ॥

आँप तणें जल नदी ऊपटी,

ओरँग मुरँगा थया इम ॥ ५ ॥

टीका–मांडूका१ बादशाह मुहम्मद और सांगा युद्धमें वाघो मिले, जहां २ प्रत्यक्ष यह कौतुक देखनेमें आया कि यवनोंकी ३ स्त्रियोंके आंसुओंसे और यवनोंके रुधिरसे पातालके सर्प लाल होगये ॥ १ ॥ हे सांगा तू ५ माला बढाकर ४ शब्दोंसे प्रसन्न हुआ उसका सूर्य साक्षी है, तेरे उस युद्धमें वीबियोंके काजल और यवनोंके रुधिरसे नागराज (सर्प) लाल रंगके होगये ॥ ३ ॥ ६ यवनोंकी स्त्रियोंके शृङ्गार रसके ७ समूहको (यवनोंको) तैंने काटडाला, जिससे उनके रुदनसे काजल बहकर जमीनपर ठहर गया, और उसमें ८ बहुत ९ रुधिर मिलगया जिसमें झूलनेसे नवकुली नागोंमें तैंने नवीन रीति कर दी ॥ २ ॥ हे महाराणा कुंभाकी कलाको धारण करनेवाले महाराणा सांगा ! तैंने जो युद्धमें १० शत्रुओंको कटेहुए रूपवाले (कान्तिहीन) देखे उस समय यवनोंकी स्त्रियोंके आंसुओंसे धवलगिरी तो धुंधला होगया और यवनोंके रुधिरसे सर्प लाल पडगये (अध्याहार है) ॥ ४ ॥ महाराणा सांगाने यवनोंको बडी भयंकर रीतिसे ११ काटडाला, जिससे यवनोंकी स्त्रियोंके आँखोंसे आंसुओंकी नदी वहा जिससे बिना रंगवाले और बुरे रंगवाले थे सो श्रेष्ठ रंगवाले होगये ॥ ५ ॥

गीत (३१)

इब्राहिम पूरब दिसा न उलटै,
पछम मुदाफर न दै पयाण ॥
दषणी महमदसाह न दौडै,
सांगो दामण त्रहुं सुरताण ॥ १ ॥

साह येक दस येक न साझै,
विदस न साझै हेक वण ॥
सुजसै राण रायमल सम्रम,
त्रेपलिया पतसाह त्रण ॥ २ ॥

सांई सूरो गमण न साझै,
लीह नका लोपवै लग ॥
वापाहरै वला क्रम वांधा,
पतसाहां त्रहुं तणा पग ॥ ३ ॥

टीका-इब्राहिम पूर्वमें नहीं वढ सकता, मुदाफर पश्चिमको नहीं आसकता, और मुहम्मदशाह दक्षिणमें नहीं वढ सकता इस तरह महाराणा सांगा तीनों वादशाहोंके लिये पगबंधन रूप होरहाहै ॥ १ ॥ एक वादशाह दूसरेकी सहायता नहीं कर सकता, और दूसरी दिशामेंभी एक अन्यका साझा नहीं कर सकते, सो महाराणा रायमल्लसरीखे महाराणा सांगाने तीनां वादशाहोंको रोक दिये हैं ॥ २ ॥ इसलिये स्वामी वनकर

और वीर डाकर चल नहीं सकते, और जो सीमा बांध दी है उसे लोप कर नहीं सकते। वापाके वंशवाले सांगा राणाने अपने बलसे क्रमपूर्वक तीनों बादशाहोंके पैर बांध दिये हैं ॥ ३ ॥

गीत (३२)

मेले दल सबल कलाधर मोकल,
नाम सहे सुरताणा नाद ॥
ईडर थको मजीत उथापे,
पै ईडर थापिया प्रसाद ॥ १ ॥
सांवल सहर ऊजलो सांगा,
काट कलम दल तूं जकियो ॥
रिध तिण पीर पूज ज्यो राणो,
थिर तिण हींदूकार थियो ॥ २ ॥
ऊलालिया चढाये अणिये,
रोद ज तैं मेवाडा राण ॥
कलम कुराण बांग तज कहवा,
पोहोवें तण बांचवे पुराण ॥ ३ ॥
हींदूकार तणा हलकारे,
घणों कटक बँध मेल घणां ॥
इडर चले वेद इसराया,
ताडे दल सुरताण तणां ॥ ४ ॥

टीका–हे मोकलकी कलाको धारण करनेवाले बलवान् महाराणा सांगा ! तू अपनी फौज भेजकर बादशाहोंको नमा कर उनका शब्द सुनता है, और ईडरकी मसजिदको गिराकर वहांपर तैंने १ मन्दिर बनवा दिया है ॥ १ ॥ यवनोंके दलको काटकर तैंने सांवलानामक शहरको उज्ज्वल कर दिया, और जहांपर पीरोंकी पूजा होती थी वहां हिंदुओंके कार्य होने लगे ॥ २ ॥ हे मेवाडके पति ! तुमने २ भालोंके अग्रभागोंपर चढा॰ कर यवनोंको गिरादिये और वे लोग कुरान पढना और बांग (अजां) देना छोड कर ३ प्रभात समयमें पुराण बांचने लग गये ॥ ३ ॥ इस तरह तुमने अपनी वडी सेना भेजकर ईडर॰ मेंसे बादशाहकी सेनाको निकाल दी, जहां पीछे हिन्दुओंके कार्य होने लगे और वेदोंका उद्धार होगया ॥ ४ ॥

गीत (३३)

असमेध अजामेध हुवा आँग,
  वणूं सुणे नरमेध घणो ॥
आहाडा कर नवो ऊपनो,
  ताई अरथग ज्यांग तणो ॥ १ ॥
सुर नर असुरे किणी न सुणियो,
  बापारै सांगै कज बोम ॥
चोथो ज्याग कियो चीतोडै,
  हवै हुवा सालरंचर होम ॥ २ ॥

देवा कीध न कीधा दांणव,
सांगै जे निरमे सुकर ॥
हसंत ज्याग जग प्रसध होमतां,
हुवा विधाता हेक हर ॥ ३ ॥
पुन फल ग्रहे ग्रहे फल पोरस,
मालतणी पहरे जसमाल ॥
करी कैलपुर कलह नवी कथ,
घड़ियो जंग न घडे घोंदाल ॥ ४ ॥

टीका–अश्वमेध और अजामेध यज्ञ तो पहिले सुने हैं और नरमेध भी कई वार सुनाहै, परन्तु महाराणाके हाथसे शत्रुओं-को होम करनेके अर्थ एक चौथे १ यज्ञकी सृष्टि हुई है ॥ १ ॥ महारावल बापाके वंशवाले महाराणा सांगाने जो कार्य कियाहै वह देवता, मनुष्य, वा असुर आदि किसीको करते नहीं सुना अर्थात् इस चित्तौडपतिने चौथे प्रकारका यज्ञ किया, जिसमें उसने २ सालर वृक्षके खानेवालों (हाथियों) का होम किया ॥ २ ॥ सांगाने जो अपने हाथसे कार्य किया, वह न तो देवताओंने किया और न दानवोंने किया जिसमें उसने जगत्प्र-सिद्ध ३ हाथियोंका होम किया । इस कारण महाराणा भी ब्रह्मा और शिव रूप होगया ॥ ३ ॥ अपने पुण्य और पराक्रम-के फलसे ४ यज्ञमें ९ हाथियोंका होम करके कैलपुरा महाराणा सांगाने युद्धमें नयी कथा उत्पन्न की, और यशकी माला धारण की ॥ ४ ॥

गीत (३४)

पडै चुंब दीली सहर सोर मांडुव पडै,
सुपह उज्जेण लग थाह साजै ॥
बार पतसाहचे हाथियां बाँधिया,
बार पतसाहसुं न साम वाजै ॥ १ ॥
कटक बध सझै चीतोडपह कलहतै,
वडा राणां तणां विरद वहिया ॥
गैमरां तके सुरताणरा ग्राहजै,
गैमरां धणी सगराम गहिया ॥ २ ॥
सार अंकुस सहे मालवत समर भर,
मलै चांपानयर ढीलडी माण ॥
पडगवल पांगिया किता पेताहरै,
सींधुरां ल्हसकरां सहत सुरताण ॥ ३ ॥

टीका–दिल्ली और मांडूमें कोलाहल मचरहा है, और इधर उज्जैन तकका थाह लेताहै, बादशाहके हाथी पकडकर अपने द्वारपर बांध रक्खे हैं परन्तु बादशाहसे जाकर मिलाप नहीं करता ॥ १ ॥ चितौडके पतिने युद्ध करके बडे राणाओंका विरुद रक्खा है, और इस हाथियोंके पति सांगाने बादशाहके हाथी पकड रक्खे हैं ॥ २ ॥ अंकुशरूपी तरवार हाथमें लेकर चांपाने मांडू और दिल्लीका मान मर्दन करके इस खेताके वंश वाले महाराणा सांगाने अपनी तरवारसे कई यवनोंको तो

मारडाले और सेना और हाथियों सहित बादशाहको बांधलिया ॥ ३ ॥

गीत (३५)

सतवार जरासँध आगल श्रीरँग,
विमहां टीकम दीध वग ॥
मेलि घात मारे मधुसूदन,
असुर घात नांषे अलग ॥ १ ॥
पारथ हेकरसां हथणापुर,
हटियो त्रिया पडंतां हाथ ॥
देष जका दुरजोधण कीधी,
पछैं तका कीधी कांइ पाथ ॥ २ ॥
इकरां रामतणी तिय रावण,
मंद हरेगो दहकमल ॥
टीकम सोहि ज पथर तारिया,
जगनायक ऊपरा जल ॥ ३ ॥
एक राड भवमांह अवत्थी,
ओरस आणै केम उर ॥
मालतणा केवा कज मांगा,
सांगा तू सालै असुर ॥ ४ ॥

[सोदा बारहठ जमणाजी कृत]

[नोट—यह गीत बारहठ जमणाजीने उस समय सुनाया था जब कि बाबरके युद्धमें महाराणाको मूर्च्छा आनेपर उन्हें साथवाले ले आये और बसवामें उनकी मूर्च्छा खुली जैसा कि ऊपर लिख आये हैं ।]

टीका—आप १ विमना (उदास) क्या होत हो, सौ बार जरासंधसे २ विमुख होकर श्रीकृष्ण भगे थे फिर आपने घात मेटकर असुरका घात किया ॥ १ ॥ अर्जुन एक बार हस्तिनापुरमें द्रौपदीका दुःख देखकर हटा था, वहां दुर्योधनने किया सो सब जानते हैं पर अर्जुनने फिर कैसा किया ॥ २ ॥ एक बार मूर्ख रावण सीताको हर लेगया था, परन्तु फिर रामचन्द्रने समुद्रपर पुल बांधकर कैसी की ॥ ३ ॥ आप एक युद्धमें हारनेसे खेद क्या करते हैं हे सांगा राणा आप बादशाहके खटक रहे हो ॥ ४ ॥

गीत (३६)

ऊगां विण सूर पेहेवो अंबर,
दीपक पाष जसो दुवार ॥
पावस बना जेहवा प्रथमी,
सांगा विण जेहो संसार ॥ १ ॥
विण रवि वोमें कसण ज्योती विण,
धाराहर विण जसी धर ॥

जैसी हरा जिसौ जाणेवो,
तो विण प्रथमी कलपतर ॥ २ ॥
जलहर गयो दुनी जीवाडण,
फव नहीं दापग फरक ॥
साहां ग्रहण मोषणों सांगो,
आंथमियो मोटो अरक ॥ ३ ॥

टीका-सूर्य ऊगे विना जैसे आकाश १ वृथा है दीपक २ विना जैसे गृहकी शोभा नहीं, और वर्षा ऋतु विना जैसे पृथ्वी शोभा नहीं देती उसी तरह महाराणा सांगा विना संसार दीखता है ॥ १ ॥ हे कल्पवृक्ष! जैसे सूर्य बिना ३ आकाश, ज्योति बिना ४ अग्नि, और मेघ विना जैसी पृथ्वी मालूम पडती है, उसी तरह तेरे विनाभी पृथ्वी शून्य दीखती है ॥ २ ॥ हा! दुनियाको जिलानेवाला मेघ चला गया, हा बादशाहोंको पकड पकड कर छोड देनेवाला प्रचंड सूर्य आज अस्त हो गया ॥ ३ ॥

महाराणा श्रीरत्नसिंहजी।

महाराणा श्रीरत्नसिंहजी संवत् १५८४ में गद्दी बैठे। ये वीरतामें तो महाराणा सांगाजी सरीखे ही थे परन्तु क्रोधी बहुत थे, सांगाजी सरीखा धैर्य और गम्भीरता इनमें नहीं थी, इनने अपने राज्य समयमें चित्तोडके नगर एवं गढके द्वार कभी

बंद नहीं कराये, बहुधा यही कहा करते थे कि द्वार उन राजाओंके बंद होते हैं जिनको शत्रुका भय हो, वा जो प्रजापालनमें असमर्थ हों, शत्रुओंको मेरा भय है मुझको शत्रुओंका भय नहीं है । जबतक ये विद्यमान रहे, गुजरात वा मालवाके बादशाहोंको चित्तौडपर मन बढानेका समय न मिला । ये बूंदीके राव सूरजमलजीको उनके भानजे विक्रमादित्यजी (जो महाराणा रत्नसिंहजीके कनिष्ठ भ्राता थे) उनका पक्ष करनेके कारण मारकर स्वयंभी उनके (सूरजमलजी) हाथसे वि. सं. १५८८ में मारे गये, इनका वृत्तान्त 'वंशभास्कर' में दूसरे प्रकारसे भी लिखा है ॥

महाराणा श्रीविक्रमादित्यजी ।

महाराणा विक्रमादित्यजी' रत्नसिंहजीके छोटे भाई थे जो उनके मरनेबाद वि. सं. १५८८ में चित्तोडकी गद्दी बैठे । ये बहुत कायर और विषयी राजा थे, इन्होंने सब भाई बेटोंको थोडेही समयमें अप्रसन्न कर दिये, इसलिये मौका पाकर गुजरातके बादशाह बहादुरशाहने मेवाडपर चढाई की तब विक्रमादित्यजीने महमूदका जडाऊ ताज और दुपट्टा देकर संधि करली । सं. १५९२ में बहादुरशाहने मालवाके बादशाहको साथ लेकर चित्तौडपर चढाई की सो सुनकर विक्रमादित्यजीकी दुष्टताका ध्यान न करके महाराणा सांगाजीके काका सूरजमलजीके पुत्र बाघसिंहजी जो प्रतापगढके राजा थे, युद्धार्थ चित्तोडकी सहायतामें पहुँचे । और विक्रमादित्यजीको उनके

छोटे भाई उदयसिंहजी साहेत उनकी ननिहाल (नानेरा) बूँदीमें पहुँचा दिया। पीछे तरह हजार स्त्रियोंसहित सब रन. वासको चितामें जलाकर आप चित्तोडका राज्य चिह्न अपने शिरपर धारण कर चित्तोडकी विजयके लिये अपना बलिदान करनेको युद्धमें रवाना हुए। इस समय बाघसिंहजीने अपने ऊपर चित्तोड राज्यका छत्र लगाया था जो राज्य करनेकी लालसासे नहीं किन्तु चित्तोडका राज्य महाराणाओंके वंशमें रखनेकी इच्छासे अपना बलिदान देनेके लिये। धन्य है उस वीर बाघसिंहको जिसने अपने कुलको आधिराज बनाये रख- नेकी इच्छासेही चित्तोडको अपना बलि दिया। थोडीही देर. तक युद्ध करके चित्तोडके बत्तीस सहस्र वीर क्षत्रिय रणशय्यामें सोये और तेरह सहस्र स्त्रियां चितामें जलगई, यह चित्तोडका दूसरा साका कहलाता है। इस युद्धके कुछही दिन पीछे बहादुरशाह मंदसोरके समीप बादशाह हुमायंके साथ एक युद्धमें पराजित हुआ जिससे विक्रमादित्यजीके हाथ बिना प्रयासही चित्तोड पीछा लग गया परन्तु थोडे समय बादही सांगाजीके बडे भाई पृथ्वीराजजीका पासवानिया पुत्र बनवीर विक्रमादित्यजीको मारकरस्वयं गद्दीपर बैठ गया। थोडे वर्ष पीछेही मेवाडके सरदारोंने बनवीरको निकालकर उदयसिंहजी- को गद्दीपर बिठलाये।

महाराणा उदयसिंहजी।

उक्त महाराणा विक्रमादित्यजीके पीछे वि॰ सं. १५९४ में गद्दी बैठे, और सं०१६२८में इनका देहांत हुआ। ये महाराणा साधारण ढंगके राजा थे। इन्होंने चित्तोड छूटनेसे आठ वर्ष

पहिलेही सं. १६१६ में अपने राज्यके नैऋत्य भागमें पीछोला तालावके किनारे महल वनवाया और शहर वसाना प्रारंभ कर दिया, जो समय पाकर मेवाडकी वर्तमान राजधानी (उदयपुर नगर) होगया । इन महाराणाके समयमें अकवर वादशाहने चित्तोडपर चढाई की । और चार महीनेतक घेरा रक्खा, जिसमें जयमल्लजी राठोडके काम आने वाद गढमेंके सव लोग वाहर निकल आये और वडी वीरतासे लडते हुए शत्रुओंके हाथ काम आये । यह चित्तोडका तीसरा साका हुआ जिसमें एक सहस्र पठान जो गढमें गोलंदाज थे उन्हें छोड सवके सब क्षत्रिय मारे गये कोई वाकी न वचा ।

गीत (३७)

जेसलगिर चाढ सँसारो जाणैं,
सोहड तरँगम करे सज ॥
उदयसिंह भला ओहटिया,
रिम गढ कटकां तणी रज ॥ १ ॥
तो आंगमण नमो सांगातण,
रढ रावण मेवाडा राण ॥
पमँगां अणी दुरग पींजारिया,
षत्रवट ता पडतां पूमाण ॥ २ ॥
पताहरे नत्रींठा पढिया,
रिमहर माथे पमँग रह ॥

गह मह षेह घणां गूँदलिया,
समियाणा कोटजा सह ॥ ३ ॥
महमा वढि मयँक कुल मंडण,
पोह अनवारां भभत पडी ॥
कटकांतणी दुयणचे कोटे,
चोषी रज कांगरे चडी ॥ ४ ॥

टीका–वीरोंको और घोडोंको सजकर महाराणा उदय सिंहने जैसलमेरकी सहायता की सो संसार जानता है महाराणाने सेनाकी रजसे शत्रुओंके गढोंको ढक दिये ॥ १ ॥ हे सांगाके पुत्र ! तुम्हारे पराक्रमको नमस्कार है, हे रावणके समान हठ करनेवाले खुमाणवंशी मेदपाटेश्वर ! तैंने क्षत्रियमार्गमें चलकर घोडोंकी सेनासे गढोंको कैद करलिये ॥ २ ॥ खेताके पुत्रने वेगसे शत्रुओंके सिरपर घोडे चलाकर खेहकी अत्यंत भीडसे सुमियाणा आदिको गद्ले कर दिये ॥ ३ ॥ जिससे चन्द्रवंशके कुलके मंडन जैसलमेरक राजाकी महिमा वढगई । और कीर्ति हुई कि, दुश्मनोंके कोटपर सेना समुद्भूत (सेनाके चलनेसे उडी हुई) रज चढ गई ॥ ४ ॥

महाराणा श्रीप्रतापसिंहजी ।

महाराणा श्रीप्रतापसिंहजी उदयसिंहजीके देहान्त होने पीछे वि० सं० १६२८ में गद्दी विराजे इनके जैसे यशस्वी और वीर राजा भारतवर्षमें विरले ही हुए हैं इस छोटी पुस्तकमें इनका सविस्तर हाल लिखना असंभव है । जो महोदय

इनका सविस्तर हाल पढना चाहैं वे टाडसाहबके इतिहासमें देखैं, अथवा बून्दीके सुप्रसिद्ध कवि सूर्यमल्लजीके बनाये 'वंश भास्कर' ग्रंथमें देखैं, यहां केवल इतनाहीं लिख देना बस होगा कि मेवाडके महाराणाओंकी कीर्ति जो संसारके आधुनिक व्यक्तिमात्रके जिह्वाग्रगत होरही है वह सब इन्हीं वीराधिराजकी संचित की हुई है। जिन्होंने अपने धर्मकी रक्षाके अर्थ राज्य भी खोदिया। जो जंगलोंमें रातदिन भूखे प्यासे भटकते रहे। जिनको कई वार रहनेके अर्थ महल तो कहां पर पर्णकुटी भी उपलब्ध नहीं हुई। परन्तु धन्य है उस वीरेन्द्रकी माताको जिसके क्षात्रधर्मके त्राता पुत्रने यवन बादशाह अकबरके सामने कभी सिर नहीं नमाया, उस पुरुषसिंहकी प्रशंसा कहांतक की जावै वैसा न तो हुआ न होगा। इन महाराणाका देहान्त वि० सं० १६५३ में हुआ था।

गीत (३८)

ओछो तिल नकूं नकूं तिल अधको;
सुणतां सुकव करां ले माप ॥
तूं ताहरा राण टोडरमल,
परियां सारिषो परताप ॥ १ ॥
परियां अधक कहां किम पातल,
रायांतिलक हींदवां राण ॥
तैं सिर नह नमियो सुरताणा,
सांगै गह मूका सुरताण ॥ २ ॥

ओछो केम कहां ऊदावत,
अकबर कहर तणों तप ईष ॥
अकबरसूं रहियो अणनमियो,
सुरताणां ग्रहियां सारीष ॥ ३ ॥
कुल उधोर प्रताप कहंतां,
थोडो घणूं घणा त्रद पाय ॥
मणा न तो कुल मणां न तोमें,
मणां न सुकव वषाणां माय ॥ ४ ॥

टीका—हे महाराणा प्रतापसिंह ! मैं निश्चय करके कहता हूं कि तू तेरे पूर्वजोंसे न तो तिलभर अधिक है, और न तिलभर न्यून है, तेरे पूर्वज जैसे प्रतिज्ञाके लंगर पहिननेवाले (वीर) हुए वैसाही तू भी है ॥ १ ॥ तुझको तेरे पूर्वजोंसे अधिक कैसे कहूं क्योंकि राणा हिन्दुओंके राजाओंके तिलक हुए हैं, तैंने तो बादशाहोंको सिर नहीं नमाया और राणा सांगाने बादशाहोंको पकड पकडकर छोडादिये ॥ २ ॥ परन्तु हे उदयसिंहके पुत्र ! अकबरके उग्र तपको देखते हुए तुझको अपने पूर्वजोंसे न्यून भी क्योंकर कहूं, क्योंकि अकबरकी प्रबल उग्रताको देखते उसको शिर न झुकाना ही बादशाहोंको पकडकर छोडनेके बराबर है ॥ ३ ॥ जैसे तेरे पूर्वज बलवान् और स्तुतिके योग्य हुए वैसाही तूभी वीर और प्रशंसनीय है, हे माहाराणा !

न तो तेरे कुलमें कुछ न्यूनता है, न स्वयं तेरेमें न्यूनता है, और न सुकविके वर्णनमें किसी तरहकी न्यूनता है ॥ ४ ॥

गीत (३९)

विजड ताप तो नमो परताप सांगण त्रिया,
जगत या अकथकथ वात जाणी ॥
कहर राणांतणी वार मझ एकठा,
भखण राषै नको हंस पाणी ॥ १ ॥
उदयवत आज दुनियाण सह ऊपरा,
सारसो तार लागो सवांहीं ॥
हंस राषै जिकां नीर अलगो हुवै,
नीर राषै जिकां हंस नाहीं ॥ २ ॥
करां खग झाल दुहुं राह मातो कलह;
दूठ लागो पलां येण दावै ॥
जीवरी आस तो भखण नह गहै जल,
जल गहै भखण तो जीव जावै ॥ ३ ॥
दई ओ दई गत कुंभकन दूसरा,
चाह शुर आपरै पंथ चालै ॥
राणा दइवाण पर हंस लागो रिमा,
हंस जल न जुवै पंथ हालै ॥ ४ ॥

टीका-हे दूसरे सांगा महाराणा प्रतापसिंह ! तुम्हारे खड्गकी तापको नमस्कार है जिसकी जगतमें एक विचित्र कथा प्रगट हुई है कि, प्रलय करनेवाली महाराणाकी तलवारके आगे शत्रु-गण जीव और पराक्रम साथ नहीं रखते ॥ १ ॥ हे उदयसिंहके पुत्र प्रतापसिंह ! संसारमें तेरे श्रेष्ठ खड्गका ताप सबको लगता है अतः जो शत्रु जीव रखना चाहते हैं उनमें तो पराक्रम नहीं रहता और जो पराक्रम रखना चाहते हैं उनका जीव नहीं रहता ॥ २ ॥ हे वीर ! तू खड्ग लेकर यवनोंके दलके साथ ऐसा पडा है कि जिनको जीवकी आशा है वे तो पराक्रम नहीं रखते और जो पराक्रम रखते हैं वे जीवसे हाथ धो बैठते हैं ॥ ३ ॥ हे स्वेच्छाचारियोंके गुरु दूसरे कुम्भकर्ण ! बडे आश्चर्यकी बात है कि तू वीर अपनेही मार्गपर चलता है, हे दीवान महाराणा ! तू शत्रुओंके जीवपर ऐसा लगा है कि उनके पराक्रम और जीव जुदे जुदे मार्गसे जाते हैं एक स्थानपर नहीं रहते ॥ ४ ॥

गीत (४०)

आलापै राग गारडू अकबर,
दै पैंतीस असटै कुल दाव ॥
राण सेस वसुधा कथ राषण,
राग न पांतरियो अहराव ॥ १ ॥

मिणधर छत्रधर अवर गेल मन,
ताइधर रजधर सींधतण ॥
पूंगी दल पतसाह पेरतां,
फेरै कमल न सहँसफण ॥ २ ॥

गढ गढ राफ राफ मेटे गह,
रेण पत्रीभ्रम लाज असेस ॥
पंडरवेस नाद अग पीगग,
सेस न आयो पतो नरेस ॥ ३ ॥

आया अन भूपत आवाहणँ,
भुजँगे भजँग तजे बल भंग ॥
रहियो राण पत्रीभ्रम रापग,
सेत उरंग कलोधँर संग ॥ ४ ॥

टीका—अकवररूपी १ कालवेलियेने क्षत्रियोंके पैंतीस वंशों-रूपी २ आठ कुलोंके सर्पोंपर दाव देदिया, परन्तु पृथ्वीपर कथा रखनेके लिये ३ सर्पराज (शेषनाग) रूपी महाराणा प्रतापसिंह अकवरके गानेसे अपने कुलको नहीं भूला ॥ १ ॥ मणियोंको धारण करनेवाले अन्य सर्पोंरूपी राजाओंके मन डुल गये परन्तु ४ शत्रुओंको धारण करनेवाले (वीर) और रजोगुणको धारण करनेवाले शेषनागरूपी महाराणा प्रताप-सिंहने वादशाहकी सेनारूपी पूंगीकी प्रेरणासे मस्तक नहीं

हिलाया ॥ २ ॥ और यहां यहांमें ६ मुसलमानी धर्मके विरोधियोंका घमंड मेट दिया, परन्तु क्षत्रियधर्मकी लज्जामें निष्कलंक श्वेतवंश (रंग) वाला और पृथ्वीके मदको नहीं पीनेवाला शेषनागरूपी महाराणा प्रतापसिंह नहीं आया ॥ ३॥ ७ दुनियांसे सब राजारूपी सर्प बलहीन होकर आगये, परन्तु क्षत्रियोंके धर्मकी रक्षा करनेवाला ८ शेषनागरूपी महाराणा प्रतापसिंह नहीं आया ॥ ४ ॥

गीत (४१)

गयँद मानरे मुहर ऊभो हुतो दुरद गत,
सिलहपोसां तणां जूथ साथै ॥
तद बही रूक अणचूक पातल तणी,
मुगल बहलोलखां तणै माथै ॥ १ ॥
तणै भ्रमऊद असवार चेटक तणै,
घणै मगरूर बहराड़ घटकी ॥
आचरै जोर मिरजातणै आछटी,
भाचैर चाचैर बीज झटकी ॥ २ ॥
सूरतन रीझतां भीजतां सेलहुर,
पहां अन दीजतां कदम पाछे ॥
दांत चढतां जवन सीस पछटी दुजड,
तांत साचण ज्युहीं गई जाछे ॥ ३ ॥

वीर अवसाण केवाण उजवक वहे,

राण हथवाह दुय राह रटियो ॥

कट झलम सीस बगतर वरँग अँग कटे,

कटे पाखर सुरँग तुरँग कटियो ॥ ४ ॥

[बोगसा जातिके चारण गोरधनजी कृत]

[नोट—यह गीत हल्दी घाटीके युद्धका है ।]

टिका-आमेरके महाराजा मानसिंहके हाथीके १ आगे अपने मददगार सवारोंको साथ लेकर बहलोलखां हाथीकी तरह खडा था उस समय शत्रु (बहलोलखां) के पास पहुंचे हुए महाराणा प्रतापसिंहकी तलवार उसके सिरपर बही ॥ १ ॥ उदयसिंहके पुत्र चेटकके सवार महाराणाने शरीरको चीरनेवाली तलवारको बहुत जोशमें भमाकर अपने हाथके जोरसे मिरजाके ऊपर मारी सो मानो २ ठठेरीकी एरण पर बिजुली गिरे जिस तरह सिर काटकर निकल गई ॥ २ ॥ सूर्य प्रसन्न होने लगा, बडे बडे पहाड रक्तसे भीग गये, अन्य राजा अपने पैर पीछे देने लगे उस समय महाराणाने सामने आये हुए मुसलमान पर तलवार मारी सो साबुनको तांत काटकर निकलती है इस तरह काटकर निकल गई ॥ ३ ॥ उस वीरने अपूर्व वारसे तलवार चलाई सो महाराणाका इस हस्तवाह की हिंदू मुसलमान दोनोंने बहुतही प्रशंसा की कि जिसके खड्गसे बहलोलखांका टोप कट,

शिर कट, बख्तर कट, शरीर कट और पाखर कटकर सुरंग रंगवाला घोडा तक कटगया ॥ ४ ॥

गीत (४२)

मह लागो पाप अजनमा मोकल,
पँड सुदतार भेटतां पाप ॥
आज हुवा निकलंक अहाडा,
पेखे मुख ताहरो परताप ॥ १ ॥
चढतां कलजुग जोर चढंतो,
घणा असत जाचतो घणो ॥
मिलतां समैं राण मेवाडा,
टलियो प्राछत देह तणो ॥ २ ॥
स्रग म्रतलोक सुणे सीसोदा,
पाप गया ऊजमे परा ॥
होतां भेट समैं राव हींदू,
हुवा पवित्र सँग्राम हरा ॥ ३ ॥
इपे तूझ कमल ऊदावत,
जनमतणों गो पाप जुवो ॥
हेकण वार ऊजला हींदू,
हरसूं जाण जुहार हुवो ॥ ४ ॥

टीका—कवि कहता है कि कलियुगका जोर बढनेसे बहुत झूठे और अधर्मी राजाओंसे याचना करनेसे मुझको पाप लग गया, सो हे मोकलके समान महाराणा प्रतापसिंह ! आज तेरा मुख देखकर उस पापसे छूटा हूं ॥ १-२ ॥ हे सीसोदिया ! स्वर्गलोक और मृत्युलोक कहते हैं कि आज उन पापोंका उद्यापन होगया और तुझ संग्रामसिंहके पोते हिंदुओंके पतिके दर्शन होनेसे मैं पवित्र होगया ॥ ३ ॥ हे उदयसिंहके पुत्र ! तेरा मुख देखनेसे मेरा जन्म जन्मका पाप जुदा होगया सो प्रतापसिंहसे जुहार क्या हुआ मानो परमेश्वरसे जुहार होगया ४।

गीत (४३)

पटकै पत्रवेथ सदा पेहडतो,
दिनभत दापंतो पत्रदाव ॥
अकबर साह तणों ऊदावत,
राण हिये चरणां अन राव ॥ १ ॥
नह पलटै परडकै अहोनिस,
घड दुरवेस घडै घण घाव ॥
सांगा हरो तणे आलम सह,
पांतरदे महपत अन पाव ॥ २ ॥
धर बाहरू प्रताप पडगभर,
सुज बीसरै न पापर सेर ॥

अकबर उरमें साल अहाडो,

ओथणे सेवग भूप अनेर ॥ ३ ॥

राव हींदवो तणों रोदां रिप,

राणो आपाणी कुलरीत ॥

पडिया रहै अवर ऋप पावां,

चाढियो कुंभ कलोधर चीत ॥ ४ ॥

[आसिया शाखाके चारण पीथाजीकृत]

टीका-क्षत्रियोंके मार्गमें चलनेवाला महाराणा युद्धमें बादशाह अकबरके चित्तमें खटकताहै, और अन्य राजा सेवामें पडे रहते हैं, इस कारण महाराणा प्रतापसिंह सदा अकबरके हृदयपर चढा रहताहै, और अन्य राजा चरणोंमें पडे रहते हैं ॥ १ ॥ फकीरकी तरह हुआ अकबर मनमें घाट घणा करताहै, और सदा महाराणा उसके मनमें खटकता रहताहै परन्तु सांगाके वंशवाला प्रतापसिंह संसारकी रक्षा करनेवाला भूलकरभी अकबरकी तर्फ पांव नहीं देता ॥ २ ॥ महाराणा प्रतापसिंह पृथ्वीका रक्षक है अतः वह वीर भूल कभी नहीं करता सो अन्य राजा तो अकबरके घरकी सेवा करनेवाले हैं परन्तु महाराणा अकबरकी छातीमें साल रूप है ॥ ३ ॥ कुंभाकी कलाको धारण करनेवाला महाराणा प्रतापसिंह अपने कुलकी रीतिको रखकर 'हिन्दुपति' और 'यवनोंका रिपु' कहलाता है इस कारण महाराणा तो अकबरके हृदयमें बना रहता है और दूसरे राजा उसके पैरोंमें पडे रहते हैं ॥ ४ ॥

बीकानेर महाराजके भ्राता पृथ्वी-राजजीके कहेहुए काव्य ।

महाराणा श्रीप्रतापसिंहजी अकबरको बादशाह नहीं कहते थे, सदा तुर्क कहा करते थे । एक दिन, अकबरको खबर मिली कि अब महाराणा बादशाह कहने लग गये हैं । उस समय बीकानेरके महाराजा रायसिंहजीके छोटे भाई पृथ्वीराजजी जो बादशाहके दरबारमें रहा करते थे, उन्होंने निवेदन किया कि यह खबर गलत है । इसपर बादशाहने कहा कि तुम सही खबर मंगाकर अर्ज करो । तब पृथ्वीराजजीने निम्नलिखित दो दोहे बनाकर महाराणा साहबके पास भेजे । इन दोहोंके उत्तरमें महाराणा साहबने भी तीन दोहे लिख भेजे जिनका यहां ही आगे उल्लेख किया गया है ।

पृथ्वीराजजीने वीरशिरोमणि महाराणाके उत्साहको अधिक उत्तेजित करनेके लिये अन्यान्य कई शेर और गीत निर्माण किये । उनमेंसे जो कितने ही प्राप्त हुए हैं वे यहां लिखे गये हैं ।

सोरठो दोहा (४४, ४५)

पातल जो पतसाह, बोले मुख हूंता वयण ।
मिहर पछम दिस मांह, ऊगे कासप रावउत १ ॥
पटकूं मूछां पाण, के पटकूं निज तन करद ।
दीजे लिख दीवाण, इण दो महली बात इक ॥ २ ॥

टीका—महाराणा प्रतापसिंह यदि पातशाहको अपने मुखसे पातसाह कहैं तो कश्यपजीके सन्तान भगवान् सूर्य पश्चिम दिशामें उगैं, अर्थात् जैसे सूर्यका उदय पश्चिम दिशामें कदापि सम्भव नहीं वैसे ही आप (महाराणा) का पातसाह वचन कहना भी नितान्त असम्भव है ॥ १ ॥ हे दीवाण ! मैं अपनी मूंछपर पाण दूं, अथवा अपने शरीर पर करद (तलवार) डालूं इन दोनोंमेंसे एक बात लिख दीजिये ॥ २ ॥

इन दोहोंका उत्तर—जो कि महाराणा साहबने भेजा था—

दोहा (४६, ४७, ४८,)

तुरक कहासी मुख पतो, इण तनसूं इकलिंग ।
ऊगै जांही ऊगसी, प्राची बीच पतंग ॥ १ ॥
खुसी हूंत पीथल कमध, पटको मूंछां पाण ।
पछटण है जेतै पतौ, कलमा सिर केवाण ॥ २ ॥
सांग मूंड सहसी सको, समजस जहर सवाद ।
भड पीथल जीतो भलां, वैण तुरकसूं वाद ॥ ३ ॥

टी०—भगवान् " एकलिंग " की शपथ है, इस शरीरसे प्रतापसिंहके मुखमे पातसाह तुरकही कहावेगा । और भगवान् सूर्यका उदय जहां होता है वहां ही पूर्व दिशामें होगा ॥ १ ॥ हे वीर पृथ्वीराज ! आप प्रसन्न होकर मूछोंपर पाण लगावें अर्थात् निःशङ्क होकर मान रक्खें और जबतक प्रतापसिंह

है, केवाण (कृपाण) अर्थात् खड्गको यवनोंके शिरोंपर जानें ॥ २ ॥ राणा प्रतापसिंह शिरपर भाला सहेगा क्योंकि अपने बराबरवालेका जस जहरके सदृश होता है, सो हे भट पृथ्वीराज ! आप तुरकसे वचनोंके विवादमें विजय पावो ॥ ३ ॥

यह वृत्तान्त जब पृथ्वीराजजीकी पत्नीने सुना तब इस विषयमें एक दोहा बनाया और उससे अपने पतिको बोधित किया । वह यह है—

दोहा (४९)

पति जिद की पतसाहसूं, यहै सुणी मैं आज ।
कहां पातळ अकबर कहां, करियो बडो अकाज ॥

टी०—हे प्राणपति ! मैंने आज यह सुना कि आपने महाराणा साहबके सम्बन्धमें पातसाहसे जिद (विवाद) ठानीहै । परन्तु आज दिन भारतके राजाओंपर शासन करनेवाला और असंख्य सेनाओंका स्वामी अकबर कहां । और थोडेसे क्षत्रियवीरोंके साथ वन्य वृत्तिसे निर्वाह करनेवाले राणा प्रतापसिंह कहां । अर्थात् पातसाहके मलिन विचार व अधिक शक्तिपर एवं महाराणाके दृढ अभिमान और सहायसम्पत्तिकी विकलता (कमी) पर विचार कीजिये तो आपने बडा अकाज (अनर्थ) कियाहै । क्योंकि अब अकबर उन्हें अत्यन्त कष्ट पहुँचानेका यत्न करेगा ।

सुयोग्य पृथ्वी राजाजीने एक कवित्तके द्वारा ऊपर लिखे दोहेका उत्तर दिया वह कवित्त यहहै—

कवित्त (५०)

जबतैं सुनै॰ बैन तबतैं न मोको चैन,
पाती पाढ नैंक सो विलंब न लगावैगो ।
लेकै जमदूतसे समस्त राजपूत आज,
आगरेमें आठों याम ऊधम मचावैगो ।
कहै पृथ्वीराज प्रिया ! नैक उर धीरधरो,
चिरंजीवी रानाश्री मलेच्छन भगावैगो ।
मनको मरद मानी प्रबल प्रतापसिंह,
बब्बर ज्यौं तडफ अकब्बरपै आवैगो ॥

टी०-हे प्रिये ! पृथ्वीराज कहताहै कि चित्तमें थोडी धीरज रक्खो । मैंने जबसे ये वचन सुने हैं कि ' महाराणा हमें बादशाह कहने लगा है' तबसे मुझे चैन (सुख) नहीं पडता । मेरा पत्र पढकर वह वीरशिरोमणि थोडाभी विलंब नहीं करेगा । किन्तु यमदूतोंके समान शत्रुपक्षके प्राण हरनेवाले अपने सहयोगी (साथी) राजपूतोंको साथ ले आज दिनभी (ऐसे समयमेंभी) आगरेमें सर्वदा धावा देता रहेगा । चिरंजीवी राना म्लेच्छोंको भगादेगा व उनकी श्री (लक्ष्मी) को उच्छिन्न करडालेगा । वह मनका मर्द अर्थात् उत्साहसम्पन्न अभिमानी और महाबलशाली महाराणा प्रतापसिंह क्रोधसे प्रज्वलित होकर बब्बर नाहरके सदृश अकबरपर आक्रमण करेगा ।

दोहे (५१ से) ६१ तक)

धर बांकी दिन पाधरां, मरद न मूके माण ॥
घणां नरींदां घेरियो, रहे गिरंदां राण ॥ १ ॥

टीका—जिसकी भूमि अत्यन्त विकट है और दिन अनुकूल है, जो वीर अभिमानको नहीं छोडता वह महाराणा बहुत राजाओंसे घिराहुआ पहाडोंमें निवास करता है ॥ १ ॥

पातल राण प्रवाड मल, बांकी घडा विभाड ॥
खूंदाडे कुण हे खुरां, तो ऊभां मेवाड ॥ २ ॥

टीका—हे विकट सेनाओंका विध्वंस करनेवाले और युद्धमें मल्ल महाराणा प्रतापसिंह! तेरे खडे रहते मेवाडको घोडोंके खुरोंसे दबानेवाला कौन है? अर्थात् तेरी भूमि कोई नहीं दबा सकता ॥ २ ॥

माई एहा पूतजण, जेहा राण प्रताप ॥
अकबर सूतो ओधकै, जाण सिराणे सांप ॥ ३ ॥

टीका—हे माता! ऐसे सुपुत्र जन, जैसा कि, महाराणा प्रतापसिंह, जिसको याद आनेसे ही सिरहाने सर्प जानकर चमकनेवालेकी तरह अकबर बादशाह चमक उठता है ॥ ३ ॥

अइरे अकबरियाह, तेज तुहालो तुरकडा ॥
नम नम नीसरियाह, राण बिना सह राजवी ॥ ४ ॥

टीका—हे अकबर बादशाह! तेरे प्रतापको देखकर बडा आश्चर्य होता है कि जिसके सामने महाराणाके बिना अन्य सब राजा झुक गये (अधीन होगये) ॥ ४ ॥

सह गावडि ओ साथ, एकण वाडे वाडियो ॥
राण न मानी नाथ, तांडे सांड प्रतापसी ॥५॥

टीका-हे अकबर! (अध्याहार होता है) तैंने गायों-रूपी सब राजाओंको एक वाडेमें इकट्ठे करदिये परन्तु महाराणा प्रतापसिंहरूपी सांड तेरी नाथको नहीं मानकर गर्ज रहा है॥५॥

पहु गोधलिया पास, आलूधा अकबर तणी ॥
राणो खिमै न रास, प्रबलो सांड प्रतापसी॥६॥

टीका-अन्य सब छोटे बैलरूपी राजा लोग अकबरकी पाशमें उलझ (बंध) गये, परन्तु महाराणा प्रतापसिंहरूपी बलवान् सांड इसकी रस्सीको सहन करनेवाला नहीं है ॥ ६॥

पातल पाघ प्रमाण, सांची सांगाहर तणी ॥
रही सदा लग राण, अकबरसूं ऊभी अणी ॥७॥

टीका-महाराणा संग्रामसिंहके पोते प्रतापसिंहकी पगडी ही गिनतीमें सच्ची है कि जो अकबरके सामने अनम्र रहनेके कारण उच्च रही ॥ ७ ॥

चोथो चीतोडाह, बांटो बाजंती तणो ॥
माथै मेवाडाह, थारे राण प्रतापसी ॥ ८ ॥

टीका-हे चित्तोडके पति महाराणा प्रतापसिंह! १ घडीका १ चौथा हिस्सा अर्थात् पाव घडी 'पावडी' हे मेवाडके पति! तेरे ही सिरपर है ॥ ८ ॥

वाही राण प्रतापसी, बरछी लचपचांह ॥
जाणक नागण नीसरी, मुंह भरियो बचांह ॥९॥

टीका—महाराणा प्रतापसिंहने जो लचकती हुई बरछी चलाई सो शत्रुको फोडकर आंतोंको साथ लेकर परली तरफ निकल गई सो ऐसी शोभा देने लगी मानों सर्पिणी अपने बच्चोंको मुखमें लेकर निकली ॥ ९ ॥

वाही राण प्रतापसी, बगतरमें बरछीह ॥
जाणक झींगर जालमें, मुंह काढ्यो मच्छीह १० ॥

टीका—महाराणा प्रतापसिंहने जो बरछी चलाई वह शत्रुके कवचको फोडकर परली तरफ निकल कर ऐसी शोभा देने लगी। मानो झींगर मच्छी (छोटी मच्छी) ने जालमें मुंह निकाला१०

पातल घड पतसाहरी, एम विंधूंसी आण ॥
जाण चढी कर बंदरां, पोथी बेद पुराण ॥ ११ ॥

टीका—महाराणा प्रतापसिंहने बादशाहकी फोजका ऐसा विध्वंस कर डाला जैसे बंदरके हाथ वेद पुराणकी पुस्तक लगनेपर वह उसे फाड डालता है ॥ ११ ॥

[नोट—उपरोक्त सब दोहे बीकानेर महाराजके भ्राता पृथ्वीराजजीने महाराणा प्रतापसिंहजीको लिखकर भेजे थे, परन्तु कई लोग सन्देह करते हैं कि ये सब उनके बनाये हुए नहीं हैं, और स्वामी गणेशपुरीजी आदि साहित्यके आधुनिक विद्वानोंका मत है कि 'धारांवा दिन पाधरा ' यह दोहा

पृथ्वीराजजीका ही बनाया हुआ है, कुछ भी हो इन दोहोंसे यह बात भलीभांति जानी जासकती है कि, उस समयके पुरुषोंका प्रेम स्वधर्मरक्षाके कारण महाराणा प्रतापसिंहजी पर कैसा था ।

गीत (६२)

नर तेथ निमाणा निलजी नारी,
अकबर गाहक वट अवट ॥
चोहटे तिण जायर चीतोडो,
बेचै किम रजपूत वट ॥ १ ॥
रोजायतां तणैं नवरोजै,
जेथ मुसाणा जणो जण ॥
हींदू नाथ दिलीचे हाटे,
पतो न षरचै षत्रीपणा ॥ २ ॥
परपँच लाज दीठ नह व्यापण,
षोटो लाभ अलाभ षरो ॥
रज बेचवाँ न आवै राणो,
हाटे मीर हमी हरो ॥ ३ ॥

---

(१) कर्नल जेम्स टाडने अपने बृहद् पुस्तक "टाड राजस्थान" में महाराज पृथ्वीराजजीके एक गीत और कई दोहोंका भाषान्तर किया है, उनमेंसे गीत तो " नर तेथ निमाणा " इत्यादि है और उनमेंसे कई दोहे भी इनमें दिये गये हैं ।

पेपे आपतणा पुरसोतम,
रह अणियालतणैं बलराण ॥
पत्र वेचिया अनेक पत्रियां,
पत्रवट थिर राखी प्रमाण ॥ ४ ॥

जासी हाट बात रहसी जग,
अकबर ठग जासी एकार ॥
रह राखियो पत्री ध्रम राणे,
सारा ले बरतो संसार ॥ ५ ॥

[बीकानेर महाराज के भाई पृथ्वीराजजी कृत.]

टीका—जहांपर मानहीन पुरुष और लज्जाहीन स्त्रियां हैं और अकबर जैसा ग्राहक है, उस चौपडके बाजारमें जाकर चित्तोडका स्वामी रजपूतीका हिस्सा कैसे विक्रय करेगा ॥ ॥ १ ॥ मुसल्मानोंके नवरोजेकी जगह प्रत्येक व्यक्ति लुट-गया परन्तु हिन्दुओंका पति प्रतापसिंह उस दिल्लीके बाजारमें अपने क्षत्रियपनको क्योंकर खर्चे ॥ २ ॥ वंशलज्जासे भरी दृष्टिपर अन्यका प्रपञ्च नहीं व्यापता है इसीसे पराधीनताके सुखके लाभको बुरा और अलाभको अच्छा समझकर बाद-शाही दुकानपर रज बेचनेके लिये हम्मीरका पोता राणा प्रतापसिंह कदापि नहीं आता ॥ ३ ॥ अपने पुरुषाओंका उत्तम-कर्तव्य देखते हुए महाराणाने भालेके बलसे क्षत्रिय धर्मको अचल रक्खा और अन्य क्षत्रियोंने अपने क्षत्रियत्वको

विक्रय कर डाला ॥ ४ ॥ ठगरूपी अकबर भी एक दिन इस संसारसे कूंच कर जावेगा और यह हाट भी उठ जावेगी परन्तु संसारमें यह बात अमर रह जावेगी कि क्षत्रियोंके धर्ममें रहकर उस धर्मको केवल राणा प्रतापसिंहने ही रक्खा अब पृथ्वीभरमें सबको उचित है कि उस क्षत्रियत्वको अपने बरतावमें लो अर्थात् राणा प्रतापसिंहकी भाँति आपत्ति भोग· कर भी पुरुषार्थसे धर्मकी रक्षा करो ॥ ५ ॥

गीत (६३)

ऊंगा दल समैं करै आपाडा,
चोरँग भुवन हसत अणचूक ॥
रोदांतणा रगतसूं राणा,
रंगियो रहै तुहालो रूकै ॥ १ ॥

मोकलहरा महाजुध मचतै,
वचतां सर नत्रीठ वहै ॥
पातल तूझ तणो पडियालगै,
रुधर चराचियो सदा रहै ॥ २ ॥

पित कारणैं करै नित पलवट,
पेटै कटक तणा पुरसाण ॥
प्रसणां सोण अहोनस पातल,
पग सातरत रहै घूमांण ॥ ३ ॥

ऊगां सूर समो ऊदावत,
वहै वसू छल बोल विरोल ॥
चलु अल अरी तणं चीतोडा,
चंद्रप्रहास रहै नत चोल ॥ ४ ॥

[बीकानेरके महाराजके भाई पृथ्वीराजजीकृत.]

टीका—हे राणा ! तेरे नहीं चूकनेवाले हाथ दिन ऊगते समयही युद्धभूमिमें अखाडा (युद्ध) करने लगते हैं, और तेरी २ तलवार १ यवनोंके रक्तसे रंगी हुई रहती है ॥ १ ॥ हे मोकलके पोते महाराणा प्रतापसिंह ! महायुद्धमें तेरा ३ खड्ग बचते हुए शत्रुओंके सिरोंपर बडे वेगसे चलता है इसही कारणसे सदा रुधिरसे रंगा हुआ रहता है ॥ २ ॥ हे पुम्माणके वंश वाले प्रताप ! तू ४ पृथ्वीके लिये नित्य यवनोंके वटकसे युद्ध करके दुष्टोंके टुकडे टुकडे कर डालता है और खलोंके रुधिरसे तेरा खड्ग सदा लाल रहता है ॥ ३ ॥ हे उदयसिंहके पुत्र ! सूर्योदय समयमें ही पृथ्वीके अर्थ युद्ध होता है और तेरा चंद्रप्रहास (खड्ग) सदा शत्रुओंके शोणितसे रक्तवर्ण रहताहै ॥ ४ ॥

विरुद छिहत्तरी ।

आढा जातिके चारण कविवर्य दुरसाजीकृत-

सौराष्ट्री सोरठे ६४-१३९ तक ।

अलख पुरुस आदेस, देस बचाय दयानिधे ॥
वरणन करूं विसेस, सुहृद नरेस प्रतापसी ॥ १ ॥

टीका-हे अगोचर दयानिधि पुरुष ! (परमेश्वर) तुमको नमस्कार है । देशके सुहृद् (मित्र) महाराणा प्रतापसिंहकी रक्षा कीजिये मैं उसीका वर्णन करता हूं ॥ १ ॥

---

(१) इस छिहत्तरीके रचयिता आढाशाखाके चारण कवि दुरसाजी सीरोही राज्यके पोलपात थे और कवि होनेके साथ ही वार भी थे । उदयपुर महाराणा साहब प्रतापसिंहजीके छोटे भाई जगमाल जी उनसे नाराज होकर अकबरके पास चले गये और अकबरने इनको सीरोहीका आधा राज्य देदिया और सीरोहीके राव सुलतानसे वह राज्य दिलानेके अर्थ अपनी फौज साथ दी जिसमें दुरसाजी भी साथ थे । इस युद्धमें जगमालजी मारे गये और बादशाही फौज हारकर भागी तब सीरोही रावजीने खेत सम्हाला जहां दुरसाजीको उनके चारण कहनेपर चिकित्सा कराकर पोलपात बना लिया । जोधपुरके मोटे राजाने सब चारणोंकी जीविकाएं खोसली थीं तब ये धरणेमें शामिल थे और अकबरके पास जाकर उससे महाराजको उपालंभ दिलाकर सब जागीरें पीछी दिलवाई इनको अकबरके दर्बारमें बैठनेकी इज्जत थी ।

गढ ऊँचो गिरनार, नीचो आबूही नहीं ॥
अकब्बर अघ अवतार, पुन अवतार प्रतापसी ॥ २ ॥

टीका–ऊंचे पनमें गिरनारका गढ ऊंचा है तो आबूका गढ क्या उससे नीचा है ? पापका अवतार होनेमें अकबर ऊंचा है, तो पुण्यका अवतार होनेमें प्रतापसिंह क्या उससे न्यून है ॥ २ ॥

कलजुग चलै न कार, अकब्बर मन आंजस ग्रुहीं ॥
सतजुग सम संसार, परगट राण प्रतापसी ॥ ३ ॥

टीका–कलियुगरूपी अकबरके मनमें हर्ष वृथा है, क्योंकि संसारमें जबतक सत्ययुगरूपी महाराणा प्रतापसिंह विद्यमान हैं तबतक उसकी (अकबरकी) मर्यादा नहीं चढेगी ॥ ३ ॥

अकब्बर गरब न आण, हींदू सह चाकर हुवा ॥
दीठो कोई दीवांण, करतो लटका कटहैड ॥ ४ ॥

टीका–हे अकबर ! सब हिन्दुओंके नौकर होजानेसे तू मनमें क्यों घमंड करता है ? क्या कभी किसी १ महाराणाको कटहरे (बादशाहके सिंहासनके कटहरा लगा रहता था) के सामने लटका करते देखा था ? ॥ ४ ॥

सुणतां अकब्बर साह, दाह हिये लागी दुसह ॥
विसमल्ला वदराह, एक राह करदूं अवस ॥ ५ ॥

टीका-प्रतिपक्षियोंका स्वाधीनपन सुनकर अकबरके मनमें असह्य जलन लग गई, और विचारने लगा कि मुसलमान धर्मके विपक्षियोंको एकमार्गमें (मुसलमान) करदूंगा ॥ ५ ॥

मन अकबर मजबूत, फूट हींदवां बेफिकर ॥
काफर कोम कपूत, पकडूं राण प्रतापसी ॥ ६ ॥

टीका-हिंदुओंमें फूट देखकर अकबरका मन मजबूत और बेफिकर होगया । विचारने लगा कि काफिरोंकी (हिंदुओंकी) कौममें महाराणा प्रतापसिंहही कुपुत्र हैं जिन्हें पकडलूं ॥ ६ ॥

अकबर कीना याद, हींदू नृप हाजर हुवा ॥
मेदपाट मरजाद, पग लागो न प्रतापसी ॥ ७ ॥

टीका-अकबरके याद करतेही सब हिंदु राजा आ उपस्थित हुए परन्तु मेवाडकी मर्यादा रखनेवाला महाराणा प्रतापसिंहने हाजिर होना नहीं चाहा ॥ ७ ॥

मेछां आगल माथ, नमैं नहीं नरनाथरो ॥
सो करतब समराथ, पालै राण प्रतापसी ॥ ८ ॥

टीका-'मुसलमानोंके आगे नरनाथ (प्रतापसिंह) का सिर नहीं नमता ' इस कर्तव्यको पालन करनेमें समर्थ केवल महाराणा प्रतापसिंहही हैं ॥ ८ ॥

बुहा वडेरा वाट, वाट तिकण वहणो विसद ॥
पाग त्याग पत्रवाट, पूरो राण प्रतापसी ॥९॥

टीका-क्षत्रियोंका प्राचीन मार्ग यही है कि जिस मार्गमें अपने पुरुषा चले उसी उज्वल मार्गमें चलना अर्थात् ' तलवार चलाना और दान देना ' इसमें महाराणा प्रतापसिंह ही पूर्ण रीतिसे चलताहै ॥ ९ ॥

चितवै चित चीतोड, चिता जलाई सोच तर ॥
मेवाडो जग मोड, पावन पुरुष प्रतापसी॥ १०॥

टीका-मेवाडके पति, जगतके मुकुट, उत्तम पुरुष महाराणा प्रतापसिंह चित्तमें चित्तोडकी चिंता किया करतेहैं और इसी सोचसे उनके चित्तमें चिंता जल रही है ॥ १० ॥

कदे न नामे कंध, अकबर ढिग आवै न ओ ॥
सूरजवंस सँबंध, पाले राण प्रतापसी ॥ ११ ॥

टीका-महाराणा न तो कभी अकबरके समीप आते हैं, और न कभी सिर नमाते हैं, यह महाराणा प्रतापसिंह सदा सूर्यवंशके संबन्धकी पालना करते हैं ॥ ११ ॥

अकबर कुटिल अनीत, और बिटल सिर आदरे ॥
रघुकुल उत्तम रीत, पाले राण प्रतापसी ॥ १२ ॥

टीका-कुटिल अकबरकी अनीतिको अन्य बिगडे हुए राजा लोग आदर सहित मस्तक पर चढाते हैं, परन्तु रघु कुलकी उत्त-

प्रीतिका पालन करनेवाले केवल महाराणा प्रतापसिंह ही हैं ॥ १२ ॥

लोपै हींदू लाज, सगपण रोपै तुरकसूं ॥
आरजकुलरी आज, पूंजी राण प्रतापसी ॥ १३ ॥

टीका-हिन्दू सब लज्जाको लुप्त करके यवनोंसे संबन्ध करने लगगये, परन्तु आज दिन आर्य कुलका उत्तम द्रव्य महाराणा प्रतापसिंह ही हैं ॥ १३ ॥

अकबर पथर अनेक, के भूपत भेला किया ॥
हाथ न लागो हेक, पारस राण प्रतापसी ॥ १४ ॥

टीका-अकबरने अन्य राजारूपी कई पत्थर इकट्ठे करलिये, परन्तु पारसरूपी एक महाराणा प्रतापसिंह हाथ नहीं लगा ॥ १४ ॥

सांगो धरम सहाय, बावरसूं भिडियो विहस ॥
अकबर कदमां आय, पडै न राण प्रतापसी ॥ १५ ॥

टीका-पहिले महाराणा संग्रामसिंह धर्मकी सहायताकेलिये वाबरसे लडे थे, और अब उसी परम्पराके अनुसार महाराणा प्रतापसिंह अकबरके पैरोंमें नहीं पडते ॥ १५ ॥

आपै अकबर आण, थाप उथापै ओ थिरा ॥
चापै रावल चाण, तापै राण प्रतापसी ॥ १६ ॥

टीका-अकबर अपनी दुहाई पृथ्वीपर जमाता है, उसे यह दूर करदेते हैं । बापा रावलके वंशकी आदतको महाराणा प्रतापसिंह नहीं छोडते ॥ १६ ॥

सुप हित स्याल समाज, हींदू अकबर वस हुव ॥
रोसीलो मृगराज, पजे न राण प्रतापसी ॥ १७ ॥

टीका-अपने सुखके लिये गीदडरूपी अन्य राजाओंके समूह अकबरके वशमें होगये, परन्तु क्रुद्ध सिंहरूपी महाराणा प्रतापसिंह उसके अधीन नहीं होंगे ॥ १७ ॥

अकबर कूट अजाण, हियाफूट छोडै न हठ ॥
पगां न लागण पाण, पणधर राण प्रतापसी ॥ १८ ॥

टीका-अकबर अज्ञान और मूर्ख है जो अपने झूठे हठको नहीं छोडता, परन्तु उसके पैरोंमें नहीं पडनेकी प्रतिज्ञाको धारण करनेवाले महाराणा प्रतापसिंह अपने पराक्रमको नहीं छोडेंगे ॥ १८ ॥

है अकबर घर हाण, डाण ग्रहे नीची दिसट ॥
तजे न ऊंची ताण, पोरस राण प्रतापसी ॥ १९ ॥

टीका-अकबरके घरमें हानि होनेके कारण वह चलते समय अपनी दृष्टि नीची कर लेताहै, परन्तु ऊंची दृष्टिसे देखनेवाले महाराणा प्रतापसिंह अपने पुरुषार्थको नहीं छोडते (नीची दृष्टि अधर्म, पराजय, और लज्जासे होती है और ऊंची दृष्टि धर्म, विजय और कुलाभिमानसे होती है) ॥ १९ ॥

जाणे अकबर जोर, तो पिण ताणे तोर तिड ॥
आ बलाय हू ओर, पिसणा पोर प्रतापसी ॥ २० ॥

टीका-अकबर अपने बलको जानताहै तोभी यवनजातिके पक्षको नहीं छोडता, परन्तु यह नहीं जानता कि शत्रुओंको भक्षण करजानेवाले महाराणा प्रतापसिंह और ही आफतहैं २०

अकबर हिये उचाट, रात दिवस लागी रहै ॥
रजवट वट समराट, पाटप राग प्रतापसी ॥ २१ ॥

टीका-अकबरके हृदयमें रात दिन उचाटनही लगा रहता है, परन्तु महाराणा प्रतापसिंह क्षात्र धर्मके अभिमानको रखने वाले सम्राट् शिरोमणि हैं ॥ २१ ॥

अकबर मारग आठ, जवन रोक राखे जगत ॥
परम धरम जस पाठ, पढियो राण प्रतापसी ॥ २२ ॥

टीका-यवन अकबरने संसारमें आठोंही मार्गों (चार वर्ण-धर्म और चार आश्रमधर्मों) को रोकदिये हैं, परन्तु उसमें भी अपने परम धर्मके यशको पाठ करनेवाले अर्थात् धर्मके रक्षक महाराणा प्रतापसिंह ही हैं ॥ २२ ॥

अकबर समँद अथाह, तिँहँ डूबा हींदू तुरक ॥
मेवाडो तिण मांह, पोयण फूल प्रतापसी ॥ २३ ॥

टीका-अकबर अथाह समुद्र रूपहै और उसमें हिन्दू और यवन डूब गये हैं, परन्तु मेवाडके पति महाराणा श्रीप्रतापसिं-

हजी उस समुद्रमें कमलके फूलके समान ऊंचे रहनेसे जलको स्पर्श नहीं करते ॥ २३ ॥

अकबरिये इक वार, दागल की सारी दुनी ॥
अणदागल असवार, रहियो राण प्रतापसी ॥ २४ ॥

टीका–अकबरने एकही वारमें सब दुनियांके दाग लगा दिया अर्थात् सब घोडोंके बादशाही दाग लगा दिये परन्तु विना दागके घोडेके सवार महाराणा प्रतापसिंहही रहे हैं ॥ २४ ॥

अकबर घोर अँधार, ऊँघाणा हींदू अवर ॥
जागै जगदातार, पोहरै राण प्रतापसी ॥ २५ ॥

टीका–अकबररूपी घोर अन्धकारमें और सब हिन्दू तंद्रित होगये, परन्तु जगतका दाता महाराणा प्रतापसिंह (धर्मरूपी धनकी रक्षा करनेके लिये) पहरे पर खडा है ॥ २५ ॥

जग जाडा जूझार, अकबर पग चांपै अधिप ॥
गौ राषण गुंजार, पिंडमें राण प्रतापसी ॥ २६ ॥

टीका–जगतमें जितने अच्छे वीर हैं वे सब अकबरके पैर दबाते हैं, परन्तु पृथ्वी और गौकी रक्षा करनेवाले महाराणा प्रतापसिंह अकबरके हृदयको चांपते हैं (अर्थात् अकबरके वैरी होनेके कारण उसे महाराणाका सदा ध्यान बना रहता है)२६॥

अकबर कनैं अनेक, नम नम नीसरिया नृपति ॥
अनमी रहियो एक, पहुवी राण प्रतापसी ॥ २७ ॥

टीका-अकबरके पास सब राजा मस्तक नमा २ कर निकल गये पृथ्वीपर महाराणा प्रतापसिंहही केवल अनम्र रहाहै॥२७॥

करै कुसामद कूर, करै कुसामद कूकरा॥
दुरस कुसामद दूर, पुरस अमोल प्रतापसी॥२८॥

टीका-खुशामद यातो झूंठे मनुष्य करत हैं, या कुत्ते करते हैं, मैं दूसरा कवि खुशामदसे दूर होकर कहता हूं कि अमूल्य पुरुष महाराणा प्रतापसिंह ही हैं॥ २८॥

अकबर जंग उफाण, तंग करण भेजै तुरक॥
राणावत रिड राण, पाण न तजै प्रतापसी॥ २९॥

टीका-अकबर युद्धकी ऊफानसे महाराणाको तंग करनेके लिये यवनोंको भेजता है, परन्तु रावणके समान हठ करने वाले राणा उत महाराणा प्रतापसिंह अपने पराक्रमको नहीं छोडते॥ २९॥

हलदी घाट हरोल, घमँड उतारण अरि वडा॥
आरण करण अडोल, पहुँच्यो राण प्रतापसी॥ ३०॥

टीका-शत्रुकी सेनाका गर्व मिटानेके लिये हलदी घाटकी लडाईमें अग्रसर होकर युद्ध करनेके लिये अविचल महाराणा प्रतापसिंह पहुंचे॥ ३०॥

थिर नृप हिन्दुसथान, लातरगा मग लोभ लग ॥
माता भूमी मान, पूजै राण प्रतापसी ॥ ३१ ॥

टीका-जो हिन्दुस्थानके स्थिर (सदैवके) राजा थे वे तो लोभके मार्गमें लगकर थक गये परन्तु पृथ्वीको माता मानकर पूजनेवाले महाराणा प्रतापसिंह ही हैं ॥ ३१ ॥

सेलां अणी सिनान, धारा तीरथमें धसे ॥
देण धरम रण दान, पुरट सरीर प्रतापसी ॥ ३२ ॥

टीका-हे महाराणा प्रतापसिंह ! भालोंके अग्रभागोंसे स्नान करते हुए और खड्गोंकी धारारूपी तीर्थमें प्रवेश करके स्वधर्मके लिये युद्धक्षेत्रमें स्वर्णरूपी शरीरका दान देतेहुए तो आपहीको देखे हैं ॥ ३२ ॥

ढिग अकबर दल ढाण, अग अग झगडै आथडै ॥
मग मग पाडै माण, पग पग राण प्रतापसी ॥ ३३ ॥

टीका-अकबरकी सेनाका समूह दौडकर पर्वत पर्वतपर युद्धमें लडता है, उसको जहां जहां मार्गोमें महाराणा प्रताप-सिंह मिलता है वहीं वहीं पैरपैरपर उस सेनाका अभिमान दूर कर देता है ॥ ३३ ॥

दिल्ली हूँत दुरूह, अकबर चढियो एक दम ॥
राण रासिक रणरूह, पलटै केम प्रतापसी ॥ ३४ ॥

टीका– कठिनाईसे तर्कनामें आने योग्य अकबरने दिल्लीसे एकदम चढाई की, जिसे सुनकर युद्ध रसिक महाराणा प्रतापसिंह अपनी इच्छाको कैसे पलटें ॥ ३४ ॥

चीत मरण रण चाय, अकबर आधीनी विना ॥
पराधीन दुख पाय, पुनि जीवैं न प्रतापसी ॥ ३५ ॥

टीका–महाराणा प्रतापसिंहकी निरन्तर इच्छा यही है कि युद्धमें मरजाना परन्तु अकबरके अधीन न होना, अतः पराधीनताके दुःखको पाकर महाराणा प्रतापसिंह जीवित रहना नहीं चाहते ॥ ३५ ॥

तुरक हिंदवां ताण, अकबर लायो एकठा ॥
मेछां आगल माण, पाण कृपाण प्रतापसी ॥ ३६ ॥

टीका–जिस समय अकबर सब हिन्दू और मुसलमानोंको इकट्ठे करके मेवाडपर चढ आया, तो उस समय उन म्लेच्छोंके सामने महाराणा प्रतापसिंहने अपने खड्गके बलसे ही अपना गौरव रक्खा ॥ ३६ ॥

गोहिल कुळ धन गाढ, लेवण अकबर लालची ॥
कोडी दे नँहँ काढ, पणधर राण प्रतापसी ॥ ३७ ॥

टीका–गुहिलके वंशका स्वाधीनतारूपी द्रव्य लेलेनेके लिये बहुत लालच करता है परन्तु अपने मानको धारण करने वाला महाराणा प्रतापसिंह उसमेंसे एक कौडी भी निकालकर नहीं देते ॥ ३७ ॥

अकबर मच्छ अयाण, पूंछ उछालण बल प्रबल ॥
गोहिलवत गह राण, पाथोनिधी प्रतापसी ॥ ३८ ॥

टीका-अकबरका अज्ञान मत्स्य रूप है जो अपनी प्रबल सेनारूपी पूंछको उछलता है परन्तु गुहिलके वंशवाला महाराणा प्रतापसिंह गंभीर समुद्रके समान हैं सो उस पूंछ उछलनेसे मर्यादा नहीं छोडेंगे ॥ ३८ ॥

नित गुधलावण नीर, कुंभी सम अकबर क्रमैं ॥
गोहिल राण गंभीर, पण गुधलै न प्रतापसी ॥ ३९ ॥

टीका-अकबररूपी हाथी अन्य सब राजाओंका पानी गुधला देता है अर्थात् राजाओंका मान हरलेता है परन्तु गुहिलवंशके महाराणा प्रतापसिंहरूपी ऐसा गंभीर समुद्र है कि, जिसका पानी अकबररूपी हाथीसे मैला नहीं होता ॥ ३९ ॥

उडै रीठ अण पार, पीठ लगा लाखां पिसण ॥
वेढीगार बकार, पैठो उदियाचल पतो ॥ ४० ॥

टीका-अमित शस्त्रोंकी राठ उड रही है, और लाखोंशत्रु पीठपर लगे हुये हैं उस समय भी वेढ (युद्ध) करनेवाले वीर प्रतापसिंहने ललकार कर उदयपुरमें प्रवेश किया ॥ ४० ॥

अकबर दल अप्रमाण, उदैनयर घेरै अनय ॥
पागां बल पूमाण, साहां दलण प्रतापसी ॥ ४१ ॥

टीका-अकबरकी अप्रमाण सेना अनीतिसे उदयपुरको घेर लेती है, परन्तु खुम्माणके वंशवाला महाराणा प्रतापसिंह अपने खड्गके बलसे बादशाहको पीस डालता है ॥ ४१ ॥

देवारी सुरद्वार, अडियो अकबरियो असुर ॥
लडियो भड ललकार, पोलां खोल प्रतापसी ॥ ४२ ॥

टीका-देवताओंके द्वाररूपी देवारी द्वारपर असुररूपी अकबर अडा, परन्तु वहां पर महाराणा प्रतापसिंहने दरवाजे खोलकर वीरोंको ललकार कर युद्ध किया ॥ ४२ ॥

रोकै अकबर राह, लै हिंदू कूकर लषां ॥
बीभरतो बाराह, पाडै घणा प्रतापसी ॥ ४३ ॥

टीका-अकबर लक्षों श्वानरूप हिन्दुओंको साथ लेकर मार्ग रोकताहै, परन्तु गर्जना करता हुआ वाराहरूप महाराणा प्रतापसिंह कइयोंको गिरा देता है ॥ ४३ ॥

देखै अकबर दूर, घेरो दै दुसमण घडा ॥
सांगाहर रणसूर, पैंर न षिसै प्रतापसी ॥ ४४ ॥

टीका-अकबरको दूर देखकर दुश्मनोंकी सेना घेरा दे लेती है, परन्तु संग्रामसिंहका पौत्र महाराणा प्रतापसिंह ऐसा रणवीर है कि युद्धमेंसे उसका पैर नहीं डिगता ॥ ४४ ॥

अकबर तडफै आप, फतै करण च्यारूं तरफ ॥
पण राणो परताप, हाथ न चढै अमीरहर ॥ ४५ ॥

टीका-अकबर स्वयं चारोंओर विजय करनेके लिये तडफताहै, परन्तु हम्मीरसिंहका पौत्र महाराणा प्रतापसिंह उसके हाथ नहीं लगता ॥ ४५ ॥

अकबर किला अनेक, फते किया निज फोजसूं ॥
अकल चलै नह एक, पाथर लडे प्रतापसी ॥ ४६ ॥

टीका-अकबरने अपनी फौजसे कई दुर्ग जीत लिये परन्तु महाराणा प्रतापसिंह समभूमिमें लडते हैं जिनको विजय करनेमें उसकी एक भी बुद्धि नहीं चलती ॥ ४६ ॥

दुविधा अकबर देख, किण विधसूं घायल करै ॥
पमँगा ऊपर पेख, पाखर राण प्रतापसी ॥ ४७ ॥

टीका-महाराणा प्रतापसिंहके घोडे पर पाखर देख कर अकबरके मनमें यह द्विविधा उठती है कि उसे घायल क्यों कर करै ॥ ४७ ॥

हिरदै ऊणा होत, सिर धूणा अकबर सदा ॥
दिन दूणा दैसोत, पूणा हैं न प्रतापसी ॥ ४८ ॥

टीका-अकबरके दर्बारमें प्रतिदिन राजा द्विगुणित होते जाते हैं, परन्तु प्रतापसिंहके न होनेके कारण वह उनको अपूर्ण माना करता है, जिससे वह सदा अपना सिर धुना करता है, और उसके हृदयमें राजाओंका अपूर्ण भाव बना रहता है ॥ ४८ ॥

कलपै अकबर काय, गुण पूंगीधर गोडिया ॥
मिणधर छावड मांय, पडै न राण प्रतापसी ॥ ४९ ॥

टीका-अन्य छोटे सर्परूपी राजाओंको वशमें करलेने परभी अकबर अपने मनमें दुःख पाता है क्योंकि मणिधारी सर्पके समान महाराणा प्रतापसिंह उसके छबडेमें नहीं पडता ॥ ४९ ॥

महि दाबण मेवाड, राड चाड अकबर रचै ॥
विषै विषायत वाड, प्रथुल पहाड प्रतापसी ॥५०॥

टीका-मेवाडकी पृथ्वी दबानेके हेतु अकबर युद्ध करता है, परन्तु नुकसान सहन करलेनेवाले महाराणा प्रतापसिंहके आडी बडे बडे पहाडोंकी वाड लगरही है ॥ ५० ॥

बँधियो अकबर वैर, रसत गैर रोकी रिपू ॥
कंद मूल फल कैर, पावै राण प्रतापसी ॥ ५१ ॥

टीका-अकबरसे वैर हो जानेके कारण उस शत्रुने रसद रोक रक्खी है अतः महाराणा प्रतापसिंहको अब कंद मूलफल और केर खानेको मिलते हैं भाव यह है कि वह इन वस्तुओंको खाकरभी अकबरके सामने अनम्र ही रहना चाहता है ॥५१॥

भागै सागै भाम, अम्रत लागै ऊमरा ॥
अकबर तल आराम, पेखै जहर प्रतापसी ॥ ५२ ॥

टीका-महाराणा प्रतापसिंह अपनी स्त्रीको साथ लिये हुए भगते फिरते हैं, जिनको ऊमेर (उदुंबर) भी अमृत लगते हैं, परन्तु अकबरकी अधीनतामें सुखपूर्वक रहना उनको विषरूप लगता है ॥ ५१ ॥

अकबर जिसा अनेक, आहव अडे अनेक अरि ॥
असली तजै न ऐक, पकडी टेक प्रतापसी ॥५३॥

टीका–युद्धमें अकबरके समान कई रिपु अड रहे हैं, परन्तु महाराणा प्रतापसिंहने जो असली टेक पकड रक्खी है उसे वे नहीं छोडते ॥ ५३ ॥

लंघण कर लंकाल, सादूलो भूखो सुवै ॥
कुलवट छोड कपाल पैंड न देत प्रतापसी ॥ ५४ ॥

टीका–महाराणा प्रतापसिंह रूपी शार्दूल लंघन करके भूखा सोजाताहै परन्तु अपनी कुलकी रीतिको छोडकर बादशाहके पास पैर भी नहीं देता ॥ ५४ ॥

अकबर मैंगल अच्छ, मांझल दल घूमै मसत ॥
पंचानन पल भच्छ, पटकै छडा प्रतापसी ॥५५॥

टीका–अकबर मस्त हाथीकी तरह मांझल अर्थात् (बीच) के दलमें घूमा करता है परन्तु महाराणा प्रतापसिंह मांसको खानेवाले सिंहकी तरह छडा (हातल) डालता है ॥ ५५ ॥

दंती दलसूं दूर, अकबर आवै एकलो ॥
चोडै पल चकचूर, पलमें करै प्रतापसी ॥ ५६ ॥

टीका–हाथियोंके दलसे दूर होकर अकबर अकेलाही आता है, परन्तु महाराणा प्रतापसिंह एक पल भरमें ही उसके गर्वको चूर्ण कर देगा ॥ ५६ ॥

चितमें गढ चीतोड, राणारै पटकै रयण ॥
अकबर पुनरो ओड, पेलै दोड प्रतापसी ॥ ५७ ॥

टीका-रत्नरूपी चित्तोडका किला महाराणाके चित्तमें खट-कता है सो अब अकवरके पुण्यका अन्त समझना चाहिये कि जिसको महाराणा प्रतापसिंह दौडकर हठाता है ॥ ५७ ॥

अकबर करै अफंड, मद प्रचंड मारग लगै ॥
आरज भाण अपंड, प्रभुता राण प्रतापसी ॥५८॥

टीका-अकवर मस्त होकर प्रचंड मार्गमें लगाहुआ अफंड कर रहा है, परन्तु आर्योंका प्रभुत्व अखंड सूर्यरूपी महाराणा प्रतापसिंहके हाथमें है ॥ ५८ ॥

वटमूं ओघट घाट, घसियो अकबारिये घणो ॥
इल चंनण उपवाट, परमल उठी प्रतापसी ॥५९॥

टीका-अकवरने अपने शरीर पर बहुत अवघट घाट घिस रक्खा है परन्तु महाराणा प्रतापसिंह रूपी चंदनकी परिमल पृथ्वी पर फैल रही है ॥ ५९ ॥

अकबर जतन अपार, रात दिवस रोकण करै ॥
पूगी समँदां पार, पंगी राण प्रतापसी ॥ ६० ॥

टीका-महाराणा प्रतापसिंहकी कीर्तिको रोकनेके लिये अक-बर रातदिन यत्न करता है, परन्तु वह कीर्ति समुद्रके दूसरे पार पहुंच गई है ॥ ६० ॥

वडी विपत सहवीर, वडी कीत षाटी वसू ॥
धरम धुरंधर धीर, पोरस धिनो प्रतापसी॥ ६१ ॥

टीका-हे वीर ! तुमने पृथ्वीपर बहुत विपत्ति सहकर भी वडी कीर्ति संपादन की है । हे धर्मकी धुरको धारण करने-

वाले धीर महाराणा प्रतापसिंह ! तुम्हारे पुरुषार्थको धन्यवाद है ॥ ६१॥

वसुधा किय विख्यात, समरथ कुल सीसोदियां ॥
राणा जसरी रात, प्रगट्यो भलां प्रतापसी ॥ ६२ ॥

टीका–शीसोदियोंके वंशकी सामर्थ्यको पृथ्वीभरमें प्रकाशित करनेके लिये हे महाराणा प्रतापसिंह ! तुमने यशमयी रात्रिमें भले ही जन्म लिया है ॥ ६२ ॥

जिणरो जस जग मांहिं, जिणरो जग धिन जीवणो ॥
नेडो अपजस नांहिं, पणधर धिनो प्रतापसी ॥ ६३ ॥

टीका–जगत्में उसीका जीना धन्य है जिसका यश संसारमें फैल गया हो, हे दृढ प्रतिज्ञाको धारण करनेवाले ! महाराणा प्रतापसिंह ! अपयश तुम्हारे समीप है ही नहीं अतः तुम धन्य हो ॥ ६३ ॥

अजरामर धन एह, जस रह जावै जगतमें ॥
दुख सुख दोनूं देह, सुपन समान प्रतापसी ॥ ६४ ॥

टीका–जगतमें अखंड रहनेके लिये अजर और अमर धन एक यश ही है । हे महाराणा प्रतापसिंह ! इस देहके साथ सुःख और दुख दोनों स्वप्नके समान अस्थिर हैं ॥ ६४ ॥

अकबर जासी आप, दिल्ली पासी दूसरा ॥
पुनरासी परताप, सुजस न जासी सूरमा ॥ ६५ ॥

टीका–एक दिन स्वयं अकबर भी संसार छोडकर चला जावेगा, और दिल्ली दूसरोंको प्राप्त होजायगी परन्तु हे धर्मके

समूहरूप वीर महाराणा प्रतापसिंह ! तुम्हारा यश संसारसे कदापि नहीं जावेगा ॥ ६५ ॥

सफल जनम सुदतार, सफल जनम जग सूरमा ॥
सफल जोग जग सार, पुरत्रय प्रभा प्रतापसी ॥६६॥

टीका—श्रेष्ठ दाताका, श्रेष्ठ वीरका, और श्रेष्ठ योगीका जन्म होनेसे ही संसार सफल माना जाता है । हे महाराणा प्रताप- सिंह ! इन तीनोंकी कीर्ति ही तीनों लोकोंमें विस्तृत होती है ॥ ६६ ॥

सारी बात सुजाण, गुण सागर गाहक गुणां ॥
आयोडो अवसाण, पाँतारियो न प्रतापसी ॥ ६७ ॥

टीका—हे महाराणा प्रतापसिंह ! तुम समग्र बातोंको श्रेष्ठ रीतिसे जाननेवाले, गुणोंके समुद्र, और दूसरोंके गुणोंके ग्राहक हो, अतः इस हाथमें आयेहुए समयको भूलना नहीं ॥ ६७ ॥

छत्रधारी छत्र छाह, धरम धाय सोयो धरा ॥
बांह गह्यांरी बाह, परत न तजैं प्रतापसी ॥ ६८ ॥

टीका—हे छत्रपति महाराणा प्रतापसिंह ! धर्म सब पृथ्वीमें भगता हुआ तुम्हारे छत्रकी छायामें आकर सोयाहै अर्थात् धर्मने मेवाडमें आनेपर आपकाही आश्रय पायाहै अतः अपने हाथमें धारण लिये हुए उस धर्मको दृढ प्रतिज्ञावाले आप कदापि नहीं छोडोगे ॥ ६८ ॥

अंतिम येह उपाय, वीसंभर न विसारिये ॥
साथै धरम सहाय, पल पल राण प्रतापसी ॥ ६९ ॥

टीका—हे महाराणा प्रतापसिंह! अखीरमें यही एक उपाय है कि, परमेश्वरको कदापि नहीं भूलना, क्योंकि प्रत्येक पलमें धर्मका रक्षक केवल परमात्मा ही है ॥ ६९ ॥

मनरी मनरै मांहि, अकबररै रहगी इकस ॥
नरवर करिये नांहिं, पूरी राण प्रतापसी ॥ ७० ॥

टीका—अकबरकी आंट उसके मनकी मनमें रहगई जिसको हे नरोत्तम महाराणा प्रतापसिंह! आप पूर्ण कभी मत करना अर्थात् यवनके वशमें मत होना ॥ ७० ॥

अकबरियो हत आस, अंब पास झांपै अधम ॥
नांषै हिये निसास, पास न राण प्रतापसी ॥ ७१ ॥

टीका—अकबरने आशा रहित होकर आम खासमें नीची दृष्टि कर रक्खी है - और महाराणा प्रतापसिंहको सामने न देखकर हृदयसे निःश्वास डालता है ॥ ७१ ॥

मनमें अकबर मोद, कलमां विच धारे न कुट ॥
सुपनामें सीसोद, पलै न राण प्रतापसी ॥ ७२ ॥

टीका—अकबरको स्वप्नमें भी महाराणा प्रतापसिंह समीप नहीं दीखता अतः यवनोंके मध्यमें स्थित उसके मनमें हर्ष नहीं है ॥ ७२ ॥

ऐ जो अकबर काह, सैंधव कुंजर साँवठा ॥
वांसै तो वहताह, पंजर थया प्रतापसी ॥ ७३ ॥

टीका—हे महाराणा प्रतापसिंह ! अकबरके घोडे और हाथियोंका दल तेरे पीछे फिरते फिरते सूखकर अस्थिशेष होगया है ॥ ७३ ॥

चारण वरण चिंतार, कारण लष महमां करी ॥
धारण कीजे धार, परम उदार प्रतापसी ॥ ७४ ॥

टी०—हे क्षत्रियोंमें परम उदार महाराणा प्रतापसिंह ! क्षत्रियोंका यथार्थ वर्णन करना चारणोंका जातिधर्म है इस कारणको चिंतवन करके मैंने जो आपकी महिमा की है वह धारण करनेके योग्य है जिसे आप धारण कीजिये ॥ ७४ ॥

आभा जगत उदार, भारत वरष भवान भुज ॥
आतम सम आधार, प्रथवी राण प्रतापसी ॥ ७५ ॥

टी०—उदारपनसे संसारको शोभायमान करनेवाले हे महाराणा प्रतापसिंह ! यह भारतवर्ष आपहीके भुजोंपर स्थित है अतः हे आत्माके तुल्य आधार महाराणा ! पृथ्वीपर एक आपही दृष्टि आते हो ॥ ७५ ॥

कवि प्रारथना कीन, पंडित हूँ न प्रवीण पद ॥
दुरसो आढो दीन, प्रभु तुव सरण प्रतापसी ॥ ७६ ॥

टी०—कवि प्रार्थना करता है कि मैं दुरसा नामक आढा गोत्रका दीन चारण न तो पंडित हूं और न चतुर हूं अतः हे प्रभो ! प्रतापसिंह मैं तेरे शरण हूं ॥ ७६ ॥

इति विरुद छिहत्तरी ।

[नोट-"विरुद्धछिहत्तरी" के निर्माता कविवर दुरसाजीका बनाया एक गीत भी प्राप्त हुआ है वह यहां ही नीचे लिखा जाता है-]

गीत (१४०)

आयां दल सबल सामहो आवै,
रंगिये खग खत्रवाट रतो ।
ओ नरनाह नमो नह आवै,
पतसाहण दरगाह पतो ॥ १ ॥
दाटक अनड दण्ड नह दीधो,
दोयण घड सिर दाव दियो ।
मेल न कियो जाय विच महलां,
कैलपुरै खग मेळ कियो ॥ २ ॥
कलमां बांग न सुणिये काना,
सुणिये वेद पुराण सुझै ।
अहडो सूर मसीत न अरचै,
अरचै देवल गाय उझै ॥ ३ ॥
असपत इन्द्र अवनि आहाडियां,
धारा झाडियां सहे धका ।

वण पाडियां सांकडियां घडियां,
ना धीहडियां पढी नका ॥ ४ ॥
आखी अणी रहै ऊदावत,
साखी आलम कलम सुणो ।
राणै अकबर बार राखियो,
पातल हिन्दूधरम पणो ॥ ५ ॥

[आढा " दुरसाजी " कृत]

क्षात्रधर्म परायण महाराणा प्रतापसिंह पातसाहके सबल दल अर्थात् अनेकानेक भटोंसे भीषण (डरावनी) चतुरंगिनी सेनाएं आनेपर शत्रुओंके शोणित (खून) से रंगेहुए खड्गको धारण करके उन्हीके सम्मुख आता है । परन्तु अपने अभिमानको छोड शिर झुकाकर बादशाहके दर्बारमें नहीं आता ॥ १ ॥ वैरियोंको रोकनेके लिये विजयशाली अनड (अनम्र) वीरने कभी दण्ड (नजराना) नहीं दिया किन्तु शत्रुओंकी सेनाके सिरोंपर धावाही दिया । केशपुरा राना महलोंमें जाकर पातसाहसे नहीं मिला प्रत्युत (बल्कि) खड्गोंसे ही मेल किया अर्थात् सर्वदा अकबरकी सेनासे युद्ध ही करता रहा परन्तु सन्धि नहीं की ॥ २ ॥ ऐसा धीर और वीर महाराणा अपने कानोंसे यवनोंका बांग मारना नहीं सुनता किन्तु परम पावन वेद और पुराणोंके उपदेश श्रवण करता है । कभी मसजिदमें जाकर सिजदा नहीं करता किन्तु देवालय और गाय इन दोनोंकी सेवा करता है ॥ ३ ॥ इन्द्ररूपी पातसाह जब जब कोप करके आडम्बर सहित घटाएं बांधकर

आहडता है अर्थात् आक्रमण करता है उस समय धारारूपी खड्ग धाराओंकी झडीमें धक्का (वेग) सहता है। अनेक बार घणी सांकडी घडी पडनेपर अर्थात् घोर विपत्ति उपस्थित होनेपर भी उसको सहन की और अपनी मर्यादा नहीं छोडी उस वीर महाराणाको वंशज पुत्रियोंने दिल्ली जाकर नका नहीं पढी ॥ ४ ॥ ऊदावत अर्थात् उदयसिंहका पुत्र महाराणा सर्वदा अग्रगण्य रहा। सब संसार और विशेष कर यवन भी इस बातके साक्षी हैं कि अकबरके विकट समयमें भी महाराणा प्रतापसिंहने हिन्दुओं अर्थात् आर्योंके धर्मको यथावत् पालन किया ॥ ५ ॥

सूरायचजी टापऱ्या चारणकृत–

सोरठे (१४१से१५० तक)

चेला वंस छतीस, गुर घर गहलोतां तणो ॥
राजा राणा रीस, कहतां मत कोई करो ॥ १ ॥

टी०–कवि कहता है कि क्षत्रियोंके छत्तीस वंश चेले (पक्षपलेडे) हैं, जिनमें 'गुहिलोतों (शीसोंदियों) का घर वडा है' यह कहनेमें कोई भी राजराणा क्रोध न करना क्योंकि कविका धर्म सत्य कहनेका है ॥ १ ॥

चंपो चीतोडाह, पोरस तणो प्रतापसी ॥
सोरभ अकबर साह, अलियल आभडियो नहीं २ ॥

टी०—महाराणा प्रतापसिंहका पराक्रम चंपेके वृक्षके समान है जिसकी सुगंधिपर अकबर रूपी भ्रमर कभी नहीं आता २॥

माथै मैंगल षाग, तैं वाही परतापसी ॥
बांट किया बे भाग, गोटी साबू तांत गत ॥ ३ ॥

टी०—हे महाराणा प्रतापसिंह ! तुमने हाथीके ऊपर खड्ग चलाया, सो तांतसे साबुनकी गोली कट कर दो टुकडे हो जाती है इस तरह दो टुकडे कर दिये ॥ ३ ॥

सांग ज सोवरणांह, तैं बाही परतापसी ॥
जो बादल करणांह, पैं प्रगट्टी कुंजरां ॥ ४ ॥

टी०—हे महाराणा प्रतापसिंह ! तुमने स्वर्णके रूपवाली बरछी चलाई सो बद्दलको फोडकर सूर्यकी किरणें निकलती हैं, इस प्रकार हाथीके पार निकलगई ॥ ४ ॥

मांझी मोह मराट, पातल राण प्रवाड मल ॥
दुजडां किय द्रहबाट, दल मैंगल दाणव तणा ॥५॥

टी०—अनेक युद्ध जीतनेवाले और मोहको मारनेवाले वीर प्रतापसिंहने भालोंसे यवनोंकी सेना और हस्तियोंका नाश कर दिया ॥ ५ ॥

सहनक तणां सुजाण, पारीसा पातल तणा ॥
तैं राहविया राण, एकण हूंता ऊदवत ॥ ६ ॥

टी०—अन्य सुजान (राजा) तो सब 'सहनक' अर्थात् मिट्टीके पात्रमें भोजन करनेवाले हो गये (मिट्टीके पात्र यव-

नोंके दस्तरखानमें लगाये जाते थे), परन्तु पत्तलमें परोसा हुआ भोजन तो एक प्रतापसिंहके लियेही है, हे उदयसिंहके पुत्र ! यह रीति एक तुमने ही रक्खी है आशय यह है कि सब राजा यवनोंके सहभोजी हो गये केवल प्रतापसिंह नहीं हुआ ॥ ६ ॥

एही भुजे अरीत, तसलीमज हींदू तुरक ॥
माथे निकर मजीत, परसादकै प्रतापसी ॥ ७ ॥

टीका–पराक्रममें ऐसी कुरीति होगई है कि हिन्दू यवनोंसे झुक झुककर सलाम करते हैं, केवल महाराणा प्रतापसिंह ही ऐसा है जो मसजिदोंके समूहोंपर देव मन्दिर बनवाता है ॥ ७ ॥

रोहे पातल राण, जां तसलीम न आदरै ॥
हींदू मुस्सलमाण, एक नहीं तां दोय हैं ॥ ८ ॥

टीका–चिरा हुआ महाराणा प्रतापसिंह जबतक झुककर सलाम करना स्वीकार नहीं करता तबतक हिन्दू और मुसलमानोंको एक नहीं जानना चाहिये भिन्न भिन्न ही हैं ॥ ८ ॥

चोकी चीतोडाह, पातल पडवेसां तणी ॥
रहचेवा राणाह, आयो पण आयो नहीं ॥ ९ ॥

टीका–महाराणा प्रतापसिंह यवनोंके टुकडे करनेको तो आया, परन्तु यवनोंकी चोकी देनेको कभी नहीं आया ॥ ९ ॥

निगम निवोण तणांह, नागद्रहानरहरज्युहीं ॥
रावंत वद राणाह, पिंड अणखूट प्रतापसी ॥ १० ॥

टीका-वेदको १ निपान (जलाशय) अखूट है, और २ नृसिंहका पराक्रम अखूट है, इसी प्रकार महराणा प्रतापसिंहके शरीरकी वीरता अखूट है ॥ १० ॥

सोरठा (१५१)

गिरपुर देस गमाड, भमिया पग पग भाखरां ॥
मह अँजसै मेवाड, सह अँजसै सीसोदिया ॥ १ ॥

[जोधपुरके महाराज मानसिंहजी कृत]

[नोट-जोधपुरमें जब अनेक उपद्रव होने लगे तब उनको शान्त करनेके लिये अंगरेजी सरकारने अपनी फौज भेजी, उस समय महाराजा मानसिंहजीने अपने सरदारोंसे सलाह की तो उनने अंगरेजी सरकारको प्रबल बताया और कुचामन ठाकुरने कहा कि बादशाहसे लडना बुरा है, राणाजी लड़े थे सो पैर पैर पर्वतोंमें फिरे थे, इसके उत्तरमें महाराजा साहबने उक्त दोहा फरमाया था ॥]

टीका-अपने पर्वत, नगर, और देश गमाकर पैदल ही पर्वतोंमें घूमते रहे पर महाराणाने अपने धर्मकी रक्षा की जिससे आज मेवाडका देश गर्व करता है और शीसोदिया जाति घमंड करती है ॥ १ ॥

मुक्तक काव्य (१५२ से १५५ तक)

हिन्दू हींदूकार, राणा जे राखत नहीं ॥
तो अकबर एकार, पहो सहो करत प्रतापसी ॥ १ ॥

हे हिन्दुओंके प्रभु प्रतापसिंह! जो राणा हिन्दुओंकी कार अर्थात् आर्यधर्मको नहीं रखते तो अकबर सबको एकाकार (एक जातवाले) अर्थात् यवनधर्मावलम्बी बना देता ॥ १ ॥

हिन्दूपति परताप!, पत राखी हिन्दवाणरी।
सहे विपति संताप, सत्य सपथ कर आपणी ॥२॥

हे हिन्दूपति प्रतापसिंह! तैंने हिन्दुओंकी लाज रखली। और अनेक प्रकारकी विपत्तियां और सन्ताप सह करभी अपनी सची सपथ (शपथ) अर्थात् प्रतिज्ञाका पूर्णरूपसे निर्वाह किया ॥ २ ॥

छप्पय।

'गुज्जरेस' गंभीर नीर नीझर निराझियो,
अति अथाह 'दाऊद' बुंद बुंदन उव्वरियो।
थांम वृट 'खुराय जाम' जलधर हरि लिन्हव,
हिन्दू-तुरक-तलावको न कर्दमवस किन्हव।
कवि 'गंग' अकब्बर अक्क गन (अन)
नृप निपान सब वस करिय।
राना प्रताप रयनाक मझ,
छिन डुब्बतं छिन उच्छरिय ॥ ३ ॥

[सुप्रसिद्ध कविवर गंगकृत]

टीका-गुजरातके पतिका जो अत्यन्त गंभीर (ओंडा) नीर अर्थात् पराक्रमजल उसको नीझर निकालकर खाली

करडाला । इसी प्रकार ' दाऊद ' का भी जो अथाह जल था उसे बूंद २ करके निःशेष करदिया । घाम अर्थात् आतपकी घूंटसे (प्रचण्ड तापसे) जो ' जाम ' देशका जलधर (मेघ) रूपी राजा रघुराय है उसका भी जल हरालिया । हिन्दु तथा मुसलमानोंका कौनसा तालाव रहा, जिसका पराक्रमरूपी जल खेंचकर उसे कर्दममय नहीं किया और जो अन्य राजा-रूपी निपान थे उन्हें सर्वथा सुखा दिये । कवि गंग कहता है कि अकबररूपी अक्क (अर्क) अर्थात् सूर्यने सब राजा महा-राजाओंको उनका पराक्रम जल सोख २ कर वस कर लिया परन्तु महाराणा प्रतापसिंहरूपी रयनाक अर्थात् रत्नाकर (समुद्र) में वह क्षणमात्रमें डूबता है और क्षणमात्रमें ऊपर उछलता है अर्थात् महाराणा प्रतापसिंहके पराक्रमजलको नहीं सोख सकता प्रत्युत क्षण २ में स्वयं ही डूब २ कर बचता है ॥ ३ ॥

छप्पय ।

दल पैलां ऊथपे, तेज ब्रह्म हिं उत्थप्पे,
उत्तर दक्खिण पछिम पूर्व ता पाण पणप्पे ।
अन अनेक भुवपत्त वांग श्रवणां सुण रत्ते,
नमि प्रणाम आधीन करै सेवा बहु भत्ते ।
खात्रियाण माण महि उद्धरण एकं छत्रि आलमकैहै ।
गायत्रि मन्त्र गहलोतगुर तिहिं प्रताप शरणै रहै ॥ ३ ॥

टी०-पातसाहने शत्रुओंकी सेनाओंको पराजित (परास्त) करदी। और ब्रह्मतेजकोभी उखाड डाला। उत्तर और दक्षिण एवं पूर्व तथा पश्चिम सब दिशाएं उसके हाथ पडगईं बहुतसे दूसरे भूपति (राजा) यवनोंका बांग मारना सुनकर प्रसन्न होते हैं। और झुक २ कर सलाम करते हैं। तथा अकबरके अधीन होकर नानाप्रकारसे उसकी सेवामें तत्पर हैं। सब संसार कहता है कि ऐसे समयमें क्षत्रियोंके मानका अर्थात् सच्चे क्षात्रधर्मका उद्धार करनेवाला केवल एक छत्री (राजा) भूमण्डलपर है कि उस गहलोतोंमें गुरु (श्रेष्ठ) प्रतापसिंहके गायत्री मन्त्र शरण है अर्थात् एकमात्र महाराणा प्रतापसिंहही अखण्ड ब्रह्मतेजकी रक्षामें जागरूक (सावधान) है ॥ ३ ॥

स्वामी गणेशपुरीजीकृत कवित्त-

(१५६ से १६१ तक)

बाढी वीर हाक हर डाक भुव चाक चढी,
ताक ताक रही हूर छाक चहुँ कोद मैं।
बोलिकै कुबोल हय तोल बहलोलखां पै,
बागो आन कत्ता रान पत्ताको विनोदमैं ॥
टोप कटि टोटी लाल टोपा कटि पीत पट,
सीस कटि अंग मिली उपमा सुमोद मैं।
राहू गोद मंगलकी मंगल गुरूकी गोद,
गुरू गोद चंदकी रु चंद रवि गोद मैं ॥ १ ॥

टीका-चारोंओर शूर वीरोंकी हाक वढी, महादेवकी डाक (वाद्यविशेष) वीरोंका उत्साह वढाने लगी, भूमि चक्र पर चढी अर्थात् कंपायमान हुई, और अप्सराएं तृप्त होकर चारों-ओर देखने लगीं, ऐसे समयमें अश्वको सम्हाल कर कटुवचन बोलते हुए महाराणा प्रतापसिंहने विनोदमें मुगलवहलोलखांपर अपना कत्ता (खड्ग) चलाया, जिससे उसका टोपा कटकर नीचेकी लाल टोपी टोपा, पीला कपडा, शिर और शरीर तक कटगया, उस समय आनन्दमें क्रमसे ऐसी उपमा प्रतीत हुई कि मानों श्यामवर्ण राहु रक्तवर्ण मंगलकी गोदमें, मंगल पीत-वर्ण बृहस्पतिकी गोदमें, बृहस्पति स्वच्छ चंद्रमाकी गोदमें और चंद्रमा ओजस्वी सूर्यकी गोदमें हों ॥ ४ ॥

[नोट-इस वृत्तका एक उत्तम सोरठा भी सुना जाता है, वह यह है-

खल वहलोल खपार, पेल दल लाखां प्रसण,
अस चेटक उलटार, पहुँतो उदयाचल पतो ॥

लाखों शत्रुओंके दल अर्थात् सेनाको छिन्न भिन्न कर और दुष्ट वहलोलखांको मारकर विजयी वीर महाराणा प्रतापसिंह अपने चेटक घोडेको वापिस लौटाकर उदयपुर पहुंचे ॥]

दावा अरु धावा दुर्गदासको दिखावा जग,
रान पास आवा साथ पावा सूर सत्तासो ।
जावा अमरेसको वखानै सब देस पै न,
आवा बन्यौ मारि मर्चो मीर रोस रत्ता सो ॥

आवा शिवराजको न जावा वन्यौ जैसी विधि,
यहै म्लेच्छ मुच्छ काट लावा मोद मचासो ॥
दावा रान पत्ता सो न धावा रान पत्ता सो न,
जावा रान पत्ता सो न आवा रान पत्ता सो ॥ २ ॥

टी०-जगत्में दावा करना व धावा देना दुर्गेशका प्रसिद्ध है, परन्तु बादशाह स्वयं सेनाके साथ महाराणाके ही पास आया । ऐसे ही जाना अमरसिंहका विख्यात है पर वह वहां ही काम आये और निज वीरतासे आ न सके ॥ इसी तरह आना शिवाजीका प्रख्यात है परन्तु उनका आना वीरतासे नहीं हुआ, और यह महाराणा प्रसन्नतासे ही बादशाहकी मूछतक काट लाया अतः महाराणा प्रतापसिंहके समान दावा, धावा, जाना और आना किसीका भी नहीं हुआ ॥ २ ॥

[नोट-इस कवित्तमें बादशाहका स्वयं सेनाके साथ आकर महाराणासे युद्ध करनेका और महाराणाका उसकी मूछ काट लेनेका इतिहास कविकी कल्पनामात्र है क्योंकि लोक कथनसे तो यह बात सुनी गई है परन्तु इतिहासोंसे यह बात साबित नहीं है । महाराणा प्रतापसिंह और अकबर कभी शामिल नहीं हुए थे.]

कोल खान खानाके प्रतापसिंह रानापर,
बाना हिंदवानाको सुहाना तो गयारीतैं ।
दाहके करन पातसाहके उराहनैपै,

चाहके मरन रनराहके जयारी तैं ।

पानि देकैं मुच्छन कृपान पुनि पानि देकैं,

पानलौं उडावैं म्लेच्छ वीरता वयारीतैं ।

सूरनके हाके होत कूरनके साके होत,

हूरन इलाके होत तूरन तयारीतैं ॥ ३ ॥

टी०—खानखानाके वचन हैं कि हिन्दुस्थानका वाना महाराणा प्रतापसिंह पर सिंहके समान अच्छा लगता है । जलन पैदा करनेवाले वादशाहके रहने पर युद्धके मार्गमें मरना विचार कर जीतके लिये शत्रुओंके अर्थ मूंछोंपर हाथ देकर और फिर तलवार पर हाथ देकर वीरतारूपी पवनसे यवनोंको पानके समान उडा देता है । जहां शूरोंके हाके हो रहे हैं कायरोंके साके हो रहे हैं, अप्सराओंके वीरोंको वरनेके परगने हो रहे हैं, और नगारे वज रहे हैं ॥ ३ ॥

गेर गेर लाज सब राज रहैं पैर परे,

जेर भए फेर सुर मेरके सिखर जात ।

'एक लिंग' वासमें बिलासको निवास जानि,

राधिका रमन चहैं रमन रिखरि जात ।

आछी आछी मीरनीके आखिरी उजीरनीके,

चीर नीके चीर दृग नीर जी निखरि जात ।

बेर बेर घेर उदैनेरकों असुर औरं,

हेर हेर परैं पत्ता बेरसे बिखरि जात ॥ ४ ॥

टी०—सब राजा लाज छोडकर पैरों पडे रहते हैं और अधीन होगये हैं, देवता फिर मेरुके शिखरपर जाते हैं । एकलिंगके वासमें (मेवाडमें) विलासका निवास जानकर श्रीकृष्ण रमण करना चाहते हैं । अच्छी २ मीरों और वजीरोंकी स्त्रियोंके आंखोंके आंसू और जीव उनके अच्छे २ चीरों (वस्त्रों) को चीरकर निकल जाते हैं । घडी २ यवनलोग उदयपुरको घेर- नेको अडते हैं जिनको हेर हेर कर प्रतापसिंह उनपर पडता है तो वे बेरकी नांई बिखर जाते हैं ॥ ४ ॥

हेरि हेरि हारि हिय हहरि हरिननैनी,

हुरम कहत हठ तिय नाह नत्ता है ॥

दीनसों अदीन ह्वैकैं तेरे नेह पीन ह्वैकैं,

मीन जल लीन ह्वैकैं खीन ह्वै न खत्ता है ॥

बब्बरको नातिय अकब्बर सु अब्बरसे,

मेल्हे फरमान मेल कीबे मोद मत्ता है ॥

बालसो रु तालसो पसारिनके जाल जैसो,

ज्वाल जैसो काल जैसो पत्ता रन रत्ता है ॥५॥

टी०—बादशाहकी मृगाक्षी स्त्रियां पराजयको देख देख कर घबराकर हठसे कहती हैं कि अपना स्त्री पुरुषका संबंध है, और अपने धर्मको छोडकर तेरे स्नेहमें पुष्ट होनेके कारण हमने अन्य निकृष्ट धर्मको अंगीकार किया है और पानीमें

मच्छीकी तरंह लीन होकर दुर्बल होरही हैं, ऐसा हमारा कोई अपराध नहीं है । बाबरका पौत्र अकबर अब्बर (जौंहर) की तरंह प्रसन्न होकर सन्धि करनेका फरमान भेजता है, परन्तु महाराणा प्रतापसिंह बालक, ताला, पसारियोंके समूह अग्निकी ज्वाला और काले (यम) की भांति अपने रणरूप कर्तव्योंमें अत्यन्त आसक्त हैं ॥ ५ ॥

छप्पय ।

नच्चन बेर निहारि,
पुत्त कहि चारु प्यार चहि ॥
उहि छिन उमँगि उडात,
कंध धरं हाथ भ्रात कहि ॥
खग्ग उठत रन रंप्पि,
बप्प कहि अप्प विरुद्द वर ॥
तात भ्रात सुत सोक,
गर्जव निक परिग अरिग गर ॥
कट्टिग न पैर कट्टिग यकत,
कट्टिग मान निसान घन ॥
हय मरिग नहिं न चेटक अहह,
मरिग रान पत्ता सुमन ॥ ६ ॥

टी०—जिस अश्वको नाचता हुआ देखकर पुत्र पुत्र कहकर प्यार किया, उसही समय प्रसन्न होकर जब उसे उड़ाया तो कंधेपर हाथ धरकर भाई भाई कहा और युद्धमें डट कर उसे बाग उठाकर अपना बाप बाप कहकर खिलाया उस अश्वके मरनेसे महाराणा प्रतापसिंहके गले मानो पुत्र भ्राता और पिताका शोक पड गया। खेदका विषय है कि उस घोडेका पैर नहीं कटा किन्तु मानका दृढ निसान कट गया हा!!! चेटक अश्व नहीं मरा किन्तु महाराणा प्रतापसिंहका मन मर गया॥ ६॥

कवित्त (१६२ व १६३)

अज्ज धर्म रच्छक इतै रु जवनिंद उतै,
घाट हलदी रन झमावैं भट भालोंकों,
वीर दोरदण्डन उदग्ग मण्डलग्गनतैं,
सच्छुन ज्यौं तोंति चीरे देत गजढालोंकों।
भ्हरन ताप कान्दसीक प्रतिपच्छी बने,
पदग्रस्त बुल्लत बिलोकि रक्त नालोंकों।
साक पानेवाले रान पत्ताकी कृपान पिक्खि,
लगत जुलाबसी पुलाब खानेवालोंकों॥ १॥
म्लेच्छनकों नमिबो अयोग्य लखि खाद्य गने,
समयानुकूल कन्द मूल फल पत्ताकों,

राज्य–द्रंग–दुर्ग-देश वैभवज सुःख हेय,
राखी दृढ वंशपरिपाटीकी प्रमत्ताकों ।
खग्ग बल विस्तारि अकब्बरसे शत्रु अग्ग,
इक्कल निबाह्यौ जिहं वेदधर्म नत्ताकों.
आसमुद्र उर्विवासी अज्ज कृतमन्य देत,
धन्यवाद वीर अग्रगण्य रान पत्ताकों ॥ २ ॥

[' हणूत्या ' ग्रामनिवासी बारहठबालावक्स पालावत रचित]

[नोट–पहिला कवित्त हलदी घाटपर जो युद्ध हुवा था, उसहीके वर्णनका है और दूसरे कवित्तसे कविने महाराणा साहबको धन्यवाद दिया है ।]

टी–इधर तो आर्यधर्मके रक्षकमहाराणा श्रीप्रतापसिंह हैं और उधर यवनोंका इष्ट अर्थात् उनके धर्मका पक्षपाती अकबर है । हलदी घाटपर रण मंडा है, जहां भट (वीर) भालोंको घुमा रहे हैं । वीरोंके भुजदण्ड उदग्र अर्थात् तीखे मण्डलग्ग (मण्डलाग्र) अर्थात् खड्गोंसे गढालोंको चीर रहे हैं जैसे कि तांत साबुनको चीर डालती है । महाराणाके खड्गकी तापसे शत्रु कान्दसीक (भयद्रुत) बनगये हैं अर्थात अपना २ प्राण बचा २ कर भागे हैं, और लोहूके प्रवाह देख भयसे त्रस्त होकर पदभ्रस्त अर्थात् स्खलित वचन बोलते हैं, अहो शाकमात्रसे निर्वाह करनेवाले राणा प्रतापसिंहकी तलवार देखकर पुलाव खानेवालोंको जुलावसा लगा है ॥ १ ॥

जिस महाराणाने म्लेच्छोंके आगे नमना सर्वथा अनुचित जानकर समय २ पर प्राप्त हुए कन्द, मूल, फल और पत्तों (शाक) कोही खाने योग्य गिने । और राज्य, पुर, दुर्ग, देश और वैभवके सुखको तुच्छ समझा । अपनी वंशपरम्पराकी कीर्तिको यथावत् वनी रक्खी । तथा जिस बलशालिने अकबर जैसे (प्रबल) शत्रुके आगे खड्गके बलसे वेदधर्मका सम्बन्ध निवाहा । उस वीराग्रगण्य महाराणा प्रतापसिंहको समुद्र पर्यन्तके भूमण्डलनिवासी आर्य जन कृतज्ञतापूर्वक धन्यवाद देते हैं ॥ २ ॥

कवित्त (१६४)

अखिल जहान यो बखानतहै आननतैं,
मेदपाट मंडन प्रताप बल बंडकों ।
पाक साक पचत रसोईमें तथापि तेरो,
पिंड नां तजत रजपूतीके घमंडकों ।
कवि 'हिंगलाज' नव खण्डनमें नाना विधि,
पण्डित पढत पावै सुजस अखण्डकों ।
जापै भारि दण्ड नृप झुंडनके मुण्ड झुकैं,
तापैं भुजदण्ड तेरे मापैं ब्रह्मण्डको ॥

[सेवापुरग्राम निवासी हिंगलाजदान कविया कृत]

टीका—सारा संसार मेवाडके भूषण और बलवण्ड अर्थात् बडे शूरवीर महाराणा प्रतापसिंहके प्रतापको इस प्रकार मुखसे

बखान करता है कि, हे राणा! यद्यपि तेरी रसोईमें शाकही पाक बनता है अर्थात् ऐसी शोचनीय अवस्था है तथापि तेरा तन रजपूतीके घमंडको नहीं छोडता कवि हिंगलाज कहता है कि नवों खण्डोंमें पण्डित जन तेरे अखण्ड सुजस गाते हैं। जिस बादशाहके आगे नजराना देकर अन्य नृपसमूह शिर झुकाते हैं. अर्थात् दूसरे राजा जिसके सामने अत्यन्त नम्रभावसे सलाम करते हैं, उस यवनसम्राट पर तेरे भुजदण्ड ब्रह्माण्डको मापते हैं अर्थात् सर्वदा खड्ग धारण करके शत्रुका संहार करनेको उद्यत रहते हैं ॥

गीत (१६९) मरसिया)

सामो आवियो सुरसाथ सहेतो,
ऊँच वहा ऊदाणा ॥
अकबर साह सरस अणमिलियां,
राम कहै मिल राणा ॥ १ ॥
अम गुर कहै पधारो पातल,
प्राझा करण प्रवाडा ॥
हेवै सरस अमलिया हींदू,
मोसूं मिल मेवाड़ा ॥ २ ॥
एकंकार ज रहियो अलगो,
अकबर सरस अनैसो ॥

विसन भणै रुद्र ब्रहम विचाले,

बीजा सांगण बैठौ ॥ ३ ॥

[आढा शाखाके चारण दुरसाजी कृत]

टीका-ऊंची खैंचनेवाले उदयसिंहके पुत्र महाराणा प्रतापसिंहके सन्मुख देवताओं सहित विष्णु भगवान्ने आकर कहा कि अकबरसे स्नेहपूर्वक नहीं मिलनेके कारण हे मेवाड़के राजा प्रतापसिंह! अब मुझसे मिल ॥ १ ॥ परमेश्वर कहते हैं कि हे बहुत युद्ध करनेवाले महाराणा प्रतापसिंह! पधारिये और यवनोंसे स्नेहपूर्वक नहीं मिलनेके कारण मुझसे मिलिये ॥ २ ॥ तुम हिन्दू और यवनोंका धर्म एक करनेमें दूर रहे हो, और अकबरसे अपरिचित रहे हो, इसलिये हे दूसरे संग्रामसिंहरूपी महाराणा प्रतापसिंह! शिव और ब्रह्माके बीचमें बैठो ॥ ३ ॥

छप्पयं (१६६)

अस लैगो अणदाग,

पाघ लैगो अणनामी ॥

गो आडा गवडाय,

जिको बहतो धुर बामी ॥

नवरोजै नह गयो,

न गो आतसां नवल्ली ॥

न गो झरोखाँ हेठ,
जेठ दुनियाण दहल्ली ॥
गहलोत राण जीती गयो,
दसण मद रसणा डसी ॥
नीसास मूक भरिया नयण,
तो मृत शाह प्रतापसी ॥ १ ॥

[आढा दुरसाजी कृत]

टीका–हे महाराणा प्रतापसिंह ! तेरी मृत्यु होनेपर बादशाहने रसना डसी, और निःश्वासके साथ नेत्र भरलिये अर्थात् आपके कालवश होनेसे बादशाहने शोक प्रकट किया कि हा ! गहलोत राणा जीत गया, वह अपने अश्वको बिना दागही लेगया अर्थात् उसके घोडेके शाही दाग नहीं लगसका, हा ! वह अपनी पाघको अणनामी (बिना नमायें) ही लेगया अर्थात् मेरे दर्बारमें आकर सलामी नहीं हुआ, जो सदा वामभावसेही धुरको धारण करताथा अर्थात् बडा प्रबल शत्रु था वह गया, हा ! वह वीर कभी नवरोजे नहीं गया और उसने कभी आतससंबन्धी क्लेश नहीं सहा । वह दुनियांका ज्येष्ठ अर्थात् संसारमें अत्यन्त उन्नत प्रतिष्ठाके शिखर पर आरूढ हुआ महाराणा कभी दिल्लीके झरोखोंके नीचे नहीं आया अर्थात् सलामी नहीं हुआ और अपने मानको यथावत् निभागया (अभिप्राय यह है कि मैं अनेक प्रयत्न करके

भी महाराणा प्रतापसिंहपर अपना प्रभुत्व नहीं कर सका इस लिये मेरे प्रतापमें यह एक वडीभारी न्यूनता रह गई इसहीका वडा सोच है) ॥ १ ॥

[नोट—परमेश्वरकी अपार माया है कि जो वीर महाराणा प्रतापसिंह वादशाही फौजके साथ हजारों वीरोंमें घोडा उठाकर निकल गये । जिनने हजारहों वीरोंको अपनी तरवारसे रण शय्यामें सुला दिया, पर उनके एक भी घाव न लगा । उन्हीं वीर महाराणाका एक सिंहकी शिकारमें कमान चढाकर अंग मोडते समय आंत टूटकर देहान्त होगया ।]

महारणा श्रीअमरसिंहजी ।

महाराणा श्रीअमरसिंहजी वि० सं० १६५३ में गद्दी विराजे और सत्रह लडाइयोंमें वादशाह जहांगीरकी फौजके साथ युद्ध करके विजय पाया । इन लगातार लडाइयोंमें मेवाडके प्रायः समस्त सरदार जो वीर और वडी आयुवाले थे काम आगये पर फिर भी ये लडते ही रहे । सुना जाता है कि अन्तमें जव फौज न रही तव मेवाडके जो सर्दार वाकी वचे थे उनने आग्रह किया जिससे मजबूर होकर वादशाह जहांगीरके साथ सन्धि करलेनी पडी, जिसमें सवसे मुख्य शर्त एक यह थी कि महाराणा वादशाहके पास दिल्ली नहीं जावेंगे, या तो उनके महाराजकुमार जावेंगे या पोते जायाकरेंगे अतएव इन्होंने महाराजकुमार कर्णसिंहको अजमेर भेजा वादशाहने भी यह

गनीमत समझ कर इसको अंगीकार कर लिया । महाराणाने उसी दिनसे उदास होकर राज काज छोडकर एकान्तवास कर लिया और जबतक जीते रहे अमरमहलसे बाहर नहीं निकले । इन महाराणाका देहान्त सं० १६७६ में हुआ था ॥

गीत (१६७)

अकबर दल आल सावलां ओपण,
　जूझ कलह माते रण जंग ॥
रंवदां तणैं रगतसूं राणै,
　राता किया पहाडां रंग ॥
रँग हैवर नर चाढे बेगर,
　कुंजर घाण मथाण कर ॥
मेवाडां * डूंगर मेवाडा,
　आछै रँग रंगिया अमर ॥ २ ॥
असुरां घाट माट ऊकाले,
　घाट घाट पतसाह घड ॥
सांग कलोधर किया सावरत,
　आपाणां जूना अनड ॥ ३ ॥
पग पग पाड राड कैलपुरा,

---

* "आहाडै डूंगर आपाणा" ऐसा पाठान्तरभी सुनाजाताहै ।

रँगिया चोल मजीठां रोद ॥
पातलतणे पुराणा परवत,
सिणगारिया वडे सीसोद ॥ ४ ॥
मांसांचरा धपाडे मांसां,
वांसां करे अमावड वाढ ॥
मावे नहीं पहाडां माहे,
हाथ्यांरा दांतूसल हाड ॥ ५ ॥

टीका–उस वडे युद्धमें मस्त होकर जूझते हुए राणाने अकबरकी फौज जो आलके समान थी उसे भाले रूपी सावलसे ओखणी (छडी) और उन १ तुरकोंके लोहूसे पहाडोंको लाल रंग दिये ॥ १ ॥ वचे हुए घोडे हाथी और मनुष्योंके समूहको घेरकर वेगर (रंगनेका मसाला) के समान मथकर मेवाडपति अमरसिंहने मेवाडके पर्वतोंको अच्छी तरह रंग दिये ॥ २ ॥ महाराणाने बादशाहकी फोजके यवनोंको पर्वतोंके घाटेरूपी मटकोंमें उकालकर उनके रक्तरूपी जलसे अपने पुराने पर्वतोंको रंगीन कर दिये ॥ ३ ॥ केलपुरेने पैंड २ में राड करके यवनोंके रक्तसे मजीठसे चोळ रंगदिये । प्रतापसिंहके पुत्र वडे सीसोदियाने अपने पुराने पर्वतोंका श्रृंगार कर दिया ॥ ४ ॥ शत्रुओंकी पीठमें बहुत घाव लगाकर २ मांसभक्षी जानवरोंको तृप्त करा दिये और पहाडोंमें नहीं मावे ऐसे हाथियोंके दांत तथा हड्डियोंके ढेर लगादिये ॥ ५ ॥

गीत (१६८)

दरजी अमरेस बणाई दोमझ,
तरकी सुजड कूंत षग तीर ॥
रोम रोम पीलाणो रावत,
सिध कंथा ताहरो सरीर ॥ १ ॥
किलमांपत भेटे कारीगर,
कारी घाव निहाव कर ॥
वाल वाल जुडियो थारो वप,
पेवँद आयसतणी पर ॥ २ ॥
पड उसताज आहणे असपत,
दुजडे देतो खलां दुष ॥
केस केस सँधियो कैलपुरा,
रावल अवरतणी रुष ॥ ३ ॥
सुत परताप धगां भर सारां,
इला उजीण दुकान ः
काया अमर गूदडी कीधी,
जगपत गोरषनाथ जिम ॥ ४ ॥

टीका-महाराणा अमरसिंहने अपने शरीरको कंथा (गुदडी) रूप बनाया जिसमें कटारी, भाला, खड्ग और तीरकी तरकी (फटे हुए वस्त्रपर लगानेके लिये अन्य वस्त्रका टुकडा) लगाई,

इसलिये हे वीर! तुम्हारा शरीर सिद्धोंकी कंथाके समान बहुत तरकीवाला है ॥ १ ॥ यवनोंके पतिसे मिलकर जो निरन्तर घाव लगे वही उक्त दुलाईमें (कंथ) कारी (तरकी) है, जिससे तुम्हारा शरीर वाल वाल जुड रहा है, और आयसजी (सिद्ध) की भांति उसमें थेगली (तरकी) हैं ॥ २ ॥ युद्धमें पडकर वादशाहोंको मारे और भालोंसे दुष्टोंको दुःख दिया इसही कारणसे हे केलपुरा ! रावलवावाके वस्त्रकी भांति तेरा शरीर रोम रोम जुड रहा है ॥ ३ ॥ हे महाराणा प्रतापसिंहके पुत्र अमरसिंह ! उज्जैनकी भूमिरूप दुकानमें तैंने अपने शरीरको तागे भरकर गोरखनाथकी गुदडीके समान वहुत तरकियों वाला करदिया ॥ ४ ॥

गीत (१६९)

अह माथै रांग आस लग ऊंचो,
नव षंडे जस झालर नाद ॥
रोप्या भला रायपुर राणा,
पडै न सासणतणां प्रसाद ॥ १ ॥
मेछां अगम सुजसमै मूरत,
गुण पूजाकर पूज गण ॥
आगाहट रोपे इल ऊपर,
अमर तणां देवल अमर ॥ २ ॥

पाषाणां चुडिया सह पडसी,
अधका दिन जातां अन मंध ॥
वडा वडा गजबंध वषाणैं,
वापाहरा तणां धर्जबंध ॥ ३ ॥
अवचल मँडप करे आगाहट,
सुर जिम थापे कवेसुर ॥
मुंह मांगियो सु दीधो मौलें,
पता समोभ्रम रायपुर ॥ ४ ॥

[दुरसाजी आढा कृत]

[नोट–महाराणा अमरसिंहजीने कविवर " दुरसा " जी आढाको " रायपुर " नामका एक ग्राम प्रदान किया था, जिसपर दुरसाजीने दो गीत कहे एक यह और दूसरा इसके आगेका । आगवाले गीतकी कल्पना वडी अनूठी है । उस गीतमें कविने इस प्रकार रचना की है कि, जिससे महाराणाका अतुल प्रताप, प्रशंसनीय पराक्रम और दाक्षिण्य आदि नायक-गुण व्यञ्जना द्वारा प्रतीत होते हैं जिनसे महाराणाका परम उत्कर्ष व्यंग्य होता है ।]

टीका–हे राणा ! तैंने रायपुरनामक ग्रामका १ उदकरूपी २ मन्दिर अच्छा बनाया है कि जिसकी नींव तो शेषके शिरपर है और आकाशतक ऊंचा है और नवों खंडोंमें जिसकी यशरूपी झालर बजती है वह मन्दिर पडेगा नहीं अर्थात

चिरस्थायी रहेगा ॥ १ ॥ महाराणा अमरसिंहने पृथ्वीपर उदकरूपी अमर मन्दिर बनाया है जिसमें यवनोंको अगम्य, ऐसे सुयशकी मूर्ति स्थापित की है और जिसकी पूजा करने वाले गुणरूप पुजारी हैं ॥ २ ॥ पाषाणोंसे चुने हुए अन्य सब मन्दिर अधिक समय बीतनेपर गिर जायँगे, परन्तु बापा रावलके वंशवाले महाराणा अमरसिंहके मन्दिरकी बडे बडे राजा लोग प्रशंसा करेंगे ॥ ३ ॥ हे प्रतापसिंहके सदृश महा॰ राणा अमरसिंह ! मैंनें रायपुर अपने मुंहसे मांगा सोही तैंने मुझे देदिया सो तैंने ५ उदकरूपी ४ स्थायी मन्दिर बनाया और उसमें कवीश्वररूपी देवताकी प्रतिष्ठा की ॥ ४ ॥

गीत (१७०)

अणदीठा जिके गाविया अधपत,
अणदीधां गाया अवर ॥
मागूहूं इतरो मेवाडा,
एकण तो तीरे अमर ॥ १ ॥
गाया म्हैं मांगिया पखै गुण,
गढपति गामांपती गणो ॥
मोटा पत्री द्रवो मेवाडा,
राण पत्रीवँसतणो रणो ॥ २ ॥
राव रावत रावळ के राजा,
राणाहरै राखियो ऋण ॥

तूं हिंदवाण धणी पातलतण,
तो गोदां मांगजे तिण ॥ ३ ॥
ऋण राखियो घणो राजाने,
मिलसां न करे मूझ मन ॥
कर ऊरण कूंभेण कलोधर,
राण अढारह रायहर ॥ ४ ॥
सोह सीलणो कियो सीसोदे,
सूर सोम ते साखि सुर ॥
छत्रियां कुल लहणो छोडवियो,
राण दियंतै रायपुर ॥ ५ ॥

[आढा दुरसाजी कृत]

टीका—हे मेवाडा ! मैंने जिन अधिपतियों (राजाओं) को नहीं देखा, उनका भी सुजस गाया । और जिन राजाओंसे कभी कुछभी नहीं पाया उनकाभी काव्य बनाया । परन्तु हे अमरसिंह ! मैं तेरे पाससे केवल इतनाही मांगता हूं ॥ १ ॥ कि तुझपर जो क्षत्रियवंशका ऋण है अर्थात् 'महाराणाने बादशाहकी सेनामें संयुक्त (सामिल) होकर आये हुए जिन राजाओंको मारे हैं उनकी ओरसे किसीने भी महाराणासे बदला लेनेका दावा नहीं किया, क्योंकि महाराणा प्रचण्ड पराक्रमशाली होनेके कारण किसीके वध्य (मारनेयोग्य) नहीं हुए और न तुमको कोई मार सकता निदान इस प्रकारसे जो कई राजाओंका रजपूतीका ऋण तुम पर है ' उसे हे बडे

क्षत्रिय मेवाडा राणा ! द्रवो अर्थात् देवो । मने गुणोंका पक्ष लेकर अनेक ग्राम पति और गढपतियोंका जैसे गाया है और याचना की है ॥ २ ॥ परन्तु तू हिन्दुओंका धणी है और महाराणा प्रतापसिंहका सुयोग्य पुत्र है (इससे यह अभिप्राय है कि, यह क्षत्रियोंका ऋण तेरे पिताका किया हुआ है इस लिये इस ऋणको चुकादेना तेरा धर्म है) इस कारण कई राव, रावत, रावल और राजाओंने जो राणोंपर अपना ऋण रक्खा है उसे तेरे पाससे मांगना चाहिये ॥ ३ ॥ महाराणा प्रताप-सिंहन राजाओंके ऋणको इतना बढा लिया था कि उसके चुकजानेके लिये मेरा मन साक्षी नहीं देता था, परन्तु हे महा-राणा कुम्भाकी कलाको धारण करनेवाले राणो अमरसिंह ! तू अठारह राजाओंके ऋणको देकर उऋण होगया ॥ ४ ॥ सीसोदियाने सब ऋणका नीठणा (फैसला) अर्थात् सब चुकाकर उद्धार करदिया । उसके देवता सूर्य और चन्द्रमा साक्षी हैं । हे महाराणा ! मुझे " रायपुर " ग्रामका दान करके तुमने क्षत्रियोंके कुलका लहणा (ऋण) छुडालिया अर्थात् अब उस ऋणका दावा तुमसे कोई नहीं करेगा आपने उसी ऋणमें मुझे " रायपुर " देकर फैसला करालिया ॥ ५ ॥

गीत (१७१)

सांगण दूसरा अगनमा उदैसी,
अमरा अंबर अडियो ॥
दे आसीस तनैं दसरावो,
नवरोजे नां वडियो ॥ १ ॥

चरचै चँनण तूझ चीतोडा,
पुहपमाल पहरावै ॥
दासपणों न करै दीवाली,
ईंद तणैं घर आवै ॥ २ ॥
पातलरा छल जाग पतावत,
अरसीरा छल आगै ॥
यल जसरात जनमियो अमरा,
जमांरात नह जागै ॥ ३ ॥
चित्रांगड हद सोह चावदा,
सोह हमीर सरीषा ॥
लापाहरा नकूं लेपवियो,
तथ मेले तारीषां ॥ ४ ॥

टीका— हे दूसरे संग्रामसिंह और दूसरे उदयसिंहरूपी अमरसिंह ! तुझे आर्योंका त्योंहार दसहरा आशीर्वाद देता है कि जो तेरे ही प्रतापसे नवरोजे नहीं पहुंचा ॥ १ ॥ हे महाराणा ! दीपमालिका तुझे चंदनसे चरचती और पुष्पमाला पहिनाती है कि जिसने तेरे प्रतापसे ईंदके (यवनोंके) घरमें जाकर दासपन नहीं किया ॥ २ ॥ हे अमरसिंह ! तू यशकी रात जनमा था अतः महाराणा प्रतापसिंह और अरिसिंहके १ यशके लिये तैंने भी जुम्मारातमें जाकर जागरण नहीं किया ॥ ३ ॥ हे लाखाके वंशवाले महाराणा अमरसिंह तैंने

चित्तोडकी शोभाको और हम्मीरसिंह सरीखे पुरुषाओंकी शोभाको हदतक बढानेके लिये तिथिके साथ यवनोंकी तारीखें लगाकर कभी हिसाब नहीं किया ॥ ४ ॥

दोहा (१७२)

कमधज्ज हाडा कूरमा, महलां मोज करंत ॥
कहजे पानापाननें, बनचर हुवा फिरंत ॥ १ ॥

टीका-राठोड, हाडा और कछवाहे तो महलोंमें आनन्द भोगते हैं परन्तु खानखानाको कहदेना कि हम जंगलाकी तरह वनोंमें घूमा करते हैं ॥

दोहा (१७३)

चहुवाणां दिल्ली गई, राठोडां कनवज्ज ॥
राण पयंपे पाननें, वो दिन दीसै अज्ज ॥ २ ॥

टीका-महाराणा अमरसिंह खानखानाको कहते हैं कि जिस दिनके पलटनेसे चहुवाणोंसे दिल्ली और राठोडोंसे कन्नोज चला गया वही दिन आज हमको हमारे लिये भी दीखता है ॥

[नोट-उपरोक्त दोनों दोहे महाराणा अमरसिंहजीने नवाब खानखानाको लिखे थे जिसके उत्तरमें नवाब खानखानाने निम्न लिखित दोहा लिख भेजा था.]

दोहा (१७४)

धर रहसी रहसी धरम, पप जासी पुरसाण ॥
अमर विसंभर ऊपरे, राप नहचो राण ॥ १ ॥

टीका-तुम्हारी पृथ्वी तुम्हारे ही रहेगी और धर्म भी तुम्हारा यथावत बना रहेगा एवं यवन नाश पाजावेंगे सो हे महाराणा! उस अविनाशी विश्वंभर पर विश्वास रक्खो ॥

महाराणा श्रीकर्णसिंहजी।

उक्त महाराणा वि. सं. १६७६ में गादी विराजे इनके समयमें दिल्लीसे कोई युद्ध न हुआ अतः इनका शासनसमय बहुत शान्तिसे बीता। जहांगीर बादशाहका शाहजादा खुर्रम अपने पितासे बागी होकर उदयपुरमें शरण चला आया जिसको महाराणा कर्णसिंहजीने बहुत सत्कारसे रक्खा। इनका देहान्त विक्रमी संवत् १६८४ में हुआ था ॥

गीत (१७५)

प्रगट कोट गड पाड, साही धरा पलटजै,
सुणै सेप तणों उवर सीधो ॥
जान कर परणवा जावतां जैतहत,
करण तैं मालनो फतै कीधो ॥ १ ॥
धर नयर चवूंसे तेण रिव धूंधलो,
अमरवत आद सेवरै अणभंग ॥
सिपर असंपत तणों उवेर छीनो नहीं,
सुणे सुरताण तो अभनमा संग ॥ २ ॥
सपर्ड षुरसाण लाहोर पड संक सह,
महा मेछां तणों माण मलियो ॥

आपरी धरा उगराह कूंमर अंग,
बाय नीसाण दिस. घरां वलियो ॥ ३ ॥
(गांगण्य जातिके चारण मंछोंजा कृत).

[नोट—यह गीत महाराणा कर्णसिंहजीके कुंवरपदेके समयका है, जिस समय बादशाही सेनासे युद्ध करके महाराणा अमरसिंहजीने मालवा खोसा था, उस समय कर्णसिंहजीने वडी वीरतासे युद्ध किया था उसी समयका वर्णन इस गीतमेंहै

टीका—लेखूका उदर सीधा सुनकर बादशाहकी भूमिको पलटते समय हे वीर कर्णसिंह ! जान बनाकर व्याहनेको जाते हुए तैनें मालवा विजय कर लिया ॥ १ ॥ हे अमरसिंहजीके पुत्र ! तुमने भूमि और नगरोंका नाश कर डाला जिससे सूर्य धुंधला होगया अतः हे राणाके पुत्र ! तुम्हारा मोड (मुकुट) अभंग है, हे दूसरे संग्रामसिंहरूपी महाराणाके पुत्र ! तुमने मालवा क्या छीना है मानो १ बादशाहका २ उदर छीन लिया ॥ २ ॥ हे कुंवर कर्णसिंह ! ३ देश सहित खुरासान और लाहोरमें भय घुस गया और म्लेच्छोंका दर्प जाता रहा, इस प्रकार अपनी पृथ्वीका उद्धार करके वह कुमार ध्वजा उडाकर अपने घर पीछा आया ॥ ३ ॥

महाराणा श्रीजगतसिंहजी। (बडे)

ये महाराणा वि. सं. १६८४में मेवाडकी गद्दी विराजे। इनके समयमें भी दिल्ली आदिके साथ कोई युद्ध नहीं हुआ और इनका राज्यसमय भी बहुत शान्तिसे बीता, दिल्लीके बादशाह शाहजहांने ' जो कुछ समय तक शाहजादेकी हालतमें उदयपुरमें शरण रहा था सुना जाता है कि उसका बदला देनेके

लिये महाराणाको कईबार स्नेहसहित दिल्ली बुलाया परन्तु उक्त महाराणाने अपने पितामह महाराणा अमरसिंहजीकी प्रतिज्ञा बनी रखनेकी इच्छासे दिल्ली जानेसे इनकार किया । ये महाराणा बहुत बडे दानी थे जिनने चारणोंको ८४ ग्राम, सात सौ हाथी और छप्पन हजार घोडे दिये थे इन महाराणाका देहान्त वि. सं. १७०९ में हुआ था ॥

गीत (१७६)

ग्रहतै सत डोर जगा छत्रियां गुर,
बोह मोजां विध अतुल बल ॥
ऊडी जग ऊपर अहाडा,
कीरत गूडी तणी कल ॥ १ ॥
कंव कव सुष जैकार करंती,
इल हूंता गम अगम अडे ॥
मेर सिषर ऊपर मेवाडा,
चंग ज्युहीं गुणवाण चडे ॥ २ ॥
करन सुजाव वधे तो करणां,
कल हूँता गम अगम किया ॥
चाढे धूमंडल चीतोडा,
धू धारक जिम ब्रह्मधिया ॥ ३ ॥
जस वाषाण राजपँछ वाजै,
अलष भुयण घण सुणे इम ॥

राणा अवर वणा दिन रहसी,
जुग जुग पंगी चंग जिम ॥ ४ ॥

टीका–इस गीतमें कीर्तिको गुड्डी (पतंग) कल्पना करके उसका सुमेरु शिखरपर पहुंचना कहा है, अभिप्राय यह है कि महाराणा जगतसिंहकी कीर्तिस्वर्गतक जापहुंची ! हे क्षत्रियोंमें गुरु (श्रेष्ठ) और बहुत दान करनेवाले अतुलबल· शाली महाराणा जगतसिंह ! तेरी कीर्तिरूपी गुड्डीकी कल अर्थात् (पतंग) सतरूपी डोरको लेकर अर्थात् सत्त्व अथवा सत्यका आश्रय करके जगत्के ऊपर उड़ी ॥ १ ॥ और कवि कविके मुखपर जयशब्द करती हुई अर्थात् कवियोंसे प्रशंसा पाती हुई पृथ्वीसे चलकर आकाशतक जा पहुंची । हे मेवाड़ा । तेरी गुणवती अर्थात् शौर्यादि गुणोंसे युक्त कीर्ति गुणवती अर्थात् डोरसे लगी हुई गुड्डीके सदृश सुमेरुके शिखर पर जा चढ़ी ॥ २ ॥ हे कर्णसिंहके पुत्र ! अथवा कर्णके सदृश दान करनेवाले ! तेरी कीर्तिरूपी कल (पतंग) ने अगम्य स्थानोंमेंभी गमन किया अर्थात् जहां पहुंचना अत्यन्त कठिन है वहां भी जापहुंची । हे आर्यधर्मके धुरंधर चीतोड़ा ' ब्रह्म-धिया ' अर्थात् ब्रह्माकी (धी) पुत्री (सरस्वती) कीर्ति ध्रुवमण्डलपर भी जापहुंची ॥ ३ ॥ हे राणा ! तेरे जसका वखाण गरुड शब्द करता है जिसको अलख भुयण अर्थात् अलख जो परमेश्वर उसके भवनमें अथवा अलख (नहीं प्रत्यक्ष हो) लोकमें दोनों ही प्रकारसे (स्वर्गमें) बहुधा सुणते हैं । हे जगतसिंह । तेरी कीर्ति चंग (पतंग) की भांति जगत्में बहुत दिनोंतक व्याप्त रहेगी ॥ ४ ॥

गीत (१७७)

अवर देस देसांतणां लार कर एकठा,
रेसिया मुगलां दीध राये ॥
हेक सिर नावियो नहीं सांगाहरे,
जगे पतसाहरे द्वार जाये ॥ १ ॥
झाड पाहाड मेवाडरा झाटके,
जूझ रूपी हुवो षाग झाले ॥
मुगलां न गो दिल्लीस थाणा मिलण,
हींदवाणां तणों छात हाले ॥ २ ॥
राण रजपूत वट तणों छल राषियो,
साहसूं नांषियो तोड सांधो ॥
कमर बँध छोडकर जोड डँडवत करण,
करनरे नामियो नहीं कांधों ॥ ३ ॥
जगतसी अमरसी उदैसी जेहवो,
छातपत केम कुल राह छाडै ॥
राण सीसोदियो टेक झाले रहै,
एक पतसाहसूं कंध आडै ॥ ४ ॥

(बारहठ शाखाके चारण गोविन्दजा कृत)

टीका—अन्य राजाओंने देश देशान्तरोंका कर इकट्ठा करके खिजे हुए मुगलोंको देदिया, परन्तु संग्रामसिंहके पोते

जगत्सिंहने बादशाहके द्वारपर जाकर अपना शिर नहीं नमाया ॥ १ ॥ मेवाडके पहाडोंपर कई बार बादशाहकी फोजने आक्रमण किया, वहां हिन्दुओंका छत्रपति खड्ग लेकर कालरूप हो रणमें जूझा, परन्तु दिल्लीपति मुगलके दरबारमें मिलनेको नहीं गया ॥ २ ॥ राणाने क्षत्रियोंके मार्गके १ लिये ही धर्म रक्खा और बादशाहसे सन्धि नहीं की अन्य नृप कमरसे खड्ग खोलकर हाथ जोड कर सलाम करते हैं, परन्तु कर्णसिंहके पुत्रने कन्ध नहीं नमाया ॥ ३ ॥ यह राणा जगत्सिंह उदयसिंह व अमरसिंहके सदृश है अतः अपना कुलधर्म कैसे छोडे; हिन्दुपति शीसोदिया राणा जगत्-सिंह अपनी टेक नहीं छोडता, सदा बादशाहके साथ अनम्र-भाव रखता है ॥ ४ ॥

महाराणा श्रीजगत्सिंहजीने 'मूंदाड' क ठाकुर चारण कविवर करणीदानजीका स्वयं सन्मुख पधार कर स्वागत किया था जिसका यह निम्नलिखित दोहा प्रसिद्ध है।

दोहा।

करनारो जगपत कियो, कीरत काज कुरब्ब।
मन जिण धोखो ले मुआ, साह दिलीस सरब्ब ॥

टीका—महाराणा जगत्सिंहने कीर्तिके लिये करणीदानका कुरब अर्थात् सन्मुख आकर विशेषरूपसे वह सत्कार किया कि जिसका दिल्लीके सब बादशाह धोखा लेकरही मरगये।

दोहा (१७८)

सिंधुर दीधा सातसो, हैंवर छपन हजार ॥
चोरासी सांसण दिया, जगपत जग दातार ॥ १ ॥

[नोट- महाराणा जगत्सिंहजीने स्वर्णके कई तुलादान किये और अपनी उमरमें इनने चारणोंको ८४ ग्राम, सातसौ हाथी और छप्पन हजार घोडे दिये इस विषयमें निम्नोक्त दोहा प्रसिद्ध है, और ब्राह्मणोंको दान दिया जिसकी संख्या एक श्लोकमें है ॥]

टीका-जगतमें दातार महाराणा जगतसिंहने सातसौ सिन्धुर (हाथी) दिये और छप्पन हजार घोडे प्रदान किये, और चौरासी पट्टे भूमिशासनके कर दिये ॥ १ ॥

गीत (१७९)

घांसो हर नरां पाषरां गरहर,
वसू हुवे नच वलावेला ॥
असपत तणोचीत आहाडा,
तुला चढंतां हुवे तुला ॥ १ ॥
जगपुड जगा पाषरां जंगम,
रमहर माथै घात रहै ॥
रुकमां जोष जोषियां राणा,
पाडिया जोषै दिली पहै ॥ २ ॥

माण थाण परसण विय मोकल,
घसेण फोज पड वण घणी ॥
घणी चंत्रंग वैसतां धारणं,
धारणं चको दिली धणी ॥ ३ ॥
कल्मांथर गाहे करनायत,
चायंधुर कनक तुला चडियो ॥
भलदाता चेंलो तो भारी,
असपत चेंलो ऊपडियो ॥ ४ ॥

[नोट—इन महाराणाने स्वर्णके कई तुलादान किये हैं जिन की यादगारमें उदयपुरमें, राजमहलोंमें बडी पोल और त्रिपोलि-याके बीचकी पूर्वकी दीवार पर पत्थरके कई तोरण बने हैं जो एक एक तुलादान पर एक एक तोरण बनाया गया था]

टीका—१ सेनामें मनुष्यों और पाखरोंका शब्द होकर पृथ्वी-पर २ चारोंओर नाच होरहा है, हे पहाडके पति महाराणा ! आपके तुला बैठनेके समय ३ बादशाहका चित्त हलका होग-या ॥ १ ॥ हे जगतसिंह ! तेरे घोडोंकी पाखरोंसे पृथ्वीपर ४ शत्रुओंके सिरपर घात रहती है हे महाराणा ! तेरे स्वर्ण आ-दिके आभूषणोंसे तुलते समय दिल्लीके पतिको आतंक (भय) पडगया ॥२॥ दूसरे मोकल महाराणा ! तेरे बडे मान और बडे स्थानके कारण इतनी बडी बडी सेनाएं चलती हैं कि ५ मार्ग पडगये हैं ६ हे चित्तोडके पति ! तेरे ७ तराजूमें बैठते समय

दिल्लीका पति ८ विचार चूक गया है ॥ ३ ॥ हे कर्णसिंहके पुत्र ९ वीर जगत्सिंह ! तेरे मुसलमानोंकी पृथ्वी दबाकर सोनेकी तुला चढनेसे हे महादानी ! तेरा १० पलडा तो भारी हो गया और बादशाहका पलडा हलका होनेसे ऊंचा हो गया॥४

महाराणा श्रीराजसिंहजी (बडे)

महाराणा राजसिंहजी वि० सं १७०९ में गद्दी विराजे। ये महाराणा असाधारण वीर और प्रतापी हुए हैं। अथवा यों कहना चाहिये कि दूसरे महाराणा प्रतापसिंहजी ही थे। बादशाह औरंगजेबके क्रूर और निर्दयी राज्यसमयमें यदि हिन्दुओंके धर्मका रक्षक कोई हुवा है तो केवल महाराणा राजसिंहजी ही थे। ये वीरपुंगव हिन्दूधर्मकी रक्षाके लिये अपना प्राण सदा हथेलीमें ही लिये रहते थे। सुना जाता है जिस समय औरंगजेब हिन्दुधर्मको संसारमेंसे नष्ट कर देनेके लिये निरन्तर चेष्टा कर रहा था, उस समय महाराणा राज सिंहजीने ही काजियोंकी डाढियां मुंडवा कर उनको जबरदस्ती पुराण पढाये थे। इन महाराणाका औरंगजेबके साथ द्वेष तो पहिले ही चला आता था परन्तु अन्तमें कई कारण ऐसे होगये कि जिनसे औरंगजेबको बहुत बडी फौज लेकर उदयपुर पर चढ आना पडा। इन कारणोंमेंसे एक कारण उस पत्रका भी था जो महाराणाने जिजिया नामक कर लगानेके समय बहुत कठोर विलक्षण शब्दोंमें बादशाहको लिखा था, जब औरंगजेब उदयपुर पर चढ आया तो उस समय उक्त महाराणाजीने उदयपुरमें घिर कर लडना उचित न समझा अतः उदयपुरको खाली करके पश्चिमी पर्वतोंमें चलेगये और वहांपर कई बार बादशाही सेनाको

पराजित करके अपनी वीरताका परिचय दिया । और अन्तमें हलदी घाटीके स्थानपर स्वयं औरंगजेबसे बहुत बडी लडाई लडनेका निश्चय करके "ओडां" नामक ग्राममें मुकाम किया और दूसरे दिन बादशाही सेना पर हमला करनेको सवार होना चाहते थे पर कुछ कायर और हरामखोर नीच सेवकोंने अपने मरनेके भयसे भोजनमें विष मिला दिया जिससे वि० सं० १७३७ में उक्त महाराणाका देहान्त होगया । इन महाराणाके कृपापात्र दधिवाडिया शाखाके चारण आसकरनजी थे जिनको ये महाराणा भाई कहा करते थे ये भी इसी विषसे मारे गये । इन महाराणाने वि० सं० १७१८ में 'राज समुद्र' नामका एक बहुत बडा तालाब बनवाना प्रारंभ किया जो वि० सं० १७३२ में संपूर्ण हुआ इस तालाबके बनवानेमें अनुमान ४० लाख रुपये और इसकी प्रतिष्ठाके समय उत्सव और दान पुण्यमें अनुमान ६५ लाख रुपये व्यय हुए थे, यह तालाब उदय पुरसे पचीस मीलकी दूरी पर है ॥

गीत (१८०)

परम अंस राजेस थन वंस हींदूपती,
लियो विसताररो तोम हीलोल ॥
जितूं करवा तणो सोच न कियो जितो,
इन्द्र भरवा तणो कियो आलोच ॥ १ ॥
जगातण राजसामुद्र जग जाणियो,
बयण वाखाणियो येह बारूं ॥

करनहर तमासे हेल माटे कियो,
सुरांपत वि मासे वेल सारूं ॥ २ ॥
बरुण येतो कठा आणसूं विचारै,
चवै इम तरणसूं मूंह चडियो ॥
करण दरियावरी रीत लष कैलपुर,
पुरंदर भरणरो चीत पडियो ॥ ३ ॥
राण महराण एहो कियो राजसी,
तेण जल न्हाण दुनियाण तरियो ॥
नरांरे पती मोटो इसो निवँधियो,
भुयण-पत सुरांरै नीठ भरियो ॥ ४ ॥

टीका-हे परमेश्वरके अंश हिन्दूपति महाराणा राजसिंह ! हे श्रेष्ठ वंशवाले ! तैंने ' राजसमुद्र ' तालाव बनवाकर विस्तारका भी अन्त लेलिया, तैंने उक्त तालाव बनवानेका विचार ; न नहीं किया जितना इन्द्रने इसे भरनेका सोच किया ॥ १ ॥ महाराणा जगत्सिंहके पुत्रके ' राजसमुद्र ' को जब जगत्ने जाना तो प्रशंसाके यह वचन कहे कि महाराणा कर्णसिंहके पोतेनें जो तालाव खेलमात्रमें बनवाया है उसको इन्द्र दो मासमें क्योंकर भरेगा ॥ २ ॥ कैलपुरा (महाराणा) की तालाव बनवानेकी रीतिको देखकर इन्द्रने भरनेकी चिन्तामें

पड़कर सूर्यसे कहा कि अब इतना जल कहांसे लाऊंगा, इस तरहं इन्द्रको भरनेका सोच पड़ गया ॥ ३ ॥ हे राजा राजसिंह ! तैंने ऐसा समुद्र बनाया कि जिसके जलमें दुनियाँ स्नान कर २ के तिर गई। मनुष्योंके पति महाराणाने ऐसा बड़ा समुद्र बनाया कि जिसको देवताओंके पति इन्द्रने कठिनाईसे भरा ॥ ४ ॥

गीत (१८१)

रचतां इसो राजसर राणा,
 लेपो जगरो कवण लहै ॥
अस सूरज बहतो आधंतर,
 वेलां पग मांडतो वहै ॥ १ ॥
लागे आज लोडंगी लहरां,
 ऊमडतै दरियाव उतंग ॥
सूरजतणों हींदवा सूरज,
 पाणीपंथो कियो पमंग ॥ २ ॥
जगपत राण तणां जालाहेल,
 जगत कथे जस जुगो जुगो ॥

हैवर दणियर अधर हालतो,
हवै सवर आधार हुवो ॥ ३ ॥
एको समँद इसो ओल्हैरियो,
सात समँद जण हुवा समास ॥
देसी तो आसीस घणा दिन,
सूरज देव तणों सपतास ॥ ४ ॥

टीका-हे महाराणा ! तुमने ' राजसमुद्र ' ऐसा बडा बनाया है कि जिसमें जलका प्रमाण कौन लेसकता है सूर्यका अश्व जो पहिले आकाशमें चलता था सो अब तरंगोंपर पैर रखने-वाला होगया ॥ १ ॥ इस उमंडते हुए जलाशयकी उत्तुंग लहरें आकाशको १ चाटती हैं, जिनमें हे हिन्दुओंके सूर्य ! महाराणा ! सूर्यके अश्वको पानीपंथा (पानीपर चलनेवाला) बना दिया ॥ २ ॥ हे २ सूर्यरूपी महाराणा ! हे जगत्‌सिंहके पुत्र ! जगत्‌में तेरा यश जुदा जुदा कहते हैं कि सूर्यका ३ घोडा पहिले विना आधार चलता था सो अब यह तेरा सरोवर उसके आधार होगया है ॥ ३ ॥ तैंने एकही समुद्र ऐसा ४ रचा है कि जिसके सामने सातों समुद्र छोटेसे दीखने लग गये अतः सूर्यदेवका ५ सप्ताश्व घोडा तुझे बहुत दिनतक आशीर्वाद देवेगा ॥ ४ ॥

गीत (१८२)

विध चूका वैद न जाणै वेदन,
औषध लहै न पीड अथाह ॥
रात दिवस पटकै उर राजो,
साजो तेण नहीं पतसाह ॥ १ ॥
पैगां चढ चोगान न पेल्है,
वेलै पडियो राज वियोग ॥
आंगमणी सीसोद न आवै,
रोद हिये ताइ लागो रोग ॥ २ ॥
मालपुरा सरपा गढ मारे,
रांणै पर हंस दीध रिण ॥
भोग सँजोग नहीं रस भीनो,
ओरँग छीनो रोग इण ॥ ३ ॥
धूणैं सीस न धूणैं धजवड,
मारै रीस सहै मन मांय ॥
जगातणैं असमाध जगावी,
जवन तणां घट हूंत न जाय ॥ ४ ॥

टीका—उपचार भूलेहुए वैद्य वेदना नहीं जानकर वृथा इलाज करते हैं क्योंकि बादशाहके कलेजेको राणा राजसिंहने रात दिन पीडित कर रक्खा है अतः इस रोगपर हकीमोंके नुसखे नहीं चलते ॥ १ ॥ घोडोंपर सवारी करके बादशाह चौगानमें नहीं आता और राणाके आतापसे राज्यका वियोग होना सोचकर बरबरता है। सीसोदिया कब्जेमें नहीं आता इसी बिमारीका दुःख मुसलमान् शत्रुके शरीरमें छा रहा है ॥ २ ॥ मालपुरा जैसे गढोंको बिगाड कर राणाने दिल्लीकी भूमिको अपने हाथमें कर ली, इस व्यथासे ही सर्व सुखाक संयोगको भोगता हुआ भी 'औरंगजेब' क्षीण होता जाता है ॥ ३ ॥ तरवार घुमानेका जोश नहीं रहा अतः केवल मस्तक घुमाता है, और अपने अहंकारकी खीजको मनही मनमें मारता है। राणा जगत्सिंहजीके पुत्रने ऐसा रोग लगाया है कि, जो यवनके शरीरसे नहीं जावेगा ॥ ४ ॥

गीत (१८३)

दिली ऊपरा रजसी राण चढियो ज दन,
नयर धक मालपुर लंक नांई ॥
धुवांसूं हुवो इंदलोक सह धूंधलो,
तप गयो ठेठ अहराव तांई ॥ १ ॥
सुतन जगतेस दल कीध आरंभ इसा,

असुरचा भाजलै सहर अवल्ला ॥
पुरंदर मंदरां वीच काजल पडे,
सहँसफण तणा सिर जलै सवल्ला ॥ २ ॥
हींदवां छात अपियात वातां हुई,
सुज हुवे जैण साखी अरक सोम ॥
धारधर नयण अकुलावियो धुवांसूं,
धराधर कमल अकुलावियो धोम ॥ ३ ॥
आकुलत व्याकुलत चलत नह आंवणैं,
पीव किण भांत आराम पावै ॥
सुकरदे सकरचा नैण मूंदे सची,
नागणी नाग सिर घडा नावै ॥ ४ ॥

टीका—जिस समय महाराणा राजसिंहने दिल्लीके देशपर चढाई की तो मालपुरा नगर लंकाकी भांति जल उठा उसके धूआंसे सब इन्द्रलोक धुंधला होगया और पाताल देश शेष नागतक तप गया ॥ १ ॥ जगतसिंहके पुत्रने अपनी सेनाका ऐसा आरंभ किया कि जिसमे यवन बादशाहके दुरवाले देश भी जलने लग गये । इन्द्रके महलोंमें कजल जम गया और शेपके सब फण जलने लग गये ॥ २ ॥ हिन्दुओंके छत्रपतिकी ये वातें प्रसिद्ध होगईं ओर सूर्य चंद्रमाने भी इसकी साक्षी दी

कि धाराधर (इन्द्र) के नयन तो धुआंसे घबरा उठे और धराधर (शेष) के मस्तक तापसे जल उठे ॥ ३ ॥ इस लिये आकुल व्याकुल होकर अंगनमें फिर नहीं सकते, सो दोनोंकी स्त्रियां विचार करनेलगीं कि, पतिको आराम क्यों कर मिले अतः शची तो अपने हाथोंसे शक्रकी आंखें मूंदने लगी और नागिन शेषनागके सिरोंपर जलके घडे डालने लगी ॥४॥

छप्पय (१८४)

मालपुरो बालियो,
उमँग उडियो दावानल ॥
पडे दिली ऊपरा,
थयो जमुना ऊन्हो जल ॥
जमना जा गँग मिली,
गंग जा मिली समंदां ॥
आभा भरिया इंद,
साप पूरी रव चंदां ॥
कलमपत माण हीणा किया,
बब्बर अकबर दब्बिया ॥
चीतोड नाथ वैकुंठपर,
सुण जगतसे गरब्बिया ॥

टीका-महाराणाने मालपुराको जलाया जिसका अग्निकण उड कर दिल्लीपर पडा जिससे यमुनाका जल उष्ण होगया, यमुना गंगामें जाकर मिली और गंगा जाकर समुद्रमें मिली जहांसे इन्द्रने वद्दल भरे, जिसकी सूर्य और चन्द्रने साक्षी दी, इस तरह यवनपतिको मानहीन किया सो सुनकर वावर और अकवर लज्जित हुए, और चित्तोडके पति जगतसिंहको अपने पुत्रका ऐसा वल सुनकर वैकुंठमें घंमड हुआ ॥

सौराष्ट्री दोहा (१८५)

मालपुरारो माल, कैलंपुरे घर घर कियो ।

सवल दिलीरो साल, राणो ऊभो राजसी ॥

टीका-१ महाराणाने मालपुराका माल घर घरका करादिया वह दिल्लीका सवल दुश्मन महाराणा राजसिंह खडाहै ।

छप्पय (१८६)

अजे शूर झलहले,

अजे भाजलै हुतासण ॥

अजे गंग पलहलै,

अजे सावत इंद्रासण ॥

अजे धराणि ब्रह्मंड,
अजे फल फूल धरत्ती ॥
अजे नाथ गोरक्ख,
अजे अह मात सकत्ती ॥
आजू हीलोहल धू अटल,
वेद धरम वाणारसी ॥
पतसाह हूंत चीतोडपत,
राण मिलै किम राजसी ॥

टीका–अद्यावधि सूर्य तेजमय है, अभीतक अग्निमें दाह-शक्ति, है, अभीतक गंगा बह रही है, इन्द्रका आसन अभी-तक ज्योंका त्यों है, पृथ्वी और ब्रह्माण्ड अभीतक अपनी हद पर हैं, फल फूल अभीतक पृथ्वीपर पूर्णमात्रासे वर्तमान हैं, अभीतक गोरखनाथ विद्यमान हैं और योगमायाने अभी तक अपनी शक्ति धारण कर रक्खी है, समुद्र अभीतक निज मर्याद पर अटल बना हुआ है और काशी भी यथावत् वर्त-मान है, फिर चित्तौडका महाराणा राजसिंह बादशाहसे क्यों कर मिलेगा ॥

[नोट–'वंशभास्कर' के कर्ता महाकवि सूर्यमल्ल लिखते हैं कि उपरोक्त छन्द जिलिया चारणवासके एक कम्मा नामक नाईने महाराणा राजसिंहजीको बादशाहसे मिलनेके लिये

दिल्ली जाते समय मार्गमें सुनाया था, सो यह छन्द सुनते ही वे वापस उदयपुर लौट आये इससे यह नहीं समझना चाहिये कि महाराणा राजसिंहजी बादशाहसे मिलनेको दिल्ली जाते थे क्योंकि महाराणा राजसिंहजीने कभी ऐसा इरादा किया ही नहीं यह बात इतिहासोंसे सिद्ध है परन्तु जैसे उनकी प्रशंसामें और लोग काव्य रचा करते थे वैसे ही इस नाईने भी यह छप्पय उक्त महाराणाके लिये बनाकर उनको सुनाया यह नाई जिलिया चारणवासका रहनेवाला था कि जो मारवाडमें कुचामणसे तीन कोश उत्तरमें ' रत्नू ' शाखाके चारणोंका गाम है ॥

कमाजीनामक नाईका कहा हुआ गीत वह यह है-

गीत।

धरा वेध पत्र पेद चत्रकोटगड ढेलडो,
पूरचा नपत्र सुवपत प्रमाणो।
साह अवरंग अवतार सिसपालरो,
राजसी किसन अवतार राणो ॥ १ ॥
मांडियो ज्याग रूपधां घरे गाडहो,
लिपन वर सुवर ईसवर लिपायो।
कथन सुण द्वारकाहूंत आयो किसन,
उदेपुरहूंत इम राण आयो ॥ २ ॥
घुरत सद नगारां सझ हिक साथ घण,
सेहरो बांधि वे वर सनेही।

चाव कारि कुनणपुर एम चँवरी चढे,
जगारो किसनगढ जोध जेही ॥ ३ ॥
एक अधकार हिंदू तुरक ईपतां,
जकी तो बात संसार जाणी ।
किसन धरि रुकमणी ले गयो कँवारी,
अमररै कलाधर परणि आणी ॥ ४ ॥
धरा धक धूण गढ कोट चाढे धकै,
देस रावणतणे दिये खगदाह ।
पैलकै गयो सिसपाल माथो पटकि,
पटकि सिर हमरकै गयो पतसाह ॥ ५ ॥
राजरा विरद वापाण गुण रायवर,
कथन सुणि दिलीचे वींच कहसी ।
राजसी राण हिंदवाण अम रापतां,
राण बापाण जुग च्यार रहसी ॥ ६ ॥

[नोट—किशनगढकी किसी राजकुमारीका विवाह वहांके महाराजके विचारसे बादशाह औरंगजेबके साथ स्थिर हो चुकाथा उस समय राजकन्याने यवनके साथ अपना पाणिग्रहण होना नितान्त अनुचित जानकर गुप्तरूपसे महाराणा श्रीराजसिंहजीके पास निजको व्याह लेनेका संदेशा भेजा जिसपर

महाराणा साहब किशनगढ आ राज कन्याको विवाह कर लेगये उसही वृत्तान्तका यह गीत है ।]

टीका—पूर्वानक्षत्रयुक्त अच्छे समयपर धराका वेध करने तथा क्षत्रियोंको खेद पहुंचानेके लिये चित्तौडगढ और दिल्लीसे दो वर आये जिनमें वादशाह औरंगजेव तो शिशुपालका अवतार है और महाराणा राजसिंह कृष्णका अवतार है ॥ १ ॥ आज राठौडोंके घर माढहा बना है, यज्ञ मंडा है परन्तु ईश्वरने राजकुमारीके भाग्यमें उत्तम वर लिखाहै इस लिये जैसे रुक्मिणीका संदेश सुनकर द्वारकासे कृष्ण आये ऐसेही उदयपुरसे महाराणा राजसिंह आया ॥ २ ॥ नगारोंका नाद हो रहा है सेहरा बांधकर दो वर एक साथ तैयार हुए और कुनणपुरकी भांति किशनगढमें महाराणा जगतसिंहका पुत्र और वादशाह उत्साहपूर्वक चंवरी (विवाह मण्डप) पर चढे ॥ ३ ॥ हिन्दु और मुसल्मानोंका समान अधिकार देखते हुए सब संसार इस वातको जान गया कि कृष्ण तो रुक्मिणीको कुमारी अर्थात् अविवाहिताको ही हरण कर लेगये परन्तु महाराणा अमरसिंह-जीकी कलाको धारण करनेवाला महाराणा राजसिंह विवाह करके राजपुत्रीको लाया ॥ ४ ॥ सन्मुख आयेहुए वादशाही गढ तथा कोटोंसहित पृथ्वीको कम्पायमान करदी और रावण-रूपी वादशाहके देशको खड्गरूपी अग्निसे दग्ध करादिया) जिस प्रकार पहले शिशुपाल माथा पटककर चला गया वैसेही इस समय अनेक प्रकारसे हतोत्साह होकर शिर धुणता हुआ वादशाह भी चला गया ॥ ५ ॥ राजसिंहके विरुद (स्तुति)

व गुणोंका वर्णन तथा बादशाहका वृत्तान्त सुनकर लोग दिल्लीके बीचमें कहेंगे कि हे राणा राजसिंह हिन्दुओंके धर्मको रक्षा करनेपर चारों युगोंमें राणाओंका यश स्थायी रहेगा ॥ ६ ॥

दोहा (१८७)

ओडा रतन संहारिया, राजड आसकरन्न ॥
वो हिंदवाणी बादसा, वो बादसा बरन्न ॥

[नोट-सुना जाता है कि यह दोहा उस समयका है जब कि ओडा ग्राममें महाराणा राजसिंह और उनके सच्चे स्नेही 'दधिवाडिया' शाखाके चारण आसकरनजी खिचडीमें विष देकर मारे गये थे]

टीका-'ओडां' में दो रत्न मारे गये जिनमें एक तो राणा राजसिंह थे और दूसरा आसकरन था जिनमें राजसिंह तो हिन्दूपति बादशाह थे और आसकरन चारणवर्णका बादशाह था ॥

टाडराजस्थानसे उद्धृत ।

मजमून महाराणा राजसिंह बनाम साहब शाहनशाह औरंगजेब आलमगीर गाजी-

बाद हमदे एजिद जुलजलाल और शुकरिया करम व फजल हुजूर अनवरके ×१वाजे हो कि अगरचे खैर तलब खिदमत

हुजूरे आलासे अलाहिदा होगया है। मगर इताअत और खैरख्वाहीके हर एक लाजमी खिदमतके अंजामदेहीमें हमातन सरगरम है। मेरी दिली ख्वाहिश और शबानारोजी + कोशिश इसमें है के शाहान व उमराव मिजाजदान व राजगान मुमालिक हिन्दोस्तान और फरमांरवायान ईरान व तूरान व रूम व श्याम व बाशंदगाने हफत अकलीम + और सइयाहान व हर बक्रकी × आफियत व बहबूदीमें तरकी हो. चुनाचे मेरा यह शौक मशहूर व मारूफ है कि हुजूरके दामा दिलको भी इसमें मुकाम इसतबाद नहीं होसक्ता इस वास्ते अपने रूसूख खिदमाते साबिका और हुजूरके इलतफातें पर एतबार करके मैं हुजूरसे ऐसे मामले पर मुतवज्जह होनेकी इलतजा करता हूं जिसमें जाते खास व अवामुन्नासके फवाइद मुजमिर हैं×—

मुझको दरयाफ्त हुआ है के इस खैरख्वाहके खिलाफ जो तदबीरें हुई हैं उनकी तामील व अंजामदेहीमें जर कसीर खर्च हुआ है। और खजाना आमिरेशाहीमें जो कमी आयद हुई उसके रफा करनेके वास्ते हुजूरने खिराज वसूल करनेका हुकुम दिया है। वाजेह रायें आलिये हुजूर हो कि आपके अजीमुश्शान बुजुर्ग मोहम्मद जलालुद्दीन अकबर खल्दे अल्लाह

(१) तारीफ खुदा बड़ा जो बुजुर्ग है और दुनिया बादशाह जो बखशिश मेहरबानी करनेवाला × (२) रातदिनकी कोशिस × (३) सातों विलायत × (४) सफर करनेवाले मुल्क दर मुल्क फिरने वाले दरया और खुसकीके × (५) कोई शक व सुबहा (६) रसाई (७) मेहरबानी। (८) अर्ज (९) जिसमें आपके और तमाम दुनियाके फायदे शामिल हैं × (१०) हमेशा बादशाही करो।

मुल्कहूने × अरसे ५२ बावन वर्ष तक कारोबार सल्तनतको बडे इसतक्लाल और इन्साफसे अंजाम दिया था, और हर फिरका रिआयाके आराम व आसाइशमें कोशिश की थी, खुवाह कोई ईसाई हो या मूसाई या दाऊदी या मोहम्मदी या ब्राह्मण हो या उन दहरियोंके फिरकेसे हो जो दवामियते मा॰ देसे मुनकिर हैं + या उससे जो वजूदे आलमको मुनहसर बे इत्तफाक समझते हैं, उनकी सब पर यकसां तवज्जह व मेहर॰ बानी थी कि इस बिला इमतयाज शफाकतके शुकरिमें उनकी रिआयाने उनको जगतगुरु यानी मुहाफिजनो एवशरके+ लक॰ बसे मुमताज किया था। हजरत मोहम्मद नूरुद्दीन जहांगी॰ रने कि खुदा उनको भी बहिश्त नसीब करे इसही तरह २२ बाईस वर्ष तक ज़िल्ले हिफाजत व हिमायतको अपनी रिआया+ पर मुहीतरखां + रफीकोंके साथ हमेशां वफादारी + और मुहिमाते सल्तनतमें कूवत व जोरआजमाई करके कामयाब हुए। मशहूर शाहे जहांने भी अपने ३२ बत्तीस वर्षके मुतबर्रिक अहद + में रहम या सखावतका उमदा ईजरा और दवामी नेकनामी + हांसिल करनेमें कमी न की। आपके बुजुर्गोंकी ऐसी पुरखैर व फैयाज आदतें थीं इन फराख और उलू हिम्म तीके उसूल पर अमल करनेसे जिस तरफ उन्होंने अजीमत

---

(१)पदार्थोंको हमेशा नहीं मानते जगतको अपने आप पैदा होना सम॰ झते हैं× (२) हिफाजत करनेवाला बडा समझा गया ×। (३) अपनी रिआयापर महरबानीका साया रक्खा × (४) हमरायोंपर निगाह [मेहरबानी]× (५) उमदा जमानेमें × (६) हमेशाकी नेकनामी × (७) उदारचित्तता (८) चढाई की और फतहयाब हुए ×

की फतह व नुसरत पेशरौं हुई, और इसी जरियेसे उन्होंने अकसर मुमालिक व किलआतको मगलूब व मुतीय किया मगर हुजूरके अहदमें अकसर मुमालिक सलतनतसे जाते रहे हैं और इस वजहसे कि तबाही व मुसीबत बिला मुजाहमत आलमगीर है × दिगर मुमालिकका नुकसान और आयद होगा । आपकी रिआया पामाल होगई है और आपकी सलतनतका हर एक मुल्क तबाह व मुफलिस होगया है । वैरानी जीयादह होती जाती है और आफतें बढती जाती हैं । जिस हालतमें खुद बादशाह और शाहजादोंके घरको इफलासने जा घेरा तो अमीरोंका खुदा जाने क्या हाल होगा सिपाह नाला है × तॉजिर मुस्तगीस हैं ×मुसलमान शाकी हैं, हिन्दू तबाह हैं और कमबख्त मुसीबत जदह लोगोंके गिरोह किनोनेश बिनासे मोहताज हैं × दिन भर गम व गजबसे सिर पीटते हैं, जो बादशाह ऐसे आफत जदा लोगोंसे खिराजे गरां × वसूल किया चाहे वो अपनी अजमत व श्यान × को क्यों कर कायम रख सकता है । इस जमानेमें मशरकसे मगरब × तक मशहूर है कि हिन्दोस्तानका बादशाह विचारे हिन्दू मजहबी लोगोंसे तासुब करके ब्राह्मण, सेवडा, जोगी वैरागी और संन्यासियोंसे खिराज वसूल किया चाहता है और नसलें तैमूरियांके अजीमु-

---

(१) तावे (अधीन) (२) मुसीबत विना रोक टोक दुनिया भरमें फैल गई (इसके दूसरे मायने) के तबाही व मुसीबत खुद आलमगीरही है × । (३) फौज रोती है × (४) सोदागर नालशी हैं × (५) एक वक्त रातको भी रोटी नहीं मिलती × (६) भारी महसूल × (७) बड़प्पन × (८) उदय अस्त ×

शशान रुतबेका मुतलक लिहाज न करके बेगुनाह बेकस खुदा परस्तोंपर अपनी ताकतका इमतिहान करनेपर उतर आया, अगर हुजूरका कुछ भी एतकाद उन किताबोंपर है जिनको मुतबर्रिक व मजहबी कहते हैं तो वे आपको रहनुमाई करेंगी खुदावन्द ताला रब्बुल आलमीन है न सिरफ रब्बुल मुसलमीन है हिन्दू और मुसलमान एकसां उसकी मख-लूख हैं रंगका फरक उसके हुकमसे है वोही सबको पैदा करता है आपके मोबिदोंमें उसीके नामपर अजान दीजाती है और बुतखानोंमें भी जहां घण्टे हिलाये जाते हैं मअमें इबादत वोही हैं। गैर लोगोंके मजहब या रसमियातकी इहानत करना खुदावन्द तालाकी मरजीसे खिलाफ वरजी है क्योंकि अगर हम तस्वीरको मिटाव तो लाजिम है कि मूरिदे इताब मुसव्विर हों किसी शाइरने सच कहा है कि खुदावन्द तालाके मुखतलिफ कामोंपर एतराज व नुकता चीनी की मुबादरत मत करो-अल गरज महसूल जो आप हुनूदसे तलब करते हैं खिलाफे मादिलातहै, और उसही कदर खिलाफे मसलहत है, क्योंकि मुल्क उससे मुफलिस होजावेगा अलावा बरी यह फेल जदीद और कवानीने हिन्दोस्तानसे खिलाफ है। अगर आपके जोशे मजहबीने आपको इस इरादे पर कतई आमादाह कर दिया है तो बमुकत जाये इनसाफ लाजिम है कि अव्वल रामसिंहसे

---

(१) प्रामाणिक (२) शिक्षा। (३) मसजिदोंमें (४) मन्दिरोंमें (५) जी चलाना (६) इन्साफ (७)रामसिंह्ना हाडा।

जो हुजूरमें मुकद्दम समझा जाता जाता है मतालिबा किया जावे और बाद अंजां इस खैरतलबको फरमाया जावे क्योंकि मेरे मुकाबिलेमें आपको कम मुशकिलात वाके होंगी वरना मोर व मगस(१)को अजीयत पहुंचाना उलूहिम्मती और दरया दिली(२)से बईद है-तआज्जुब है कि वुजराय सलतनतने हुजूरको इमान व इज्जतके कवाइदकी हिदायत करनेमें बडी गफलतकी है ।

ये महाराणा साहब जैसे वीर और नीतिज्ञ थे, वैसे ही गुणग्राही और कवि भी थे । इनकी कविताशक्ति और कविजनप्रियता इस निम्नलिखित छप्पयसे प्रकट होती है, जो कि उनका स्वयं बनाया हुआ है और राजनगरमें राजमहलकी पालपर उनहींके बनाए एक महलके गोखेमें खुदा हुआ है ।

छप्पय (१८८)

कहां राम कहां लषण,
नाम रहिया रामायण ।
कहां कृष्ण बलदेव,
प्रगट भागोत पुरायण ॥
वालमीक शुक व्यास,
कथा कविता न करंता ।
कुण सरूप सेवता ध्यान,
मन कवण धरंता ॥

(१) चींटी और मक्खी × (२) बडप्पन व गम्भीरता × ।

जग अमर नाम चाहो जिके,

सुणो सजीवण अक्खरां ।

राजसी कहै जगराणरो,

पूजो पाँव कवेसरां ॥

टी०—राम और लक्ष्मण कहां हैं रामायणमें उनका नाम रह गया है । कृष्ण बलदेव कहां, वे केवल भागवत पुराणसे प्रकट हैं । यदि वाल्मीकि, शुक और व्यास कथा तथा कविता न करते तो कौन राम कृष्ण आदिके स्वरूपकी सेवा करता और कौन ध्यान धरता । यदि संसारमें अमर नाम चाहते हो तो सजीवन अक्षर सुनो, राणा जगतसिंहका बेटा राजसिंह कहता है कि कवीश्वरोंके पैर पूजो ॥

महाराणा श्रीजयसिंहजी । (दूसरे)

महाराणा जयसिंहजी वि० सं १७३७ में गादी विराजे । ये महाराणा अच्छे वीर और शान्तचित्त हुए हैं, इन महाराणासे बादशाह औरंगजेबके साथ सन्धि होगई थी जिसमें चित्तोड, पुर, मांडल, बदनोर और मांडलगढ ये पाचों परगने महाराणाजीको वापस मिले, इन महाराणाने 'जय समुद्र' नामक एक बहुत बडा तालाब बनवाया जिसे ढेवरकी झील भी कहते हैं । यह तालाब हिन्दुस्थानकी कृत्रिम झीलोंमें सबसे बडा माना जाता है । इन महाराणाका देहान्त वि० सं० १७५५ में हुआ था ।

गीत (१८९)

ऊक्यो दिली हूं ओरंगसाह एक रोह तणैं ओंटे,
महाबाह विहूं राहां मेटवा म्रजाद ॥
थकां थकां चहूं चकां हूचकां षडग धारा,
वीर हकां हींदवां तुरकां भिडे वाद ॥
एकंकार करेवानूं दिली गरनार आया,
तुंजीहां अठारंटैंकी आवध्धियां तोण ॥
राण सारं थार पाण छत्रीकार रापेध्रम्म,
हींदूकार न दे तेण एकोकार होण ॥ २ ॥
पढावे कुराणां तिकां पढावे काजियां पूजा,
सुराणां पुराणां धेन ब्रहंमाणां सेव ॥
राजा तणो छत्रधारी पागधारी राजंहस,
दाणवांसूं वेधकारी अवतारी देव ॥ ३ ॥
रुडावो नीसाण सदा जीतरा जैसीह राण,
रापियो केवाण पाण हींदवाण राह ॥
आछा आछा रायजादां साहजादां किधा आंगे,
पाछा पगां होय भाग छूटो पातसाह ॥ ४ ॥

टीका-हिन्दू और यवनोंका १ एक धर्म करनेके २ अर्थ दिल्लीसे महाबाहु औरंगजेब बादशाह हिन्दू और यवनोंके दोनों धर्मोंकी जुदी जुदी मर्यादाके तोडनेको इच्छा करके चला,

तब चारों ४ ओर ५ युद्ध करनेके अर्थ तरवारें निकलीं और हिन्दू तथा यवन वीरोंकी वीरहाक बढने लगी ॥ १ ॥ दिल्लीका पति ७ अठारह टांककी ६ कमान हाथमें लेकर दोनों धर्मोंको एक करनेको आया तो इधरसे महाराणाने ८ तरवारकी धाराके बलसे क्षत्रियधर्म रखकर हिन्दूधर्मको मुसलमानी धर्ममें शामिल नहीं होने दिया ॥ २ ॥ जो काजी कुरान पढते थे उनको महाराणाने देवता, पुराण, धेनु (गौ और ब्राह्मणोंकी सेवा करना सिखलाया जिससे ऐसा ज्ञात हुआ मानों किसी देवताने दानवरूपी यवनोंका ९ क्षय करनेके हेतु खड्ग और छत्रको धारण करनेवाले राजसिंहके पुत्रके रूपमें जन्म लिया है ॥ ३ ॥ हे महाराणा जयसिंह ! आप सदा विजयके नगारे बजवाइये कि जिनने अपने खड्गबलसे हिन्दू धर्मकी रक्षा की और जिस बादशाहने अच्छे अच्छे राजा और शाहजादोंको आपके सन्मुख युद्धमें आगे किया था वह बादशाह ही पीछे पैर देकर युद्धसे भाग छूटा ॥ ४ ॥

महाराणा श्रीअमरसिंहजी (दूसरे)

महाराणा दूसरे अमरसिंहजी वि. सं. १७५५ में गद्दी विराजे । इनके राज्यसमयमें औरंगजेबके पुत्र बादशाह बहादुरशाहने आमेर और जोधपुर दोनों खालसा कर लिये थे, तब उक्त दोनों राजा सहायता लेनेको 'उदयपुर' आये । और इन महाराणाने महाराजा जयसिंहजीको अपनी पोती और अजीतसिंहजीको अपनी बहिन इस शर्तपर व्याह दी कि उदयपुरका भानजा छोटा होने पर भी गद्दीका अधिकारी होगा । इसके बाद दोनोंको सहायता देकर आमेर और जोध-

पुरसे बादशाही खालसा उठवा दिया । ये महाराणा वि. सं. १७६७ में परलोकवासी हुए।

महाराणा श्रीसंग्रामसिंहजी (दूसरे)

महाराणा संग्रामसिंहजी वि. सं. १७६७ में गद्दी विराजे। ये महाराणा बहुत बुद्धिमान् और दूरदर्शी थे और बहुत न्यायकारी तथा उदारचित्त थे। इनके समयमें दिल्लीकी बादशाहत तो नष्ट होनेपर आगई थी और मरहठोंका उपद्रव प्रारंभ होगया था। परन्तु इनने मरहठोंसे बराबर मुकाबिला किया और उनकी अधीनता स्वीकार करना नहीं चाहा। इनका देहान्त वि. सं. १७९० में हुआ॥

गीत (१९०)

अहां हेक राजा सिधां हेक राजा अगँन,
सिरे नव अग्यारह राज साजा॥
सूर शिव दोय राजा फवै राण सम,
राण सम तीसरो नको राजा॥१॥
अहारे तिमर विष नजर छाकां पिये,
भ्रमरां अत्रां पग अजर घावे॥
दिवाकर अजर सगराम सम सुर दुहूं,
अवर छत्रधर नको नजर आवे॥२॥
जहरधर सुनर निरजर नगर जोवतां,
वहर तप हेक दिल गहर बीजो॥

बंबहर सूर गुर अमर तण बेषतां,
तुलै नह बराबर भूप तीजो ॥ ३ ॥
तिहूं लोकां महीं जोड सांगा तणी,
हेक रवि हुवो जटधर अरोडो ॥
निलज नवरोज मेल्है तिके नारियां,
जिके छत्र धारियां किसो जोडो ॥ ४ ॥

[कविया शाखाके चारण कविराजा करणीदानजीकृत]

टी०—एक ग्रहोंमें राजा है और दूसरा सिद्धोंमें राजा है जिनमें एक तो नवोंमें श्रेष्ठ सूर्य है और दूसरा ग्यारहमें श्रेष्ठ शिव है ये दो ही राजा राणाके समान फबते (शोभते) हैं और तीसरा कोई राजा इनके सदृश नहीं है ॥ १ ॥ सूर्य तो संसारके अन्धकारको नाश करता है और शिवने असह्य विष पी लिया है । इसी तरह महाराणा संग्रामसिंह भी खड्गसे शत्रुओंका नाश करता है अतः अन्य छत्रधारी संग्रामसिंहके बराबर नहीं देखते ॥ २ ॥ देवताओंके पुर (स्वर्ग) में देखनेसे भी तेरे योग्य दो ही दीख पडते हैं । उनमें एक तो तपके कारण और दूसरा चित्तकी गंभीरताके कारण प्रसिद्ध है अतः अमरसिंहके पुत्र संग्रामसिंहको देखते तीसरा राजा कोई ऐसा दृष्टि नहीं पडता ॥ ३ ॥ तीनोंही लोकोंमें संग्रामसिंहकी बरा-

वरी करनेवाला एक तो सूर्य है और दूसरा जटाधारी महादेव ही है। और जिन निर्लज्ज राजाओंने अपनी राणियोंको नवरोजे भेज दीं, उनका सादृश्य इनके साथ क्यों कर होवे अर्थात् वे इनके बराबर नहीं हो सक्ते ॥ ४ ॥

गीत (१९१)

बैंसंतै पाट सँग्राम महाबल,
चहुवां कूंटां कीत चवी ॥
कुंजर गाय बांधिया केवी,
कुंभाथल चाढिया कवी ॥ १ ॥
मँडतै तिलक राण मेवाडा,
सझिया भला मँगलां साज ॥
वाँधा पीज रीझ बैठाया,
रिम कदमां हौदां कवराज ॥ २ ॥
अमर समो भ्रम जगड अगनमा,
त्रणवै नपत तपत वडवार ॥
विहुंवै थोक हाथियां वणिया,
अर लंगर जसंकर असवार ॥ ३ ॥
गुर गहलोत आवतै गादी,
छलियो समँद हौंदवां छात ॥
दुरदांतणैं फब्या आदू ये,
पावां भसण कलावां पात ॥ ४ ॥

बढियो सदा सिंघासण बणतां,
रोस रीझ सिंधुरां सिरे ॥
पडिया पल नेसास करै पग,
कव चाढिया आसीस करै ॥५ ॥

टीका—हे महाबल राणा संग्रामसिंह ! तैंने पाट बैठतेही चारोंओर जस फैला दिया, शत्रुओंको हाथियोंके पैरोंसे बंधवा दिये और चारण कवियोंको उनके कुंभस्थलों पर आरूढ किये ॥ १ ॥ हे मेवाडके राणा ! तेरा राजतिलक होते ही तैंने हाथियोंका साज अद्भुत रीतिसे सजाया कि खिज कर शत्रुओंका तो हाथियोंके पैरोंमें बांध दिये और रीझ कर कविराजोंको हौदोंपर बैठादिये ॥ २ ॥ हे महाराणा अमर सिंहजीके सदृश अनम्र भावसे विराजमान महाराणा ! तेरे राजतिलकके मुहूर्तसे शुभ नक्षत्रका और मेवाडका गौरव बढ गया जिससे दोनों ही थोक हाथियोंमें अच्छे बने अर्थात् शत्रुगण तो हाथियोंके लंगरसे बंधे और चारण गण हाथियोंपर सवार हुए ॥ ३ ॥ हे हिन्दुओंके छत्र श्रेष्ठ गुहिलोत ! तेरे गद्दी बैठते ही समुद्र सीमासे उझल गया और राज्य शासनके प्रथम समयमें ही हाथियोंमें ये दोनों शोभित हुए अर्थात् शत्रु तो पांवोंमें और सुकवि चारण कलावों पर ॥ ४ ॥ सिंहासन बैठते ही महाराणाका रोष और रीझ बढे । शत्रुगण तो हाथियोंके पैरोंमें बंधे हुए निःश्वास लेने लगे और कविजन हौदों पर चढ कर आशीर्वाद देने लगे ॥ ५ ॥

गीत (१९२)

अजर धोम गोलां गजर सार कैमर उडै,
ऊमडै समर तूटै पलां आव ॥
तठै संगराम अमरेस तण ताहरा,
पग हुवै मेर गिर हाथ पँपराव ॥ १ ॥
धरा ठहराण ऊडाण असहां धडा,
अजँग आपाण अवसाण अगराज ॥
हुवां घमसाण प्रमाण थारा हुवै,
रांण पोयण गिरँद पाण पगराज ॥ २ ॥
सुजड अधंकाव जड कुरडै परवाह सक,
दूठ उमरड सत्रां होम देहा ॥
उरड घमंचाल होतां बणै आपरा,
अनड पैराज तस गुरड येहा ॥ ३ ॥
नवा वर तजै वर आंट जाणै नगां,
आंट नववंस कर जाण ओलै ॥
अछर उलटी मुडै मेर भव ईषतां,
भुजँग पटकै जटी तगस भोलै ॥ ४ ॥

['कविया' शाखाके चारण कविराजा करणीदानजीकृत]

टी०—हे महाराणा अमरसिंहके वंशवाले संग्रामसिंह ! जब असह्य धुंआं आकाशमें छाजाती है, गोलोंका गजर होता है,

तलवार तथा तीर उडने लगते हैं और शत्रुओंके शिर टूटने लगते हैं उस समय हे राणा ! तुम्हारे पैर सुमेरु पर्वतकी भांति अडिग हो जाते हैं और हाथ गरुड बन जाते हैं अर्थात् गरुडके सदृश वेगको धारण करके शत्रुओंपर प्रहार करते हैं ॥ १ ॥ हे खुम्माणके वंशवाले ! युद्ध होनेपर तेरे पैर सुमेरु पर्वत और हाथ पक्षिराज (गरुड) रूप होजाते हैं ॥ २ ॥ शत्रुओंकी २ पीठपर बहुत १ भाले लगाकर उनके शरीरोंको होम डाला और वह भयंकर २ युद्ध होते समय आपके चरण तो पर्वत और हाथ गरुडरूप होजाते हैं ॥ ३ ॥ पर्वतकी आंट धारण करनेवाले तेरे पैरोंको देख कर अप्सराएं नवीन पतियोंको छोडती हैं और तेरे हाथोंके कारण शिव सर्पोंको दूर करते हैं (इसही अर्थका स्पष्ट करके उत्तरार्द्धमें कहा है) महाराणाके पैरोंको सुमेरुके समान अडिग जानकर अप्सराएं पीछे फिर जाती हैं और हाथोंको तार्क्ष्य (गरुड) के रूपमें देखकर शिव सर्पोंको छोडते हैं कि वह कहीं खा न जाय॥४॥

महाराणा श्रीजगत्सिंहजी (दूसरे)

ये महाराणा वि० सं० १७९० में गद्दी विराजे और जयपुरके महाराजा जयसिंहजीके देहान्त होने बाद महाराज माधवसिंहजीको जयपुरकी गद्दी दिलानेके अर्थ चौसठ लाख रुपये हुल्करको दे करके उसको जयपुरके महाराजा ईश्वरीसिंहजी पर चढालाये । और कई लडाइयां करके अपने भानजे माधवसिंहजीको हिस्सा दिवाया । इनका देहान्त वि० सं० १८०८ में हुआ ॥

महाराणा श्रीप्रतापसिंहजी (दूसरे)

ये महाराणा वि० सं० १८०८ में गद्दी विराजे और तीन ही वर्ष राज्य करके वि० सं० १८१० में परलोक सिधारे ॥

महाराणा श्रीराजसिंहजी (दूसरे)

उक्त महाराणा वि० सं० १८१० में गद्दी विराजे । इनके शासनकालमें मरहठोंने सात चडाइयां कीं इससे मेवाडको वहुत नुकसान उठाना पडा । इनका देहान्त वि० सं० १८१७ में हुआ था ॥

महाराणा श्रीअरिसिंहजी (तीसरे)

ये महाराणा वि० सं० १८१७ में गद्दी वैठे इनके समयमें फरेवी राणा रत्नसिंहका फितूर खडा होजानेके कारण मेवाडके अधिकांश उमराव महाराणासे पलट कर सिंधियाको चडालाये जिसका प्रथम (अव्वल) मुकावला उज्जैनमें हुआ, जिसमें ' सलूंवर ' के वालक रावतजी पहाडसिंहजी और ' शाहपुरा ' के राजा उम्मेदसिंहजी वडी वीरतासे लड कर काम आये इन सलूंवर रावतजीके लिये ऐसा प्रसिद्ध है कि युद्धमें चलते समय शाहपुराके राजा उम्मेद सिंहजीने इनको रोका कि आप वालक हैं अतः घरपर ही रहैं इसपर रावतजीने जवाव दिया कि मैं वालक हूं परन्तु मेरी ' सलूंवर ' वालक नहीं है । अन्तमें युद्धमें वडी वहादुरीसे काम आये । जिसके पीछे दूसरा युद्ध सिंधियासे उदयपुरमें हुआ जिसमें फौज खरच देने पर सन्धि होगई, इन महाराणा अडसीजीको बुंदीके रावराजा अजित सिंहजीने छलघातसे वि० सं०१८२९में मार डाला॥

दोहा (१९३)

अडसीसूं अडिया जिके, पडिया करै पुकार ॥
म्हापुरसांरी मूडक्यां, गिलगी गांव गँगार ॥ १ ॥

[नोट–रत्नसिंहजीकी सहायक होकर नागोंकी सेना आई थी जिसे गंगारके मुकाम पर सबसे पहले स्वयं महाराणाने घोडा उठाकर काटडाली इस विषयका यह दोहा है]

टी०–जिन महापुरुषों (नागों) ने अरिसिंहजीसे युद्ध किया वे पडे २ पुकार करने लग गये और उनके सिर गंगार नामक पुरी खागई (निगलगई) ॥ १ ॥

गीत (१९४) मरसिया ।

भुजां धारियो न पाग तैं वाकारियो न बाघ भूरो,
करग्गां प्रहारियो दगासूं आणे कूंत ॥
एका एक लाषां बातां हारियो धरम्म अजा,
हींदूनाथ मारियो विसास घात हूंत ॥ १ ॥
रूकां घाय जातो तोने इलारा बदंता राव,
दीठ आय जातो जे नगारो चौडै देत ॥
तठै भेद लडस्सी दगारो पाय जातो तो तो,
पाय जातो अडस्सी जगारो चौडै षेत ॥ २ ॥
पेला चंडी नचातो ओ मचातो सूरमां पागां,
घणा जाडा थंडांनूं रचातो घेर घेर ॥

हाकले राणासूं साम्हैं चालतो जै पूंदी हाडा,
बूंदी आडावला सूधी रालतो वपेर ॥ ३ ॥
कपट्टी भेपैर मतै चोहाण पोमायो कासूं,
वणायो इसो ही तंत लेपैरै ब्रह्माण ॥
गोपाल ज्यूं अवस्साण देपरै जिहान गायो,
पायो श्री दीवाण अंत लेपैरै प्रमाण ॥ ४ ॥

[भादा शाखाके चारण जीवाजीकृत]

टीका-हे अजितसिंह! तैंने भुजोंपर खड्ग नहीं उठाया और न राणारूपी सिंहको ललकारा, केवल हाथमें भाला लेकर अपने धर्मको हारकर लाखोंही बातें अकेले ही हिंदूपतिको विश्वासघात करके धोखेसे मारलिया ॥ १ ॥ यदि तू उसे ललकार तरवारसे मारता तो संसारके लोग तुझे निःसन्देह वीर कहते यदि तू चौडेमें नगारा घुराकर दृष्टि आता तो वीर कहलाता, और जो तेरे छलसे लडनेका भेद उसे मालूम पड जाता तो जगतसिंहका पुत्र अरिसिंह तुझे चौडे खेत खा जाता ॥ २ ॥ यदि तू महाराणाको सामनें आकर दकालता तो वह कई शूरोंको प्रसन्न कर देता और युद्धमें कालीको नचाता और वडी वडी सेनाको घेर घेर कर रचाता और हे कायर हाडे! तेरी बुंदीको 'आडावला' पर्वत सहित बिखेर डालता ॥ ३ ॥ हे चहुवाण! तैंने कपटी बनकर कौनसी बात पर इतना घमंड किया, यह तो ब्रह्माने अन्तमें ऐसाही लेख लिखा था सो देख! संसारने भी यही कहा कि महाराणा अरिसिंहने भी श्रीकृष्णकी तरहं अवसान समय

पाया अर्थात् जैसे श्रीकृष्णने व्याधके हाथसे मृत्यु पाई वैसीही महाराणाकी भी मृत्यु हुई ॥ ४ ॥

महाराणा श्रीहमीरसिंहजी (दूसरे)

उक्त महाराणा बहुत छोटी उमरमें वि. सं. १८२९ में गद्दी विराजे । इनके राज्य समयमें मेवाडकी सेनाके सिंधी सिपाहियोंने बहुत उपद्रव मचाया और सरदार भी सब पलट रहे थे अतः सरदारों और सेनाको पलटा देखकर सिंधियोंने मेवाडको बहुत लूटा इन महाराणाका देहांत वि. सं. १८३४ में हुआ था ।

महाराणा श्रीभीमसिंहजी ।

ये महाराणा विक्रमी संवत् १८३४ में गद्दी विराजे । इनके शासनकालमें भी मेवाडमें सरदारोंका विप्लव बना ही रहा और इधर हुल्कर और सिंधियाने मोका देखकर देशको लूटना प्रारम्भ किया । तब गवर्नमेंटने राज्योंको अपनी रक्षामें लेनेके लिये कहला भेजा जिसको महाराणाने स्वीकार कर लिया । इस पर मेवाडमें प्रथम पोलिटिकेल अफसर कर्नल जेम्स टाडका शुभागमन हुआ इन्होंने सरदारोंका महाराणासे पीछा मेल कराया । इन महाराणाका देहान्त विक्रमी संवत् १८९५ में हुआ, यह महाराणा बहुत बडे वदान्य (उदार) थे ॥

दोहा (१९९)

राणे भीम न राखियो, दत बिन दीहाडोह ।
हय गयंद देतो हथां, सुवो मेवाडोह ॥ १ ॥

टीका–महाराणा भीमसिंहने कोई दिन भी दान बिना नहीं रक्खा अर्थात् प्रतिदिन दान करता रहा। अपने हाथोंसे जो हाथी घोडे देता था वह मरा नहीं है किन्तु अब भी यशस्वरूपमें प्रकाशमान है।

महाराणा श्रीजवानसिंहजी।

महाराणा श्रीभीमसिंहजीके ९५ पुत्र पुत्रियोंमेंसे उनके देहान्त समय केवल जवानसिंहजी ही विद्यमान रहे थे जो वि० सं० १८८५ में गद्दी बैठे, और वि० सं० १८९५ में इनका देहान्त हुआ॥

महाराणा श्रीजवानसिंहजीके वर्णनका एक गीत है जो उनका स्वर्गवास होनेपर किसी सुकविने कहाया वह यह है–

गीत।

भूलै नह सहरमुल्क नह भूलै,
पँडित न भूलै पाणा।
गड कव पासवान किम भूलै,
रूंप न भूलै राणा॥ १ ॥

उदियापुर गोपां अनदाता,
निरव्रतपणो न धारो॥
करवा सहज भूप हेकरसां,
पाछा महल पधारो॥ २ ॥

झाला हथां जोध भीमाणी,
वाल्हा सुरपुरवासी।
पांत बिराज बिलाला पातां,
प्याला मद कुण पासी॥ ३॥
सत आचार अथग रा सहजां,
षग रा पलां षवाना।
मन मोहण थिर चर षग मृगरा,
जगरा मुकट जवाना॥ ४॥
दीवाली होली दसरावै,
गौरि लहूर गवाडा।
असवारी थारी कद आसी,
मिणधारी मेवाडा॥ ५॥
षेलण फाग षास षिलवतियां,
सूरां रमण सिकारां।
एक वार षडवै कर आजो,
तीजां तणा तिवाँरा॥ ६॥
कर पिंडदान गया सिर कीधो,
सो परलोक सुधारो।
महाराणा ओछी ऊमरमें,
जीत गयो जमवारो॥ ७॥

बाणारसी असी वरणां बिच,
फजर सिवालय फिरतां ॥
वा छिब बले नजर कद आसी,
कासी दरसण करतां ॥ ८ ॥
चिंतामणरूपी चीतोडा,
पारिसकलव्रछ पातां ।
पाछी खबर किणी नह पाई,
जबर पयाणै जातां ॥ ९ ॥
भूरा बाव किसै मिस भूलां,
आवै निस दिन याद अमाप ।
फूटै हियो आंतरै फिरतां,
बडी मुहम करतां मा बाप ॥ १० ॥

टी०—हे महाराणा! सब नगर और देश तथा पण्डित लोग तेरे हाथोंको नहीं भूलते, भड (योद्धा) कवि और पास रहनेवाले तो किस प्रकार भूलैं परन्तु वृक्षभी तुझे सर्वदा स्मृतिपथसे पृथक् नहीं करते ॥ १ ॥ हे अन्नदाता ! उदय-पुरसे सर्वथा निवृत्त मत हो और विनोद करनेके लिये हे राजन्! एक वार पीछेही महल पधारो ॥ २ ॥ माला हाथमें रखनेवाले योद्धाओंको भय देनेवाले, स्वर्गवासियोंके वल्लभ, सवमें विराजमान उदार महाराणा ! अव चारणोंको मद्यके प्याले कौन पावेगा ॥ ३ ॥ हे सदाचार और सुशीलके आश्रयदाता! खड्गसे खलोंको नाश करनेवाले और स्थावर जंगम व पशु

पक्षियोंके मनको मोहित करनेवाले, जगत्के मुकुट महाराणा जवानसिंह ! तू कैसे भूला जाय ॥ ४ ॥ दीवाली होली और दसरावेको गैरीजनोंसे लहूर ('लहूर' मारवाडमें एक प्रकारके गीतोंकी संज्ञा है) गवानेवाले हे मणिधारी मेवाडपती तेरी सवारी कब आवेगी ॥ ५ ॥ निकट रहनेवाले अन्तरंग जनोंसे फाग खेलनेवाले और आखेटमें विनोद करनेवाले महाराणा ! तीजोंके तिंवार (उत्सव जो कि श्रावण शुक्ला तृतीयाको होताहै) को एक वार परिकर बनाकर पधारो ॥ ६ ॥ हे महाराणा ! तैंने गयामें अपने हाथसे पिण्डदान करके परलोक सुधार लिया और थोडीही अवस्थामें जमवारा (जन्म) जीत लिया अर्थात् परलोक और यह लोक दोनों सुधार कर तैंने जीवन सफल कर लिया ॥ ७ ॥ असी और वरणा नदीके बीचमें विराजमान वाणारसी पुरीमें प्रातःकाल शिवमन्दिरोंमें भ्रमण करते २ काशीपुरीमें कभी तेरी वह उत्तम छवि भी दृष्टिमें आवेगी ॥ ८ ॥ चारणोंके लिये चिन्तामणिरूपी और पारस तथा कल्पवृक्षरूपी हे चीतोडा ! तेरे महाप्रस्थानमें जाने पर किसीने भी तेरी पीछी खबर नहीं पाई ॥ ९ ॥ हे बाघ ! किस मिससे तुझे भूलें रात दिन तेरी अमाप (अथाह) स्मृति आती है । हे मा बाप ! तेरे महायात्राके पथिक होनेपर पीछे फिरतें हमारा हृदय विदीर्ण होता है ॥ १० ॥

महाराणा श्रीसरदारसिंहजी ।

ये महाराणा बागोरसे आकर वि० सं०१८९५ में गद्दी बैठे इनके समयमें गवर्नमेण्टने मेवाडमें 'भीलकोर' नामक सेना नियत की इनका देहान्त विक्रमी संवत् १८९९ में हुआ था ॥

महाराणा श्रीस्वरूपसिंहजी ।

ये महाराणाभी बागोरसे आकर वि. सं. १८९९ में गादी बैठे । इन्होंने मेवाडके राज्यमें कुछ कानून बनाये जो अबतक काममें लाये जाते हैं । इन्होंने प्रजाका शासन बहुत उत्तम किया था और मेवाड पर जो कर्ज होगया था वह सब उतार कर खजानेमें भी रुपये जमा किये । इनको विक्रमी संवत १९०७ में पक्षाघात होगया था और इनका देहान्त वि. सं. १९१८ में हुआ था ॥

गीत (१९६)

करन जेमदे हेम भूदेव अमरी किया,
चीत रजपूत वद सुठठ चाहे ॥
राण सारूप रहियो जिते राषियो,
मारवो तारवो हात मांहे ॥ १ ॥
भूपती अमर रहियो रचे गीतडां,
हाथियां दियो दत आप हाथे ॥
तणौं सादल कियो राज चत्रगढ जिते,

सीह अजिया पियो नीर साथे ॥ २ ॥
देष फरंगाण हिंदवार थंभ दियो छो,
कियो छो विधाता ऊंच काजां ॥
थेट इनसाफरी वडी सावत थकां,
रंकरी पडी आतंक राजां ॥ ३॥
जोम रह बोल रहिया जुगां जावतां,
सत्रां अणभावतां दीध त्रासा ॥
नागद्रह कायरो वचन कहियो नहीं,
समटियो वायरो जितै सासा ॥ ४ ॥

[दधिवाडिया शाखाके चारण कमनी कृत)

टी०—कर्णकी तरह स्वर्ण देकर जिसने ब्राह्मणोंको तृप्त कर दिये, और चित्तमें क्षत्रियत्वका घमंड सदा बनाये रक्खा वह महाराणा स्वरूपसिंह जबतक जीता रहा तबतक उसने मारना और तारना हाथमें ही रक्खा ॥ १ ॥ उस राजाने कई मकानात बनवाये और अपने हाथसे हाथियोंका दान दिया। इस सरदारसिंहके पुत्रने जबतक चित्तोडके राज्यका शासन किया तबतक सिंह और बकरीको एक घाट पर साथ पानी पिलाया ॥ २ ॥ विधाताने उसको उच्च कार्य करनेको उत्पन्न किया था अतः जबतक उसने न्याय किया तबतक गरीबोंकी आतंक राजाओं पर पडती थी ॥ ३ ॥ हे महाराणा ! जब-तक आप विद्यमान रहे तबतक सदा वीरताके वचन ही बोलते रहे और शत्रुओंको नहीं रुचनेपर भी आपने उनको त्रास ही

दिया, और जबतक श्वास चलता रहा तबतक मुंहसे कायर वचन कभी नहीं कहा ॥ ४ ॥

महाराणा श्रीशंभुसिंहजी ।

ये महाराणा भी बागोरसे आकर विक्रम संवत् १९१८ में गद्दी विराजे । और बहुत उत्तमतासे राज्यशासन किया । इनका देहान्त विक्रम संवत् १९३१ में हुआ ॥

महाराणा श्रीसज्जनसिंहजी ।

ये महाराणा 'सोन्याणा' ग्रामसे आकर विक्रमी संवत् १९३१ में गद्दी विराजे । और विक्रम संवत् १९४१ में परलोक सिधारे ।

गुसांई गणेशपुरीजीके बनाए हुए काव्य ।

कवित्त (१९७-१९८)

देसिक सुदैसिक सुधारै दोऊ लोकनकों,
दोऊ ना सुधारै ताहि दैसिकन मानूं मैं ।
अम्मृत वही है जो कि मृतक जिवावै द्रुत,
मृत ना जिवावै ताहि अमृत न मानूं मैं ॥
रसायन वो ही जो रसायन जराकों हरे,
जरा ना हरे ताहि रसायन न मानूं मैं ।
सज्जनकों सज्जन जो मानै सु ही सज्जन है,
सज्जन न मानै ताहि सज्जन न मानूं मैं ॥ १ ॥

टीका-जो विद्वान् पुरुष दैशिक और सुदैशिक दोनों लोकोंको सुधारै वह ही दैशिक है, और जो दोनोंही लोक

सुधारनेका ध्यान नहीं रखता उसको मैं देशिक नहीं मानता। अमृत उसेही कहना चाहिये जो द्रुत अर्थात् शीघ्रही मृतक (मरा हुवा) को जिलादेवे, और जिसके सम्बन्ध होनेपर मृतक पुनः जीवित नहीं हो उसको मैं अमृत नहीं जानता। मेरे विचारसे रसायन (चमत्कारी औषध) वह ही है जो रसायन अर्थात् रसोंके विकृत होजानेसे उत्पन्न होनेवाली जरा (शिथिलता) को हटावे, किन्तु जो जराको ही नहीं दूर करसकता उसको रसायन कैसे कहा जाय। ऐसे ही जो मनुष्य सज्जनको अर्थात् दयादाक्षिण्यादि उत्तम गुणोंके आश्रय पुरुषको सज्जन (भलाही) मानता है अर्थात् कदाचित् भी श्रेष्ठ पुरुषके सुचरितको कलङ्कित करना नहीं चाहता किन्तु उसे गुणशाली जान कर प्रेमपूर्वक उसकी प्रशंसा करता है वह ही सच्चा सज्जन है, और जो सज्जनको सज्जन नहीं मानता प्रत्युत (बल्के) उसके सद्गुणोंको दम्भ (कपट) मोह (अज्ञान) आदि बताकर दूषित करता है उस को मैं सज्जन (सत्-जन) अर्थात् श्रेष्ठ पुरुष नहीं मानता किन्तु ऐसे कुचाली मनुष्यको मैं अबोध जानताहूं। इसी प्रकार महाराणा सज्जनसिंहकोभी जो सज्जन नहीं मानता उसे भी मैं सज्जन नहीं कहता। अभिप्राय यह है कि महाराणा सज्जनसिंह अपने सद्गुणोंके कारण सच मुच सज्जन ही हैं ॥ १ ॥

(दोहा।)

दसरथ निस चुक्किय दुरद
उत पुनि लिन्निय आह।

सज्जन निस कस लच्छ हनि,
सबतैं लिन्न सराह ॥ २ ॥

[नोट-महाराणा सज्जनसिंहजीने रात्रिको एक छोटा निशाना उडाया, उस समय गुसाईजीने यह दोहा सुनाया था जिसमें दशरथके साथ महाराणाका व्यतिरेक (उत्कर्ष) कहा है]

टी०-राजा दशरथ रात्रिको शब्दवेध करनेके प्रसंगमें दुरद अर्थात् हाथीका निशाना भी चूक गये और उधर सुयोग्य पुत्र श्रवणके अन्धे और अनाथ माता पिताका शाप लिया। परन्तु महाराणा सज्जनसिंहने निशामें छोटे निशानेको मारकर सबसे प्रशंसा पाई अर्थात् महाराणाका लक्ष्यवेधका अभ्यास प्रौढ और प्रशंसनीय है ॥ २ ॥

सवैया (१९९)

रावरो दान मुरार भनै जग,
वन्दित है कवि कीरति गाई।
मैं हूं अजाचक भूप जोधानको,
वीनती माफीकी यातैं कराई ॥
सज्जन मो अपराध न लेखिये,
देखिये रावरे वंस बडाई ॥
धर्म निवाहनको हिंदवानको,
रान रहे तनत्रान सदाई ॥

(कविराजा मुरारिदान "आशिया" महामहोपाध्याय रचित)

[नोट—कविराजा मुरारिदानजी प्रथम वार उदयपुर गये तब महाराणा सज्जनसिंहजीने विदाके समय उनको 'लाखपसाव' देना चाहा उस समय कविराजजीने यह सवैया सुनाकर माफी चाही जिस पर महाराणा साहब उक्त दान देनेसे रुक गये]

टीका—मुरारिदान कहता है कि आपका दान जगत्में वन्दना करने योग्य है जिसकी कि कवियोंने कीर्ति गाई है । परन्तु मैं जोधपुरके राजाओंका अयाचक (जोधपुरके अतिरिक्त दूसरे राजाओंसे दान न लेनेवाला) हूं इस लिये दान लेनेके लिये मुआफीकी विनती कराई है । हे महाराणा सज्जनसिंह ! आप मेरे अपराधकी ओर ध्यान न दें किन्तु आपके वंशके गौरवपर विचार करें । हिन्दुओंके धर्मकी रक्षा करनेके लिये महाराणा सदाही तनुत्रान (कवच) रहे हैं अर्थात् अपने शरीरपर आघात सहकर आर्योंके धर्मको रक्खा है ॥

कवित्त-मरसिया (२००)

गुनी गन गुनि गुन गोर गहि बांधे ग्रन्थि,
विरुद विचार वीर औगुन विसरगो ।
विज्ञनतें प्रीति कर विज्ञनकी वृत्ति वर,
विज्ञनको दुःख हर भूरि सुख भरगो ॥
धवल धुरीन धीर धीर धुर धार धार,
स्कंधावार भार फतमाल कंध धरगो ।
गुजर करौं हौं योंही लौं ऊमर गुजर जैहै,
उजर हो जौप वह गाहक गुजरगो ॥ ३ ॥

[गुसाईं गणेशपुरीजीकृत]

टीका–जो वीर विद्वज्जनोंके गुणोंको भले प्रकार जांच कर गुणोंकी गांठ बांध लेता, और विरुद् अर्थात् प्रशंसा विचार कर अपगुणोंको भूल जाता था (भाव यह है कि जो सर्वदा गुणग्राही था और दोष पर ध्यान नहीं देता था) जो महाराणा विद्वानोंकी श्रेष्ठ वृत्तिमें अर्थात् सर्वदा सदाचरण तत्पर रहता था, अत एव विद्वानोंसे प्रीति करता था, क्यों कि 'समान शीलव्यसनेषु सख्यम्' अर्थात् बराबरवालोंमें परस्पर प्रीति होती है । हा! चतुर पुरुषोंके दुःखोंको हरण कर उन्हें यथेष्ट सुख देनेवाला गया । हा! धीर पुरुषोंकी उज्ज्वल धुरको धारण करनेवाला धरा (पृथ्वी) का धुरंधर अर्थात् धीर और वीर महाराणा राज्यशासनके भारको फतसिंहके कंधेपर धर कर स्वयं स्वर्गको सिधारा । हा!!! मैं योंही (अनास्थासे) गुजर करताहूं जबतक कि उमर गुजर जाय क्योंकि जिस पर सर्व प्रकारसे उम्र था वह गुणग्राहक आज भूमण्डल पर नहीं है ॥ १ ॥

बारहठ कृष्णसिंह सोदारचित–

कवित्त मनहर (२०१–२०२ तक)

सज्जन सिधायो स्वर्ग मेदपाट मौली मनि,
छायो अन्धकार छिति कवि कविताईको ।
कहै कवि कृष्ण मेरो जीवन आधार हुँतो,
पुण्य पारावार हुँतो भारत भलाईको ॥
कालके कुबात पारिजातको अपक्व फल,
गिरिगो सो जान्यौ हेतु क्षत्रिलघुताईको ॥

कारिगो असार जग भरिगो सुयश भूरि,

परिगो शिखर हाहा नीति निपुनाईको॥ १ ॥

टीका-मेवाडका मौलिमणि महाराणा सज्जनसिंह स्वर्गको सिधार गया । आज कवि और कविताईका अन्धकार छागया कवि कृष्णसिंह कहता है कि महाराणा मेरे जीवनका आधार था अर्थात् सर्वतो भावसे पालन करनेवाला स्वामी था । हा ! और भारतवर्ष (हिन्दोस्तान) की भलाईका पवित्र समुद्र था हा ! कालरूपी पवनके प्रचण्ड वेगमें आकर कल्पवृक्षका फल अपकही गिर गया सो क्षत्रियोंकी लघुताका कारण जाना जाता है । हा ! महाराणा जगतको असार करगया । अपने व्यापक सुयशसे संसारको पूर्ण कर गया । हा ! हा ! आज राजनीतिका निपुणताका शिखर टूट पडा ॥

करोलीके हेत लरचौ रक्षक हरोली वनि,

राजनको मौलिमनि उत्तम उजारो हो ॥

जामके कुजाम जामनेरतैं निकारि तहां,

शुद्ध क्षत्रि थापनके जापन करारो हो ॥

सवहीकी ढाल शत्रुसाल ह्वै सदैव रह्यो,

ब्रिटिस अनन्य प्रीति प्रतिपारो हो ॥

सोची नाहिं हाहा विधि सज्जन बुलातें स्वर्ग,

अज्जनकी अज्जताको कौन रखवारो हो ॥ २ ॥

टीका-हा ! जो महाराणा करोलीके लिये हरोली वनकर रक्षक हुआ । और जो राजाओंका मौलिमणि व उत्तम प्रकाश

करनेवाला था। जिस महाराणाने जामनगरमें यवन राजा होनेके अवसरपर गवर्नमेंटसे वहां क्षत्रिय राजा होनेका अनुरोध किया। और स्वजातिके साथ सहानुभूति प्रकट की और जो सदा ढालरूप होकर सबकी रक्षामें जागरूक था और शत्रुओंके हृदयमें सालता था। उस गुणशाली महाराणा सज्जनसिंहको स्वर्ग बुलाते समय हे विधातः! तैंने इतना भी विचार नहीं किया कि अब आर्योंके आर्यधर्मका रक्षक कौन है ॥२॥

महाराजाधिराज हिन्दूपति 'रविकुलकमलदिवाकर' वर्तमान
महाराणा श्री १०८

श्रीफतह सिंहजी बहादुर

जी० सी० एस० आई०।

वर्तमान महाराणा साहब विक्रम सं० १९४१ में मेवाडके राज्य सिंहासनपर विराजे। ये महाराणा साहब जैसा राज्य शासन कर रहे हैं सो सबपर विदित है।

सवैया (२०३)

छोरि किते पतनी अपनी, मन-
रामजनी सुखके अभिलाखे।
मत्त किते मदिरा मद ह्वै,
बस नींद कितेक लखे रित भाखे॥
धर्मरता जगके करता,
रसना निज भूपनके गुण भाखे।

सत्य दया समता रु सुशील,

फता नृप ये चहुं आपही राखे ॥ १ ॥

[फतहकरण 'उज्ज्वल' कृत]

टी०—कितने ही राजा लोग अपनी धर्मपत्नियोंको छोडकर वेश्याओंके मुखकी शोभापर लुभा गये। कितने ही राजा मदिराके मदसे मत्त हुए रहते हैं। और कितनेही निद्राके वश होकर समय विताते हैं यह बात मैं सत्य कहताहूं। हे स्वधर्म परायण महाराणा फतहसिंह ! जगत्के कर्त्ताने निज रसनासे अर्थात् वेदरूपी वाणीसे राजाओंके जो गुण आज्ञा किये उनमें विशेषकर सत्य, दया, समता (सब पर एकसा भाव रखना) और सुशील इन चारों गुणोंको आपहीने आश्रय दिया है॥१॥

दोहा (२०४)

घणी रीझ थोडो घमँड, चित सुध सरली चाल ।

दीन सहायक काछ दृढ,महाराण फतमाल ॥ २ ॥

[फतहकरण 'उज्ज्वल' कृत]

टीका—महाराणा फतहसिंहकी रीझ बहुत है। घमंड थोडा है। चित्त शुद्ध है। और व्यवहार सरल है। ये महाराणा दीन दुखियाओंकी सहायता करते हैं। और काछके दृढ अर्थात् जितेन्द्रिय हैं ॥ २ ॥

कवित्त (२०५)

जाहरी करोल करैं अङ्क हत्थे बब्बरकी,

ठाहरी सुनेतैं रान थिरता रचै नहीं ।

थाहरी घिराय काड लागनी लगावैं तोक,
खा हरी गुरांट पैंड एकहू खचै नहीं ॥
हाहरी अवाज छोड आहरी करन लागै,
ताहरी करै तो कोउ उपमा जचै नहीं ॥
बाहरी गऊके फतहसिंह तूप धारैं जब,
ना हरी करै तो नार नाहरी बचै नहीं ॥ १ ॥

[मोडसिंह 'मैयारिया' कृत]

[नोट—इस कवित्तमें वर्तमान महाराणा साहबका सिंहकी शिकार करनेका वर्णन है]

टीका—जब करोल (शिकारी) नोहत्ये बवरी नाहरकी खबर देते हैं, तो महाराणा सिंहका पता पाते ही थोडा भी विलंब नहीं करते और थाहरी विराकर लागनी अर्थात् निशाना नहीं चूकनेवाली तोक लगाते हैं जिससे सिंह तत्काल गुरांट खाकर पडजाता है। एक पैंड भी नहीं उठा सकता। वह हाहकी आवाज अर्थात् दकाल करना छोड़कर विह्वल हो आह भरने लगता है। इस कर्तव्यकी कोई उपमा नहीं प्रतीत होती। गौके बाहरी अर्थात् गोरक्षाके लिये सन्नद्ध महाराणा फतहसिंह तूप धारैं उस समय जो हरी अर्थात् विष्णु भगवान् भी ना करैं तो नाहर नहीं बच सकता॥

कवित्त मनोहर (२०६)

मात पितु गाव करि चारन विचारते न,
जानि पूजनीक हित क्षत्रीहू धरत को।

छूटि जातो नातो वो सनातनको सैजहीमें,
लोक लाज लीह लोप डरतैं डरत को ॥
सूकि जातो सिन्धु यह पात पाठशालारूपी,
काव्य खट अंग गंग धारतैं भरत को ।
धरतो न पाट फतमाल मेदपाटको तो,
सज्जनकी मनसाकों पूरन करत को ॥

[बारहठ कृष्णसिंह 'सोदा' कृत]

[नोट–यह कवित्त चारण पाठशालाको दूसरी वार खोलते समय वारहठ कृष्णसिंहजीने महाराणा साहवको सुनाया था]

टीका–चारण लोग क्षत्रियोंको माता पिताके भावसे नहीं विचारते और कौन क्षत्रिय इनको पूजनीय जानकर हित करता । वह सनातनका सवन्ध सहजही छूटजाता । और लोकमें लज्जा (मर्यादा) का लोप करनेसे कौन डरता । अर्थात् सवही लाजका लोप कर डालते । यह चारण पाठशाला रूपी सिन्धु भी सूख जाता और काव्य और छे शास्त्र और व्याकरणादि छहों अंगोंको गङ्गाकी धारासे कौन भरता । अहो विद्यानुरागी वीर महाराणा फतहसिंह मेवाडके पाटपर नहीं विराजते तो महाराणा सज्जनसिंहजीकी मनसाको कौन पूर्ण करता अर्थात् वर्तमान महाराणा साहवने "चारणपाठशाला" को फिरसे खोलकर भूतपूर्व महाराणाके मनोरथको पूर्ण किया है ॥

कवित्त (२०७)

वीर दृढ विग्रह वदान्य राजनीति विज्ञ,
वंस अनुगामी सत्यसंध सुद्ध मचाको ।

'अब्जकुल कमल दिनेश' पद यथायोग्य,
वेद धर्म रच्छक निवाहनीक नत्ताको ॥
नित्य जस निगदि अनित्य गनै पुद्गलकों,
सस्त्रविद्या सफल सराहनीय सत्ताको ।
मेदपाट भूपन प्रमान्यौ गुनरत्ता पेखि,
जान्यौ हम फत्ता है नमूना रान पत्ताको ॥ १ ॥

[बारहठ बालाबक्स 'पालावत' कृत]

टीका—महाराणा फतहसिंह वीर और दृढ विग्रह (युद्धमें) स्थिर अथवा विग्रह अर्थात् शरीरसे दृढ—बलशाली हैं । वदान्य अर्थात् उदार हैं और राजनीतिमें निपुण हैं । अपनी वंशपरिपाटी पर चलते हैं । प्रतिज्ञाको निवाहते हैं और इनका अन्तःकरण निर्मल है । वेदके धर्मकी रक्षा करनेको सन्नद्ध (कटिबद्ध) है । और नत्ता अर्थात् संबन्धको निभाने वाले हैं । इन महाराणामें "आर्यकुलकमल दिवाकर" यह विशेषण यथार्थ फवता है । ये महाराणा जसको नित्य (अविनाशी) मानते हैं और पुद्गल अर्थात् शरीरको अनित्य (नाशवान्) जानते हैं । शस्त्रविद्यामें इनकी सत्ता (अभ्यास) सफल है अत एव प्रशंसनीय है । सो मेवाडके भूषणके असाधारण गुण देखकर हम ऐसे अनुमान करते हैं कि महाराणा फतहसिंह महाराणा श्रीप्रतापसिंहका नमूना है अर्थात् उन्हींके सदृश विरुदावली योग्य हैं ॥

दोहा (२०८)

धर्म मतानैं चित धरयौ, गिण प्रभुतानै संग ।
अवल पतानै ज्यौं अबै, राण फतानै रंग ॥ २ ॥

[बारहठ बालबक्स 'पालावत' कृत]

टी०—मेवाडकी प्रभुता पाकर महाराणाने धर्मकी मतेको (सनातन धर्मके सिद्धान्तको) अंतःकरणसे स्वीकार कियाहै अर्थात् धर्मको अव्याहत रखकर उत्तम प्रणालीसे राज्यशासन कररहे हैं इसलिये पहले जिस प्रकार महाराणा प्रतापसिंहको रंग था वैसे ही अब महाराणा फतहसिंहको रंग है ॥

सवैया (२०९)

सस्त्र समस्तमें वाही सजावट,
मैनत है मजबूत मताको ।
टेढी जगां चढिबेमें टटोर लो,
थाकै नहीं फिरता फिरताको ॥
सिकारके नाम पहाड मझार,
निहारे सुठोर सो नेह नताको ।
जथारथ जान जपै जुगता यह,
रान फता अवतार पताको ॥

[चारण युक्तिदान 'देथा' कृत]

टी०—शस्त्र धारण करनेका वह ही प्रकार है अतुल परिश्रमी है और अपने प्रशंसनीय सिद्धान्तपर दृढ है । और टेढी जगह

अर्थात् पर्वतोंके विषम स्थानोंमें भ्रमण करनेकी ओर देखो तो फिरते २ कभी थकते ही नहीं । सिकारका नाम सुनते ही पहाडमें जापहुंचते हैं । उत्तम पुरुषोंसे स्नेह करते हैं और प्रीतिका सम्बन्ध यथावत् निभाते हैं । इस कारण सारा जगत् यथार्थ जानकर कहता है कि महाराणा फतहसिंह महाराणा श्रीप्रतापसिंहका अवतार है क्योंकि उन सरीखे असाधारण गुणोंका इनमें पूर्णतया अनुभव होता है ॥

दोहा (२१०)

लखन कुंभ सांगे पते, जवन जोर दिय तोड ।
तिहँ रविकुल चिर थिर फता, सब हिन्दु न नृपमोड ॥
[रामनाथ ' रतनू' कृत]

टीका—महाराणा गढलक्ष्मणसिंह, महाराणा कुंभा, महाराणा संग्रामसिंह और महाराणा प्रतापसिंहने यवनोंका मान मर्दन कर उनके प्रभुत्वको तोड जिस वंशका गौरव वढाया । उस पूजनीय सूर्यवंशमें हे सब हिन्दुओंके राजशिरोमणि महाराणा फतहसिंह ! चिरकालतक मेवाडका शासन करते रहो ॥

दोहा (२११)

बुद्धि समप्पण गजवदन, गुणद विथारण गाथ ।
सिद्धि करण असरणसरण, नमो नमो गणनाथ ॥
[वारहठजी वालवक्सजी ' पालावत ' कृत]

दोहा (२१२)

अलिक इन्दु कुञ्जर तुचा, मुण्डमाल वपु छार ।
अहि भूषण विजियासखी' जय जय जयत्रिपुरार ॥
[गोपालदानजी ' कविया' कृत]

इति शुभम् ।

मेवाडके प्रसिद्ध १६ उमरावोंकी गणना।

त्रिहुं झाला त्रिहुं पूरव्या, चौंडावत भड च्यार ।
दुय सगता दुय राठवड, सारंगदेव पँवार ॥
सरणायत्तां "सादडी," "गोगूंदो" घर गल्ल ।
दुरग "देलवाडो" दुरस, झाला खत्रवट झल्ल॥ २॥
'कोठारयो' अर 'वेदलो, 'पालसोलि' भुजपाण ।
मांझी घर मेवाडमें, चितबंका चहुवाण ॥ ३ ॥
दिपै 'सलूंबर' 'देवगढ' 'बेधूं' थान विचार ।
अधपतियां ' आमेट ' ऐ, चौंडासरणा च्यार ॥४॥
इक ' भींडर' दुय 'बांनसी,' महिविच सगतांमोड ।
'घांणेरो' 'बंदनोर' घर, राणधरा राठौड ॥५॥
'कानोडह' आपण करां ,सरणों सारंगद्योत ।
ज्यों पँवार 'बीझोलियां,' बेहूं सरणा जोत ॥ ६ ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
" लक्ष्मीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेस,
कल्याण-मुंबई.

खेमराज श्रीकृष्णदास,
" श्रीवेङ्कटेश्वर " स्टीम् प्रेस
खेतवाडी-मुंबई.

कुछ सूचनाएँ।

(१) बहुत जगहँ 'ड़' के स्थानमें ड और 'तरह' का तरहं रहगया है तथा 'ल' का ल वा 'ल' ल भी होगया है सो विद्वज्जन सुधार लेवें।

(२) पृष्ठ ५२ में जो सादड़ीवालोंके विषयमें उल्लेख किया गयाहै उसके लिये ऐसा भी निश्चय हुआ है कि वह वृत्तान्त महाराणा श्रीप्रतापसिंहजीके साथ जो हल्दीघाट पर युद्ध हुआ उस समय झाला मानसिंहजीने जो अप्रतिम स्वामिभक्तिका परिचय दिया उस समयका है।

(३) पृष्ठ ७१ में जो नोट है उसकेलिये यह भी सुना॰ गया है कि उल्लिखित गीत बारहट जमणाजीने उदयपुर पधारनेपर महाराणा साहबको सुनाया था।

(४) पृष्ठ ७७ में महाराणा श्रीप्रतापसिंहजीके लिये जो 'जिन्होंने अपने धर्मकी रक्षाके अर्थ राज्य भी खोदिया' यह वाक्य लिखा है इसके अभिप्राय यह है कि, महाराणा साहबने राज्यसुखको तुच्छ समझा और उसके आधीन नहीं हुए।

(५) पृष्ठ ८४ में जो 'मह लागो पाप' इत्यादि गीत हैं उसके लिये जनश्रुति एसी है कि वह गीत सुप्रसिद्ध विद्वान् और ईश्वरभक्त बारहट ईसरदासजीने महाराणा साहबको सुनाया था।

(६) पृष्ठ १५६ में महाराणा जगतसिंहजीके दानवर्णनका जो एक श्लोक होना नोटमें लिखा गयाहै उसका बहुत अन्वेषण किया गया परन्तु वह अबतक उपलब्ध नहीं हो सका।